॥ नमामि गुरु तारणम् ॥

तारण समाज की निधि

मंदिर विधि

संपादन एवं अर्थ लेखन

ब्र.बसन्त

प्रकाशक

अखिल भारतीय तारण तरण जैन समाज

प्राप्ति स्थल

श्री तारण तरण अध्यात्म प्रचार योजन केंद्र , भोपाल

मूल्य ५०/-

॥ वन्दे श्री गुरु तारणम् ॥

विषयानुक्रम...

क्र.	विषय	पृष्ठ क्रमांक
०१.	तारण समाज की निधि – मंदिर विधि	००३ – ००७
०२.	श्री मालारोहण जी **(प्रथम सोपान – क्र. २–२६ तक)**	००८ – ००९
०३.	श्री पंडित पूजा जी	०१० – ०११
०४.	श्री कमल बत्तीसी जी	०१२ – ०१३
०५.	श्री देव दीप्ति फूलना	०१४ – ०१५
०६.	श्री गुरु दीप्ति गाथा	०१५ – ०१६
०७.	श्री धर्म दीप्ति गाथा	०१६ – ०१७
०८.	कलशों की गाथा	०१७ – ०१८
०९.	स्वामी तारण देवा फूलना	०१८ – ०१९
१०.	दोहा बसन्त गाथा	०१९ – ०२१
११.	फाग फूलना	००० – ०२१
१२.	ठहकार फूलना	०२१ – ०२२
१३.	सेहरौ फूलना	०२२ – ०२४
१४.	कल्याणक फूलना	०२४ – ०२६
१५.	मुक्ति श्री फूलना	०२६ – ०२७
१६.	सन्यानी मुक्ति पऊ फूलना	०२७ – ०२८
१७.	जयना ले गाथा	००० – ०२८
१८.	सुन्न उवन फूलना	००० – ०२८
१९.	ग्यारह नमस्कार	०२९ – ०३०
२०.	इष्ट वंदना	००० – ०३०
२१.	देव गुरु शास्त्र पूजा	०३० – ०३८
२२.	श्री महावीराष्टक	०३९ – ०४०
२३.	श्री गुरु तारण स्तोत्र	००० – ०४०
२५.	दसलक्षण धर्म आराधन	०४१ – ०४३
२६.	सोलह कारण भावना एवं आसादन दोष	०४४ – ०४७
२७.	जिज्ञासा समाधान (मंदिर विधि) **(द्वितीय सोपान क्र. २७–३५)**	०४८ – ०५२
२८.	श्री लघु मंदिर विधि (विनती फूलना सहित)	०५३ – ०६६
२९.	बृहद् मंदिर विधि प्रारंभ कैसे करें एवं मंदिर विधि का क्रम	०६७ – ०६८
३०.	धर्माचरण फूलना अर्थ सहित, दशलक्षण धर्म स्वरूप एवं धर्मोपदेश	०६९ – १०६
३१.	लक्षण भेद संग्रह, भेद – प्रभेद	१०७ – ११०
३२.	आरती, जिनवाणी स्तुति एवं प्रभाती संग्रह	१११ – ११८
३३.	भजन पुराने एवं नये	११९ – १३०
३४.	चैत्यालय हम और हमारे कर्तव्य (प्रश्नोत्तर माला)	१३१ – १४४
३५.	तारण झण्डा वंदन, आध्यात्मिक जयघोष एवं जाप आवर्त	१४५ – १४७

॥ वन्दे श्री गुरु तारणम् ॥

तारण समाज की निधि – मंदिर विधि

आचार्य प्रवर श्रीमद् जिन तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज आत्मज्ञानी वीतरागी अध्यात्म योगी स्वानुभूति संपन्न शुद्ध चैतन्य प्रकाश से आलोकित, छटवें – सातवें गुणस्थान में सानन्द वीतराग निर्विकल्प समाधि में रत रहते हुए आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द अमृत रस का पान करने वाले, मोक्षमार्ग में निरतंर अग्रणी आध्यात्मिक संत थे। उन्होंने स्वयं का जीवन अध्यात्म ज्ञान ध्यान साधनामय बनाया और सभी भव्यात्माओं के लिये आत्मस्वभाव के अनुभव पूर्वक ज्ञानमार्ग में चलकर स्वभाव साधनामय जीवन बनाने की प्रेरणा प्रदान की।

साधना पूर्वक लक्ष्य की सिद्धि होती है। साधक दशा में सम्यक्दृष्टि ज्ञानी अपने स्वभाव के आश्रय से निरंतर कल्याण मार्ग में अग्रसर रहता है। वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र की श्रेणियों पर आरूढ़ होकर साधना से सिद्धि को प्राप्त करता है।

अध्यात्म साधना के मार्ग में बाह्य क्रिया मुख्य नहीं होती तथा सच्चे देव, गुरू, धर्म और पूजा के नाम पर बाह्य आडम्बर की प्राथमिकता नहीं होती। आध्यात्मिक मार्ग में सच्चे देव, गुरु के गुणों का आराधन किया जाता है। शास्त्रों का स्वाध्याय और धर्म की साधना की जाती है। पूज्य के समान स्वयं का आचरण बनाने की साधना ही परमात्मा की सच्ची पूजा विधि है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये तारण समाज में विगत ५४० वर्षों से मंदिर विधि करने की परम्परा चली आ रही है, जो वर्तमान में भी अनवरत रूप से चल रही है।

मंदिर विधि क्या है ?

मन में होने वाली वैभाविक पर्यायों के पार अपना परमात्म सत्ता स्वरूप शुद्धात्म देव ज्ञानादि अनंत गुणों का निधान, चित्स्वभाव में प्रकाशमान हो रहा है। ऐसे महिमामयी निज स्वरूप को जानने पहिचानने की विधि मंदिरविधि है। मंदिर विधि के द्वारा सच्चे देव, गुरु, धर्म के गुणानुवाद शब्दों से करना द्रव्य पूजा है। अपने स्वरूप का आराधन करना, परमात्म स्वरूपमय होना भाव पूजा है।

मंदिर विधि वस्तु स्वरूप का यथार्थ बोध कराने की विधि है। यह सत् – असत् का विवेक जाग्रत कराने वाली ऐसी विधि है जिसमें सच्चे देव गुरू धर्म की विनय वंदना भक्ति सहित सच्चे – झूठे, हेय – उपादेय का निर्णय करके सत्य को स्वीकार करने की प्रेरणा दी गई है। मंदिर विधि तारण समाज का प्राण है। आध्यात्मिक और धार्मिक जागरण में मंदिर विधि प्रमुख माध्यम है वहीं दूसरी ओर सामाजिक संगठन, धर्म प्रभावना में मंदिर विधि का अपना विशेष महत्व है।

मंदिर विधि शास्त्र सूत्र सिद्धांत की ऐसी आधार शिला है जो अन्यत्र दुर्लभ है। त्रिकाल की चौबीसी के आन्तरिक संबंध सहित देव गुरू धर्म शास्त्र की महिमा को बताने वाली है। जिनागम के सार स्वरूप सिद्धांत को अपने में समाहित किये हुए मंदिर विधि ज्ञान का असीम भंडार है। मंदिर विधि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की महिमा को प्रगट करने वाली है। समवशरण की महिमा, तारण पंथ का यथार्थ स्वरूप और अपने आत्म कल्याण का पथबोध कराने वाली मंदिर विधि जीव को संसार से दृष्टि हटाकर वैराग्य भावपूर्वक धर्म मार्ग में दृढ़ करके स्वरूपस्थ होकर आत्मा से परमात्मा होने का मार्ग प्रशस्त करने वाली है।

मंदिर विधि क्यों करना चाहिये ?

संसारी कर्म संयोगी जीवन में यह जीव मन, वचन, काय, समरम्भ, समारम्भ, आरंभ, कृत, कारित,

अनुमोदना, क्रोध, मान, माया, लोभ (इन सबका आपस में गुणा करने पर) १०८ प्रकार से निरन्तर कर्मों का आस्रव बंध करता रहता है। बोलते – विचारते, उठते – बैठते, आते – जाते, खाते – पीते, सोते – जागते में, व्यापार कामधंधा करने में सतत् कर्मास्रव होता है। चौबीस घंटे की दिनचर्या में जीव पाप कर्म का बहुभाग उपार्जित करता है। इस सबसे परे होकर अपने इष्ट का आराधन थोड़ी भी देर के लिये करता है तो हित का मार्ग बनता है। इस अभिप्राय को मंदिर विधि में भी स्पष्ट किया है '' इष्ट ही दर्शन, इष्ट ही ज्ञान ऐसा जानकर हे भाई ! आठ पहर की साठ घड़ी में एक घड़ी, दो घड़ी स्थिर चित्त होय, देव गुरू धर्म को स्मरण करे तो इस आत्मा को धर्म लाभ होय, कर्मन की क्षय होय और धर्म आराध्य – आराध्य जीव परम्परा से निर्वाण पद को प्राप्त होय है।''

इस प्रकार मंदिर विधि करने से पाप कर्म की अनुभाग शक्ति अर्थात् फलदान शक्ति मंद पड़ती है। पुण्य कर्म की अनुभाग अर्थात् फलदान शक्ति में वृद्धि होती है। जब शुभ भावपूर्वक सच्चे देव गुरू धर्म का आराधन, गुणानुवाद किया जाता है तो लेश्या विशुद्धि भी होती है अर्थात् अशुभ लेश्या के परिणाम बदलते हैं और शुभ लेश्या होती है। जो वर्तमान जीवन में सुखशांति से रहने में कारण बनती है और इससे धर्म की प्राप्ति की भूमिका तैयार होती है।

मंदिर विधि का श्रावकचर्या से क्या संबंध है ?

आचार्य श्री जिन तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज ने श्री तारण तरण श्रावकाचार जी ग्रंथ में षट् आवश्यक का वर्णन दो रूप में किया है। अशुद्ध षट् आवश्यक गाथा ३१० से ३१९ तक तथा श्रावक के शुद्ध षट् आवश्यक गाथा ३२० से ३७७ तक वर्णन किये गये हैं। देव आराधना, गुरू उपासना,शास्त्र स्वाध्याय,संयम, तप और दान यह श्रावक के षट् आवश्यक होते हैं। यह श्रावक के जीवन की प्रतिदिन की चर्या है। प्रतिदिन षट् आवश्यक के पालन करने से ही श्रावक धर्म की महिमा होती है।

मंदिर विधि करने से श्रावक के यह षट् आवश्यक कर्म पूर्ण होते हैं। सो किस प्रकार ? तत्त्व मंगल में देव गुरू (धर्म) की आराधना है। चौबीसी, विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर, विनय बैठक में और नाम लेत पातक कटें स्तवन में देव गुरू की महिमा है। इस प्रकार विभिन्न स्थलों पर हम देव आराधना, गुरू उपासना करते हैं। धर्मोपदेश तथा शास्त्र सूत्र सिद्धांत की व्याख्या में शास्त्र स्वाध्याय पूर्ण होता है। मंदिर विधि करते समय मन और इन्द्रियाँ वश में रहने से संयम, इच्छाओं का निरोध होने से तप और प्रभावना स्वरूप प्रसाद तथा चार दान के अंतर्गत व्रत भंडार देने से दान संपन्न होता है। इस प्रकार मंदिर विधि करने से श्रावक चर्या संबंधी षट् आवश्यक कर्म पूर्ण होते हैं।

मंदिर विधि से विशेष उपलब्धि क्या होती है ?

मंदिर विधि के द्वारा हमें देव – अदेव, गुरू – कुगुरू, धर्म – अधर्म, शास्त्र – कुशास्त्र, सूत्र – असूत्र आदि सत् – असत् के बोध के साथ ही सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र की महिमा और रत्नत्रय को अपने जीवन में धारण करने का मार्गदर्शन प्राप्त होता है। श्री गुरू महाराज के नौ सूत्र सुधरे थे उनका महत्त्व जानने में आता है तथा अपने सूत्रों को सुधारने की भी प्रेरणा प्राप्त होती है। इसके साथ ही सिद्धांत का सार समझकर स्वयं के जीवन में मुक्ति मार्ग बनाने का पथ प्रशस्त होता है यही मंदिर विधि से विशेष उपलब्धि होती है।

मंदिर विधि कैसे करें ?

मंदिर विधि अत्यंत विनय और श्रद्धा भक्ति पूर्वक करना चाहिये। उपयोग की स्थिरता और चित्त की एकाग्रता पूर्वक उमंग उत्साह के साथ मंदिर विधि करने का आनंद अद्भुत ही है। कषाय की मन्दता रूप

शुभ भावों सहित मंदिर विधि करने से विशेष पुण्य का उपार्जन और आत्म कल्याण का मार्ग बनाने हेतु शुभ अवसर प्राप्त होते हैं।

बृहद् मंदिर विधि – धर्मोपदेश प्रारंभ कैसे करें ? इस शीर्षक वाले विभाग में संपूर्ण विधि का स्पष्ट उल्लेख किया गया है तथा साधारण (लघु) मंदिर विधि के साथ ही प्रारंभ करने की विधि लिखी गई है, यथास्थान से विधि प्रारंभ करने का स्वरूप समझकर तदनुरूप मंदिर विधि करें।

मंदिर विधि कब कहाँ कैसी ?

तारण समाज में बृहद् मंदिर विधि–धर्मोपदेश और साधारण (लघु) मंदिर विधि करने की परम्परा प्रचलित है। बृहद् मंदिर विधि जिनागम के सार स्वरूप अगाध ज्ञान को अंतर्निहित किये हुए धर्मोपदेश है।

तारण समाज के तीर्थक्षेत्रों पर, वार्षिक मेला के अवसरों पर, विशाल मेला महोत्सव के विराट आयोजनों में, नवीन चैत्यालयों की वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव के पावन प्रसंगों पर, पर्यूषण पर्व के अवसर पर या अन्य किन्हीं विशेष अवसरों पर बृहद् मंदिर विधि की जाती है। प्रत्येक माह की अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व, सुख – दुःख और प्रसन्नता के अवसरों पर तथा प्रतिदिन भी साधारण (लघु) मंदिर विधि करने की परम्परा है।

जिन – जिन स्थानों पर समाज बन्धु निवास करते हैं, ऊपर लिखे अनुसार यथायोग्य अवसरों पर बृहद् मंदिर विधि–धर्मोपदेश और साधारण (लघु) मंदिर विधि अवश्य करें। मंदिर विधि करते समय विद्वान पंडित वर्ग को धोती, कुर्ता, टोपी, दुपट्टा अवश्य ही धारण करना चाहिये और विनय भक्ति उमंग उत्साह पूर्वक मंदिर विधि संपन्न हो इस प्रकार मंदिर विधि का वांचन भाव पूर्वक करना चाहिये।

मंदिर विधि को रोचक तरीके से वांचन कर सभी को प्रेरणा प्रदान करना चाहिए बीच–बीच में मंदिर विधि के अंशों को समझाते हुए वांचन करना चाहिए। जिससे सभी का उपयोग मंदिर विधि में एकाग्र हो तथा अपना ऐसा प्रयास होना चाहिये कि आबालवृद्ध सभी को मंदिर विधि में बैठने और सुनने की आंतरिक जिज्ञासा, भावना बनी रहे। पद्यात्मक विषय छंद, चौपाई, दोहा, श्लोक आदि सस्वर सबके साथ मिलकर पढ़ना चाहिये।

मंदिर विधि के संशोधन संपादन की आवश्यकता क्यों ?

सम्पूर्ण भारत वर्ष में लगभग ४५० से अधिक ग्राम, नगरों, शहरों में तारण समाज निवास करती है। अपने इष्ट के आराधन हेतु अखिल भारतीय तारण समाज के सभी स्थानों पर मंदिर विधि की जाती है। विशेष यह कि मंदिर विधि तो एक ही है, उसके कुछ अंश कुछ स्थानों पर आगे–पीछे पढ़े जाते हैं। कुछ स्थानों पर स्थानीय पूर्वज विद्वानों द्वारा बताई गई मंदिर विधि चल रही है, कुछ स्थानों पर स्थानीय किसी एक निश्चित हस्तलिखित प्रति के आधार पर मंदिर विधि की जा रही है। कुछ स्थानों पर साधर्मीजन जो करते हैं, उसके साथ किसी अन्य स्थान की परम्परा जो उन्हें अच्छी लगी या देखी उसको भी जोड़ लेते हैं। कुछ स्थानों पर स्थानीय मंदिर विधि करने वाले महानुभाव विद्वान द्वारा श्रद्धा पूर्वक जैसी मंदिर विधि कर दी जाती है, वही आनंद दायक हो जाती है। इस प्रकार मंदिर विधि तो एक ही है पर कहीं किसी क्रम से, कहीं किसी क्रम से की जाती है, इस प्रकार मंदिर विधि में विविधतायें चल रहीं हैं। जब हमारी मंदिर विधि एक ही है तो सभी स्थानों पर एक जैसी होना चाहिये। समाज के त्यागीवृंद, विद्वत्जन और प्रबुद्ध वर्ग को यह अत्यन्त आवश्यक प्रतीत हुआ इन्हीं भावनाओं के परिणाम स्वरूप अखिल भारतीय तारण समाज में मंदिर विधि की एकरूपता के बारे में वर्षों से चर्चायें चल रही हैं। फलत: सन् २००१ में इटारसी में आयोजित ज्ञान ध्यान आराधना शिविर के अवसर पर अध्यात्म शिरोमणी पूज्य श्री ज्ञानानंद जी महाराज के आशीर्वाद से मंदिर विधि की एकरूपता के बारे में निर्णय लिया गया। सन् २००१ से सन् २००५ तक के समय में अखिल भारतीय तारण समाज के सभी नगरों, ग्रामों में

भ्रमण करके मैंने स्थानीय स्तर पर की जाने वाली मंदिर विधि का प्रायोगिक रूप से अध्ययन कर यह अनुभव किया कि मंदिर विधि में चल रही विविधताओं का होना सहज है क्योंकि विगत कई दशकों से किसी ने इस विषय पर पुनरावलोकन कर समाज को दिशा प्रदान नहीं की जिसके परिणाम स्वरूप जहाँ जैसा चल गया सो चल रहा है, इसमें कुछ स्थानों पर समयाभाव के कारण, कहीं आम्नाय की पूर्ण जानकारी के अभाव में, कहीं किसी अन्य कारण से भी अक्रम और अशुद्धि पूर्ण वांचन किया जाता है।

इन सभी बातों पर विचार करके सकल तारण समाज में मंदिर विधि की एकरूपता बनाने के लिए और अशुद्ध वांचन को शुद्ध करने के उद्देश्य से मंदिर विधि का सम्पादन किया गया है।

संपादन किस आधार पर किस प्रकार किया गया ?

सम्पादन के समय हमारे पास मंदिर विधि धर्मोपदेश नित्य नियम पूजा पाठ आदि की कुल ४५ प्रतियाँ उपलब्ध थीं, जिनमें १० हस्तलिखित प्राचीन पांडुलिपियाँ सम्मिलित हैं। हस्तलिखित प्रतियों में खुरई से प्राप्त वि.सं.१९२८, १९७७ की दो प्रतियाँ। ग्यारसपुर से प्राप्त वि.सं.१९६२ की प्रति, गंजबासौदा से प्राप्त वि.सं.१९६९ की एक प्रति। बीना से प्राप्त वि.सं.१९३९-२०३९ की दो प्रतियाँ तथा अन्य चार प्रतियाँ जिनमें संवत् प्राप्त नहीं हुआ। इस प्रकार कुल १० प्रतियाँ थीं। मुद्रित प्रतियों में सबसे प्राचीन प्रति ग्यारसपुर की थी जो २६.१०.१९४८ ई. का प्रकाशन है। विदिशा से प्राप्त ठिकानेसार का धर्मोपदेश वि.सं.१९४७ सन् १८९० का है। शेष प्रतियाँ वीर नि.सं.२४६५, तारण सं.४२४ वि.सं.२०११। सिंगोड़ी की वीर निर्वाण संवत् २४४४, २४५८ की प्रतियाँ, इसके अतिरिक्त सन् १९८६ से २००५ तक की २८ प्रतियां थीं, जिनमें छिंदवाड़ा, अमरवाड़ा, गुरैया की भावपूजा, गंजबासौदा, सागर, बीना, विदिशा, दमोह की मंदिर विधि, इटारसी की आराधना आदि सम्मिलित हैं।

इन सभी प्रतियों में धर्मोपदेश और मंदिर विधि की विषय वस्तु एक जैसी है। अंतर मात्र इतना है कि कोई अंश किसी प्रति में पहले है, किसी प्रति में बाद में है। एक सी दो प्रतियों में संवर्धित विषय प्रसंग है। इन सभी प्रतियों का अध्ययन करने के पश्चात् बृहद् मंदिर विधि-धर्मोपदेश और साधारण (लघु) मंदिर विधि का स्वरूप लिपिबद्ध किया गया है। विशेष यह कि सभी प्रतियों में मंदिर विधि का एक सा ही स्वरूप है अत: कोई विशेष परिवर्तन नहीं किया गया है। जहाँ बहुत ही आवश्यक हुआ वहाँ अथवा जहाँ पंक्तियों में अशुद्धि ज्ञात हुई वहाँ आंशिक संशोधन किया गया है। संशोधन सम्पादन में प्राचीन और वर्तमान सभी प्रतियों को मूल आधार बनाया गया है उसमें तारण पंथ की गरिमा, आम्नाय की सुरक्षा और सिद्धांत की मर्यादा का विशेष ध्यान रखा गया है।

मंदिर विधि की एकरूपता हेतु प्राप्त विद्वत्जनों के पत्रों के सुझाव का भी ध्यान रखकर सम्पादन का कार्य किया गया है। अत्यंत आवश्यकतानुसार और अशुद्धियों को शुद्ध करने हेतु जहाँ - जहाँ जो-जो भी आंशिक संशोधन किया गया है उससे संबंधित प्रश्नोत्तर माला जिज्ञासा और समाधान के रूप में दी गई है।

इस प्रकार मंदिर विधि की कुल ४५ प्रतियों तथा विद्वत्जनों के पत्रों के सुझाव के आधार पर यह सम्पादन कार्य सम्पन्न किया गया है।

मंदिर विधि को अर्थ सहित क्यों लिखा गया है ?

मंदिर विधि का अर्थ और अभिप्राय आबालबृद्ध सभी को हृदयग्राही होवे इसी पवित्र उद्देश्य से मंदिर विधि को अर्थ सहित लिखा गया है। वर्षों से मन में भावना थी कि मंदिर विधि अर्थ सहित होना चाहिये, अंतरंग की भावना को अब साकार रूप में अनुभव करते हुए हृदय अत्यंत प्रमुदित है। इतनी विशाल और महान मंदिर विधि का कार्य मेरी अल्प बुद्धि से होना संभव नहीं है। श्री गुरू महाराज की परम कृपा, पूज्यजनों के आशीर्वाद और

साधर्मीजनों की शुभकामनाओं के फलस्वरूप यह अगाध कार्य संभव हो सका है। मंदिर विधि के पद्यात्मक विषय दोहा, छंद, चौपाई, संस्कृत, प्राकृत के श्लोक, देवांगली पूजा, गुणपाठ पूजा, शास्त्र पूजा आदि प्रारंभ से अंत तक संपूर्ण विषय वस्तु का अर्थ लिखने का प्रयास किया गया है तथा जो-जो कठिन विषय हैं उन्हें भी अर्थ पूर्वक सरल करने का प्रयत्न हुआ है; फिर भी अल्पज्ञतावश त्रुटियाँ रह जाना संभव हैं ; अत: सभी सुधीजनों से अनुरोध है-

जो प्रमाद वश हुई हो, शब्द अर्थ की भूल।
विनय यही है सुधीजन, करें अर्थ अनुकूल ।।

प्रस्तुत प्रति की विषय वस्तु -

प्रस्तुत कृति में स्वाध्यायी साधर्मीजनों एवं मंदिर विधि करने वाले विद्वत् वर्ग के लिये सुविधा की दृष्टि से दो सोपानों में विषय वस्तु को विभाजित किया गया है।

प्रथम सोपान में तीन बत्तीसी, समय - समय पर उपयोग में आने वाले फूलना, ग्यारह नमस्कार, इष्ट वंदना (श्रावकाचार की चौदह गाथायें) दशलक्षण पाठ, सोलह कारण भावना, तारण स्तोत्र, महावीराष्टक दिया गया है। द्वितीय सोपान में सम्पादित मन्दिर विधि के संबंध में जिज्ञासा समाधान प्रश्नोत्तर, मन्दिर विधि प्रारंभ कैसे करें, दोनों मन्दिर विधि का क्रम, लघु एवं बृहद् मन्दिर विधि अर्थ सहित, आरती, स्तुति, प्राचीन एवं नये भजन, प्रभाती आदि आवश्यक उपयोगी विषय वस्तु समाहित की गई है। जो पर्यूषण पर्व में, दैनिक नित्य नियम में, वार्षिक मेला महोत्सवों में, वेदी प्रतिष्ठा तिलक महोत्सव के अवसर या अन्य विशिष्ट अवसरों पर उपयोगी सिद्ध होगी। मंदिर विधि से संबंधित लक्षण संग्रह, भेद - प्रभेद भी दिया गया है, जिससे मंदिर विधि में आये हुए विभिन्न शब्दों के भेद-प्रभेदों के बारे में जानकारी हो सकेगी।

सहयोगी साधकों, विद्वत्जनों एवं साधर्मीजनों के प्रति -

मंदिर विधि के इस पावन कार्य में बाल ब्र.श्री आत्मानंद जी, बाल ब्र. श्री शान्तानंद जी, ब्र. श्री परमानंद जी, बाल ब्र. बहिन उषा जी का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ, जिन्होंने हस्तलिखित एवं मुद्रित प्रतियाँ उपलब्ध कराई और इस कार्य को सहज बनाने में सहयोग किया। तारण तरण श्री संघ के अन्य साधकजनों का भी योगदान रहा। श्री डॉ.विद्यानंद जी विदिशा द्वारा ठिकानेसार की मंदिर विधि उपलब्ध करवाने एवं मंदिर विधि की एकरूपता में सक्रिय भागीदारी का निर्वाह करने रूप प्रशंसनीय सहयोग प्राप्त हुआ है।

प्रतिष्ठारत्न पं. श्री रतनचंद जी शास्त्री, प्रतिष्ठाचार्य पं. श्री नीलेशकुमार जी, पं. श्री रामप्रसाद जी, वाणीभूषण पं. श्री कपूरचंद भाईजी, पं. श्री सरदारमल जी, पं. श्री वीरेन्द्रकुमार जी, पं. श्री राजेन्द्रकुमार जी, पं. श्री जयचंद जी आदि तारण समाज के सभी विद्वानों से मंदिर विधि की एकरूपता के संबंध में चर्चायें हुई हैं एवं सभी विद्वानों का सहयोग प्राप्त हुआ है। सभी श्रेष्ठी एवं विद्वतजनों के सम्मिति पत्र ''संपादित मंदिर विधि लोक दृष्टि में'' नामक स्वतंत्र पुस्तिका में प्रकाशित किये गये हैं। अत: अखिल भारतीय तारण समाज के सभी स्थानों पर इस मंदिर विधि के अनुसार भावपूजा विधि सम्पन्न करें। मंदिर विधि करने वाले सभी साधर्मीजनों से अनुरोध है कि मंदिर विधि की एकरूपता बनाये रखने में विशेष सहयोग प्रदान कर सभी के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें यही मंगल भावना है।

छिंदवाड़ा, दिनांक २५-१०-२०१० **ब्र. बसन्त**

श्री मालारोहण जी

उवंकार वेदंति सुद्धात्म तत्त्वं, प्रनमामि नित्यं तत्त्वार्थ सार्धं ।
न्यानं मयं संमिक दर्स नेत्वं, संमिक्त चरनं चैतन्य रूपं ॥ १ ॥
नमामि भक्तं श्री वीरनाथं, नंतं चतुस्टं त्वं विक्त रूपं ।
माला गुनं बोछन्ति त्वं प्रवोधं, नमामिहं केवलि नंत सिद्धं ॥ २ ॥
काया प्रमानं त्वं ब्रह्मरूपं, निरंजनं चेतन लष्यनेत्वं ।
भावे अनेत्वं जे न्यान रूपं, ते सुद्ध दिस्टी संमिक्त वीर्जं ॥ ३ ॥
संसार दुष्यं जे नर विरक्तं, ते समय सुद्धं जिन उक्त दिस्टं ।
मिथ्यात मय मोह रागादि षंडं,ते सुद्ध दिस्टी तत्वार्थ सार्धं ॥ ४ ॥
सल्यं त्रयं चित्त निरोध नित्वं, जिन उक्त वानी ह्रिदै चेतयत्वं ।
मिथ्यात देवं गुरु धर्म दूरं, सुद्धं सरूपं तत्वार्थ सार्धं ॥ ५ ॥
जे मुक्ति सुष्यं नर कोपि सार्धं, संमिक्त सुद्धं ते नर धरेत्वं ।
रागादयो पुन्य पापाय दूरं, ममात्मा सुभावं धुव सुद्ध दिस्टं ॥ ६ ॥
श्री केवलं न्यान विलोकि तत्त्वं, सुद्धं प्रकासं सुद्धात्म तत्त्वं ।
संमिक्त न्यानं चरनंत सुष्यं, तत्वार्थ सार्धं त्वं दर्सनेत्वं ॥ ७ ॥
संमिक्त सुद्धं ह्रिदयं ममस्तं, तस्य गुनमाला गुथतस्य वीर्जं ।
देवाधिदेवं गुरु ग्रंथ मुक्तं, धर्मं अहिंसा षिम उत्तमाध्यं ॥ ८ ॥
तत्त्वार्थ सार्धं त्वं दर्सनेत्वं, मलं विमुक्तं संमिक्त सुद्धं ।
न्यानं गुनं चरनस्य सुद्धस्य वीर्जं, नमामि नित्वं सुद्धात्म तत्त्वं ॥ ९ ॥
जे सप्त तत्त्वं षट् दर्व जुक्तं, पदार्थ काया गुन चेतनेत्वं ।
विस्वं प्रकासं तत्त्वानि वेदं, श्रुतं देव देवं सुद्धात्म तत्त्वं ॥ १० ॥
देवं गुरं सास्त्र गुनानि नेत्वं, सिद्धं गुनं सोलहकारनेत्वं ।
धर्म गुनं दर्सन न्यान चरनं, मालाय गुथतं गुन सस्वरूपं ॥ ११ ॥
पडिमाय ग्यारा तत्त्वानि पेषं, व्रतानि सीलं तप दान चेत्वं ।
संमिक्त सुद्धं न्यानं चरित्रं, स दर्सनं सुद्ध मलं विमुक्तं ॥ १२ ॥
मूलं गुनं पालंति जे विसुद्धं, सुद्धं मयं निर्मल धारयेत्वं ।
न्यानं मयं सुद्ध धरंति चित्तं, ते सुद्ध दिस्टी सुद्धात्म तत्त्वं ॥ १३ ॥
संकाय दोषं मद मान मुक्तं, मूढ़ं त्रयं मिथ्या माया न दिस्टं ।
अनाय षट् कर्म मल पंचवीसं, तिक्तस्य न्यानी मल कर्म मुक्तं ॥ १४ ॥
सुद्धं प्रकासं सुद्धात्म तत्त्वं, समस्त संकल्प विकल्प मुक्तं ।
रत्नत्रयं लंकृत विस्वरूपं, तत्त्वार्थ सार्धं बहुभक्ति जुक्तं ॥ १५ ॥
जे धर्म लीना गुन चेतनेत्वं, ते दुष्य हीना जिन सुद्ध दिस्टी ।
संप्रोषि तत्त्वं सोइ न्यान रूपं, ब्रजंति मोष्यं षिनमेक एत्वं ॥ १६ ॥

जे सुद्ध दिस्टी संमिक्त सुद्धं, माला गुनं कंठ ह्रिदयं विरुलितं ।
तत्त्वार्थ सार्धं च करोति नित्वं, संसार मुक्तं सिव सौष्य वीर्जं ॥ १७ ॥
न्यानं गुनं माल सुनिर्मलेत्वं, संषेप गुथितं तुव गुन अनंतं ।
रत्नत्रयं लंकृत स स्वरूपं, तत्त्वार्थ सार्धं कथितं जिनेन्द्रं ॥ १८ ॥
श्रेनीय पृच्छन्ति श्री वीरनाथं, मालाश्रियं मागंति नेयचक्रं ।
धरनेन्द्र इन्द्रं गन्धर्व जष्यं, नरनाह चक्रं विद्या धरेत्वं ॥ १९ ॥
किं दिप्त रत्नं बहुविहि अनंतं, किं धन अनंतं बहुभेय जुक्तं ।
किं तिक्त राजं बनवास लेत्वं, किं तव तवेत्वं बहुविहि अनंतं ॥ २० ॥
श्री वीरनाथं उक्तंति सुद्धं, सुनु श्रेनिराया माला गुनार्थं ।
किं रत्न किं अर्थ किं राजनार्थं, किं तव तवेत्वं नवि माल दिस्टं ॥ २१ ॥
किं रत्न कार्जं बहुविहि अनंतं, किं अर्थ अर्थं नहिं कोपि कार्जं ।
किं राज चक्रं किं काम रूपं, किं तव तवेत्वं बिन सुद्ध दिस्टी ॥ २२ ॥
जे इन्द्र धरनेन्द्र गंधर्व जष्यं, नाना प्रकारं बहुविहि अनंतं ।
ते नंतं प्रकारं बहुभेय कृत्वं, माला न दिस्टं कथितं जिनेन्द्रं ॥ २३ ॥
जे सुद्ध दिस्टी संमिक्त जुक्तं,जिन उक्त सत्यं सु तत्त्वार्थ सार्धं ।
आसा भय लोभ अस्नेह तिक्तं, ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं ॥ २४ ॥
जिनस्य उक्तं जे सुद्ध दिस्टी, संमिक्तधारी बहुगुन समिद्धं ।
ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं, मुक्ति प्रवेसं कथितं जिनेन्द्रं ॥ २५ ॥
संमिक्त सुद्धं मिथ्या विरक्तं, लाजं भयं गारव जेवि तिक्तं ।
ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं, मुक्तस्यगामी जिनदेव कथितं ॥ २६ ॥
जे दर्सनं न्यान चारित्र सुद्धं, मिथ्यात रागादि असत्यं च तिक्तं ।
ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं, संमिक्त सुद्धं कर्मं विमुक्तं ॥ २७ ॥
पदस्त पिंडस्त रूपस्त चेत्वं, रूपा अतीतं जे ध्यान जुक्तं ।
आरति रौद्रं मय मान तिक्तं, ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं ॥ २८ ॥
अन्या सु वेदं उवसम धरेत्वं, ष्यायिकं सुद्धं जिन उक्त सार्धं ।
मिथ्या त्रिभेदं मल राग षंडं, ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं ॥ २९ ॥
जे चेतना लष्यनो चेतनित्वं, अचेतं विनासी असत्यं च तिक्तं ।
जिन उक्त सार्धं सु तत्त्वं प्रकासं, ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं ॥ ३० ॥
जे सुद्ध बुद्धस्य गुन सस्वरूपं, रागादि दोषं मल पुंज तिक्तं ।
धर्मं प्रकासं मुक्ति प्रवेसं, ते माल दिस्टं ह्रिदै कंठ रुलितं ॥ ३१ ॥
जे सिद्ध नंतं मुक्ति प्रवेसं, सुद्धं सरूपं गुन माल ग्रहितं ।
जे केवि भव्यात्म संमिक्त सुद्धं, ते जांति मोष्यं कथितं जिनेन्द्रं ॥ ३२ ॥

॥ इति श्री मालारोहण नाम ग्रंथ जी श्री जिन तारण तरण विरचितं सम उत्पन्निता ॥

श्री पंडितपूजा जी

उवंकारस्य ऊर्धस्य, ऊर्ध सद्भाव सास्वतं ।
विंद स्थानेन तिस्टन्ते, न्यानं मयं सास्वतं धुवं ॥ १ ॥
निरू निश्चै नय जानंते, सुद्ध तत्त्व विधीयते ।
ममात्मा गुनं सुद्धं, नमस्कारं सास्वतं धुवं ॥ २ ॥
उवं नमः विन्दते जोगी, सिद्धं भवति सास्वतं ।
पंडितो सोपि जानन्ते, देव पूजा विधीयते ॥ ३ ॥
ह्रियंकारं न्यान उत्पन्नं, उवंकारं च विन्दते ।
अरहं सर्वन्य उक्तं च, अचष्य दरसन दिस्टते ॥ ४ ॥
मति श्रुतस्य संपूरनं, न्यानं पंचमयं धुवं ।
पंडितो सोपि जानन्ति, न्यानं सास्त्र स पूजते ॥ ५ ॥
उवं ह्रियं श्रियंकारं, दरसनं च न्यानं धुवं ।
देवं गुरं स्रुतं चरनं, धर्म सद्भाव सास्वतं ॥ ६ ॥
वीर्जं अंकुरनं सुद्धं, त्रिलोकं लोकितं धुवं ।
रत्नत्रयं मयं सुद्धं, पंडितो गुन पूजते ॥ ७ ॥
देवं गुरुं स्रुतं वन्दे, धर्म सुद्धं च विन्दते ।
ति अर्थ अर्थ लोकं च, अस्नानं च सुद्धं जलं ॥ ८ ॥
चेतना लष्यनो धर्मो, चेतयन्ति सदा बुधैः ।
ध्यानस्य जलं सुद्धं, न्यानं अस्नान पंडिता ॥ ९ ॥
सुद्ध तत्त्वं च वेदन्ते, त्रिभुवनं न्यानं सुरं ।
न्यानं मयं जलं सुद्धं, अस्नानं न्यान पंडिता ॥ १० ॥
संमिक्तस्य जलं सुद्धं, संपूरनं सर पूरितं ।
अस्नानं पिवते गनधरनं, न्यानं सर नंतं धुवं ॥ ११ ॥
सुद्धात्मा चेतना नित्वं, सुद्ध दिस्टि समं धुवं ।
सुद्ध भाव स्थिरी भूतं, न्यानं अस्नान पंडिता ॥ १२ ॥
प्रषालितं त्रिति मिथ्यातं, सल्यं त्रयं निकंदनं ।
कुन्यानं राग दोषं च, प्रषालितं असुह भावना ॥ १३ ॥
कषायं चत्रु अनंतानं, पुन्य पाप प्रषालितं ।
प्रषालितं कर्म दुस्टं च, न्यानं अस्नान पंडिता ॥ १४ ॥
प्रषालितं मनं चवलं, त्रिविधि कर्म प्रषालितं ।
पंडितो वस्त्र संजुक्तं, आभरनं भूषन क्रीयते ॥ १५ ॥
वस्त्रं च धर्म सद्भावं, आभरनं रत्नत्रयं ।
मुद्रिका सम मुद्रस्य, मुकुटं न्यान मयं धुवं ॥ १६ ॥

दिस्टतं सुद्ध दिस्टी च, मिथ्यादिस्टी च तिक्तयं ।
असत्यं अनृतं न दिस्टंते, अचेत दिस्टि न दीयते ॥ १७ ॥
दिस्टतं सुद्ध समयं च, संमिक्तं सुद्धं धुवं ।
न्यानं मयं च संपूरनं, ममल दिस्टी सदा बुधै ॥ १८ ॥
लोकमूढ़ं न दिस्टन्ते, देव पाषंड न दिस्टते ।
अनायतन मद अस्टं च, संका अस्ट न दिस्टते ॥ १९ ॥
दिस्टतं सुद्ध पदं सार्धं, दरसनं मल विमुक्तयं ।
न्यानं मयं सुद्ध संमिक्तं, पंडितो दिस्टि सदा बुधै ॥ २० ॥
वेदिका अग्र स्थिरस्चैव, वेदतं निरग्रंथं धुवं ।
त्रिलोकं समयं सुद्धं, वेद वेदन्ति पंडिता ॥ २१ ॥
उच्चरनं ऊर्ध सुद्धं च, सुद्ध तत्त्वं च भावना ।
पंडितो पूज आराध्यं, जिन समयं च पूजतं ॥ २२ ॥
पूजतं च जिनं उक्तं, पंडितो पूजतो सदा ।
पूजतं सुद्ध सार्धं च, मुक्ति गमनं च कारनं ॥ २३ ॥
अदेवं अन्यान मूढ़ं च, अगुरं अपूज पूजतं ।
मिथ्यातं सकल जानन्ते, पूजा संसार भाजनं ॥ २४ ॥
तेनाह पूज सुद्धं च, सुद्ध तत्त्व प्रकासकं ।
पंडितो वन्दना पूजा, मुक्ति गमनं न संसया ॥ २५ ॥
प्रति इन्द्रं प्रति पूर्नस्य, सुद्धात्मा सुद्ध भावना ।
सुद्धार्थं सुद्ध समयं च, प्रति इन्द्रं सुद्ध दिस्टितं ॥ २६ ॥
दातारो दान सुद्धं च, पूजा आचरन संजुतं ।
सुद्ध संमिक्त हृदयं जस्य, अस्थिरं सुद्ध भावना ॥ २७ ॥
सुद्ध दिस्टी च दिस्टंते, सार्धं न्यान मयं धुवं ।
सुद्ध तत्त्वं च आराध्यं, वन्दना पूजा विधीयते ॥ २८ ॥
संघस्य चत्रु संघस्य, भावना सुद्धात्मनं ।
समय सरनस्य सुद्धस्य, जिन उक्तं सार्धं धुवं ॥ २९ ॥
सार्धं च सप्त तत्त्वानं, दर्व काया पदार्थकं ।
चेतना सुद्ध धुवं निस्चय, उक्तंति केवलं जिनं ॥ ३० ॥
मिथ्या तिक्त त्रितियं च, कुन्यानं त्रिति तिक्तयं ।
सुद्ध भाव सुद्ध समयं च, सार्धं भव्य लोकयं ॥ ३१ ॥
एतत् संमिक्त पूजस्या, पूजा पूज्य समाचरेत् ।
मुक्ति श्रियं पथं सुद्धं, विवहार निस्चय सास्वतं ॥ ३२ ॥

॥ इति श्री पंडित पूजा नाम ग्रंथ जी श्री जिन तारण तरण विरचितं सम उत्पन्निता ॥

श्री कमलबत्तीसी जी

तत्त्वं च परम तत्त्वं, परमप्पा परम भाव दरसीये ।
परम जिनं परमिस्टी, नमामिहं परम देव देवस्य ॥ १ ॥
जिनवयनं सद्दहनं, कमलसिरि कमल भाव उववन्नं ।
अर्जिक भाव सउत्तं, ईर्ज सभाव मुक्ति गमनं च ॥ २ ॥
अन्मोयं न्यान सहावं, रयनं रयन सरूव विमल न्यानस्य ।
ममलं ममल सहावं, न्यानं अन्मोय सिद्धि संपत्तं ॥ ३ ॥
जिनयति मिथ्याभावं, अन्रित असत्य पर्जाव गलियं च ।
गलियं कुन्यान सुभावं, विलयं कम्मान तिविह जोएना ॥ ४ ॥
नंद अनंदं रूवं, चेयन आनंद पर्जाव गलियं च ।
न्यानेन न्यान अन्मोयं, अन्मोयं न्यान कम्म षिपनं च ॥ ५ ॥
कम्म सहावं षिपनं, उत्पत्ति षिपिय दिस्टि सभावं ।
चेयन रूव संजुत्तं, गलियं विलयंति कम्म बंधानं ॥ ६ ॥
मन सुभाव संषिपनं, संसारे सरनि भाव षिपनं च ।
न्यान बलेन विसुद्धं, अन्मोयं ममल मुक्ति गमनं च ॥ ७ ॥
वैरागं तिविह उवन्नं, जनरंजन रागभाव गलियं च ।
कलरंजन दोस विमुक्कं, मनरंजन गारवेन तिक्तं च ॥ ८ ॥
दर्सन मोहंध विमुक्कं, रागं दोसं च विषय गलियं च ।
ममल सुभाव उवन्नं, नंत चतुस्टय दिस्टि संदर्सं ॥ ९ ॥
तिअर्थ सुद्ध दिस्टं,पंचार्थ पंच न्यान परमिस्टी ।
पंचाचार सुचरनं, संमत्तं सुद्ध न्यान आचरनं ॥ १० ॥
दर्सन न्यान सुचरनं, देवं च परम देव सुद्धं च ।
गुरं च परम गुरुवं, धर्मं च परम धर्म सभावं ॥ ११ ॥
जिनं च परम जिनयं, न्यानं पंचामि अषिरं जोयं ।
न्यानेन न्यान विर्धं, ममल सुभावेन सिद्धि संपत्तं ॥ १२ ॥
चिदानंद चिंतवनं, चेयन आनंद सहाव आनंदं ।
कम्म मल पयडि षिपनं, ममल सहावेन अन्मोय संजुत्तं ॥ १३ ॥
अप्पा परू पिच्छन्तो, पर पर्जाव सल्य मुक्तानं ।
न्यान सहावं सुद्धं, सुद्धं चरनस्य अन्मोय संजुत्तं ॥ १४ ॥
अबंभं न चवन्तं, विकहा विसनस्य विषय मुक्तं च ।
न्यान सहाव सु समयं, समयं सहकार ममल अन्मोयं ॥ १५ ॥
जिन वयनं च सहावं, जिनियं मिथ्यात कषाय कम्मानं ।
अप्पा सुद्धप्पानं, परमप्पा ममल दर्सए सुद्धं ॥ १६ ॥

जिन दिस्टि इस्टि संसुद्धं, इस्टं संजोय तिक्त अनिस्टं ।
इस्टं च इस्ट रूवं, ममल सहावेन कम्म संषिपनं ॥ १७ ॥
अन्यानं नहु दिस्टं, न्यान सहावेन अन्मोय ममलं च ।
न्यानंतरं न दिस्टं, पर पर्जाव दिस्टि अंतरं सहसा ॥ १८ ॥
अप्पा अप्प सहावं, अप्पा सुद्धप्प विमल परमप्पा ।
परम सरूवं रूवं, रूवं विगतं च ममल न्यानस्य ॥ १९ ॥
विमलं च विमल रूवं, न्यानं विन्यान न्यान सहकारं ।
जिन उत्तं जिन वयनं, जिन सहकारेन मुक्ति गमनं च ॥ २० ॥
षट्काई जीवानं, क्रिपा सहकार विमल भावेन ।
सत्व जीव समभावं, क्रिपा सह विमल कलिस्ट जीवानं ॥ २१ ॥
एकांत विप्रिय न दिस्टं, मध्यस्थं विमल सुद्ध सभावं ।
सुद्ध सहावं उत्तं, ममल दिस्टी च कम्म षिपनं च ॥ २२ ॥
सत्वं किलिस्ट जीवा, अन्मोयं सहकार दुग्गए गमनं ।
जे विरोह सभावं, संसारे सरनि दुष्य वीयंमी ॥ २३ ॥
न्यान सहाव सु समयं, अन्मोयं ममल न्यान सहकारं ।
न्यानं न्यान सरूवं, ममलं अन्मोय सिद्धि संपत्तं ॥ २४ ॥
इस्टं च परम इस्टं, इस्टं अन्मोय विगत अनिस्टं ।
पर पर्जावं विलियं, न्यान सहावेन कम्म जिनियं च ॥ २५ ॥
जिन वयनं सुद्ध सुद्धं, अन्मोयं ममल सुद्ध सहकारं ।
ममलं ममल सरूवं, जं रयनं रयन सरूव संमिलियं ॥ २६ ॥
स्रेस्टं च गुन उववन्नं, स्रेस्टं सहकार कम्म संषिपनं ।
स्रेस्टं च इस्ट कमलं, कमलसिरि कमल भाव ममलं च ॥ २७ ॥
जिन वयनं सहकारं, मिथ्या कुन्यान सल्य तिक्तं च ।
विगतं विषय कषायं, न्यानं अन्मोय कम्म गलियं च ॥ २८ ॥
कमलं कमल सहावं, षट् कमलं तिअर्थ ममल आनंदं ।
दर्सन न्यान सरूवं, चरनं अन्मोय कम्म संषिपनं ॥ २९ ॥
संसार सरनि नहु दिस्टं, नहु दिस्टं समल पर्जाव सभावं ।
न्यानं कमल सहावं, न्यानं विन्यान कमल अन्मोयं ॥ ३० ॥
जिन उत्तं सद्दहनं, सद्दहनं अप्प सुद्धप्प ममलं च ।
परम भाव उवलब्धं, परम सहावेन कम्म विलयंति ॥ ३१ ॥
जिन दिस्टि उत्त सुद्धं, जिनयति कम्मान तिविह जोएन ।
न्यानं अन्मोय विन्यानं, ममल सरूवं च मुक्ति गमनं च ॥ ३२ ॥

॥ इति श्री कमल बत्तीसी नाम ग्रंथ जी श्री जिन तारण तरण विरचितं सम उत्पन्निता ॥

१. श्री देव दिप्ति गाथा (फूलना क्र.१)

(विषय : औकास, ज्ञान स्वभाव में मुक्ति, ज्ञान स्वभाव की महिमा और उदय)

तत्त्वं च नन्द आनन्द मउ, चेयननन्द सहाउ ।
परम तत्त्व पद विंद पउ, नमियो सिद्ध सुभाउ ॥ १ ॥
जिनवर उत्तउ सुद्ध जिनु, सिद्धह ममल सहाउ ।
न्यान विन्यानह समय पउ, परम निरंजन भाउ ॥ २ ॥
परम पयं परमानु मुनि, परम न्यान सहकार ।
परम निरंजन सो मुनहु, ममलह ममल सहाउ ॥ ३ ॥
भय विनासु भवु जु मुनहु, परमानंद सहाउ ।
परम निरंजन सो मुनहु, ममलह सुद्ध सहाउ ॥ ४ ॥
देव जु दिट्ठ ह जिनवरहं, उवनउ दाता देउ ।
न्यान विन्यानह ममल पउ, सु परम पउ जोउ ॥ ५ ॥
दिप्त दिप्ति तं दिस्ट समु, दिप्त दिस्ट सम भेउ ।
दिस्टि सब्द विवान सुइ, उत्पन्नउ दाता देउ ॥ ६ ॥
दिप्त दिस्ट सुइ नन्त मुनि, कमल इस्टि परमिस्टि ।
सुयं लब्धि तं रयन पउ, दिपि नन्त चतुस्टै संजुत्तु ॥ ७ ॥
अंगदि अंगह दिपि दिस्ट मउ, सब्द हिययार संजुत्तु ।
अर्थ तिअर्थ जु कमल रुइ, गिर दिप्त दिस्टि संजुत्तु ॥ ८ ॥
दिप्ति दिस्टि सुइ सब्द मउ, हिय हुवयार संजुत्तु ।
अर्क विंद तं रमन पउ, उव उवनउ दाता देउ ॥ ९ ॥
उव उवन उवन हिययार पउ, सहयार दिप्ति संजोई ।
न्यान विन्यान जु दिस्टि मउ, दिपि दिस्टि देइ सुइदेउ ॥ १० ॥
जं जं उवन सहाव जिनु, दिपि दिस्टि उवन उव उत्तु ।
सब्द उवंनउ उवन मउ, उव उवन दिस्टि दर्संतु ॥ ११ ॥
जं दर्सिउ नन्तानन्त मउ, न्यान वीर्य विन्यानु ।
नन्त सौष्य सुइ परम पउ, तं देइ देउ उववंनु ॥ १२ ॥
परम न्यान तं परम पउ, परम भाव सोई भेउ ।
नन्तानन्त सु देउ पउ, परम देउ सोई देउ ॥ १३ ॥
नो उत्पन्न तं सो जिनई, जिनियो नन्तानन्तु ।
नन्त उवन सुइ रमन मउ, जिन जिनवर सुइ उत्तु ॥ १४ ॥
परम उवन जो रमन मउ, परम न्यान सुइ जुत्तु ।
परम उवन जु जिनय जिनु, उववंन विली जिन उत्तु ॥ १५ ॥

परम सुभावह परम रउ, परम परम जिन उत्तु ।
परम लष्य गम अगम पउ, परम परम जिन उत्तु ॥१६॥
ममलं ममल उवंनं, भय षिपिय ससंक विलयंति ।
कम्मं उवनं विलियं, भय षिपनिक ममल पाहुडं बोच्छं ॥ १७ ॥

२. श्री गुरु दिप्ति गाथा (फूलना क्र.३)

(विषय : गुरू को स्वरूप सहित नमस्कार, अंतरात्मा की महिमा और बहुमान)

गुरु उवएसिउ गुपित रूइ, गुपित न्यान सहकार ।
तारन तरन समर्थ मुनि, गुरु संसार निवार ॥ ०१ ॥
संसय सल्य विमुक्कु गुरू, भय विलय अभय जिन उत्तु ।
अभय न्यान सुइ गुपित रुइ, न्यान विन्यान संजुत्तु ॥ ०२ ॥
गुरु गरुवो गुरु नन्त पउ, गुरु दिप्ति दिस्टि दर्संतु ।
सब्द संजोए अमिय रसु, भय षिपिय ममल उवएसु ॥ ०३ ॥
दिप्ति उवंनि न्यान मइ, दिस्टि इस्टि संजुत्तु ।
दिप्ति विन्यान सु गुपित मउ, दिस्टि रिस्टि सं उत्तु ॥ ०४ ॥
दिप्ति सहाउ सु समय पउ, समय ममल जिन उत्तु।
दिस्टि रिस्टि सुइ अमिय रसु, भय षिपिय ममल संजुत्तु ॥ ०५ ॥
दिप्ति विसेष निसंक पउ, कंष्या रहित जिनुत्तु।
भय षिपिय सल्य सक विलय सुई, तं अमिय रमन विष भंजु ॥ ०६ ॥
दिप्ति स उतउ व्रिति विलिय पउ, न्रिव्रिति दिप्ति जिन उत्तु ।
दिस्टि सिस्टि सह दिस्टि मउ, गुरु अमिय रमन रस जुत्तु ॥ ०७ ॥
दिप्ति रमनु जिन उवन पउ, उवन सहाउ संजुत्तु ।
दिस्टि उवन सहकार जिनु, भय षिपिय ममल जिन उत्तु ॥ ०८ ॥
दिप्ति क्रांति षट् कमल जिनु, अवयास दिस्टि दिस्टंतु ।
उवन हिययार सहयार रउ, ममल दिस्टि दर्संतु ॥ ०९ ॥
दिप्ति दिप्ति सुइ दिप्ति पउ, दिस्टि नन्त जिन उत्तु ।
भय सल्य संक विलयंतु गुरु, अमिय ममल सिद्धि रत्तु ॥ १० ॥
दिप्ति अनन्त जिनुत्तु जिनु, जनरंजन रागु विलंतु ।
अन्मोय दिस्टि भय षिपक जिनु, अन्मोय ममल दर्संतु ॥ ११ ॥
जं षिपियो नन्त सु कम्मु सुइ, तं मुक्ति इस्टि इस्टंतु ।
जं अमिय रमन विष विलय गुरू, तं ममल मुक्ति दर्संतु ॥ १२ ॥
जं सहाइ चउ रह गमनु, तं साधु समय जिन उत्तु ।
पर्जय भय सल्य संक गलियं, तं न्यान दिप्ति दर्संतु ॥ १३ ॥

अनदिठु अनस्रुतु गुपित गुरू, अनहुंतु दर्स दर्संतु ।
गुपित गुहिज जै रमन मउ, तं गुपित मुक्ति जिन उत्तु ॥ १४ ॥
उवन उवन दिपि दिस्टि जिनु, उवनउ दाता देउ ।
गुरु गुपितह सुइ रमन पउ, तं अमिय रमन रस जुत्तु ॥ १५ ॥
देउ दिप्ति हिययार सुइ, गुरु ग्रंथ सल्य भय चत्तु ।
गुपित रमन दर्संतु सुइ, गुरु सिद्धि मुक्ति सुइ उत्तु ॥ १६ ॥
परम गुपित परमप्प जिनु, पर पर्जय विलयंतु ।
भय षिपनिक भव्वु जु अमिय मउ, ममल परम गुरु उत्तु ॥ १७ ॥
उवन हिययार सहयार मउ, गुरु परम मुक्ति दर्संतु ।
उवन हिययार सहयार सिरी, गुरु परम मुक्ति विलसंतु ॥ १८ ॥

३. श्री धर्म दीप्ति गाथा (फूलना क्र.५)

(विषय : धर्म का स्वरूप और धर्म को नमस्कार, तिअर्थ की महिमा)

धम्मु जु उत्तउ जिनवरहं, अर्थति अर्थह जोउ ।
भय विनासु भवु जु मुनहु, ममल न्यान परलोउ ॥ १ ॥
अर्थति अर्थह भेउ मुनि, लषन रूव संजुत्तु ।
ममल न्यान सहकार मउ, भय विनास तं उत्तु ॥ २ ॥
उवंकार उवंन मई, ह्रियंकार हिययारू ।
श्रींकारह संजुत्तु सिरी, ममल भाव सहकारू ॥ ३ ॥
उवन हिययार सहयार मउ, अर्थति अर्थ संजुत्तु ।
धम्मु जु धरियो ममल पउ, अमिय रमन जिन उत्तु ॥ ४ ॥
रमने रमियो ममल पउ, भय सल्य संक विलयंतु ।
अन्मोय न्यान भय षिपिय सुई, धम्मु धरिय जिन उत्तु ॥ ५ ॥
धम्मु जु धरियो ममल पउ, धरिय उवन जिन उत्तु ।
अर्क सु अर्क सु अर्क मउ, विंद विन्यान स उत्तु ॥ ६ ॥
अर्क सुयं जिन अर्क पउ, हिय अर्क रमन हिययार ।
गुपित अर्क सहकार जिनु, विंद रमन विन्यानु ॥ ७ ॥
पय अर्कह पद विंद समु, पदह परम पद उत्तु ।
परमप्पय परमप्पु जिन, भय षिपिय अमिय रस उत्तु ॥ ८ ॥
अर्थति अर्थह अर्क समु, लघु दीरघ नहु दिट्ठु ।
अर्क विन्द विन्यान समु, उत्पन्न भाउ सुइ इस्टु ॥ ९ ॥

धरयति धम्मु जु जिन कहिउ, धरयति लोउ अलोउ ।
अर्थति अर्थह समय समु, भय षिपिय अमिय सुइ उत्तु ।। १० ।।
धरयति धरियो ममल पउ, समल भाव विलयन्तु ।
जामन मरन जु समल पउ, अन्मोय न्यान विलयन्तु ।। ११ ।।
धरनु विलय जिनु धरन धरिउ, धम्मु तिलोय पसिद्धु ।
नन्त न्यान विन्यान पउ, पर पर्जय विलयन्तु ।। १२ ।।
गहनु विलय अगहनु गहउ, भय सल्य संक विलयंतु ।
अमिय पयोहर रमन पउ, अभय अमिय विलसंतु ।। १३ ।।
सहनु विलय जिन सहनु सहिउ, सहिय न्यान उवएसु ।
धरनु धरिउ जिन धरनु जिन, पर्जय भय नंत विलंतु ।। १४ ।।
रहनु विलय जिन रहनु रहिउ, रहि पर्जय विलयंतु ।
दिप्ति दिस्टि सुइ न्यान पउ, विन्यान मुक्ति दर्संतु ।। १५ ।।
रमनु विलय जिन रमनु रमिउ, रमियो उवनु हिययार ।
सहयार रमनु साहिउ ममलु, अमिय रस रमन हिययार ।। १६ ।।
दंसु गलिय जिन दर्स धरिउ, दिस्टि गलिय जिन दिस्टि ।
तारन तरन सहाउ लई, धम्मु इस्टि परमिस्टि ।। १७ ।।
लषु गलिय जिन लषु लषिउ, जिनयति कम्म सहाउ ।
भय विनासु भवु जु मुनहु, अमिय ममल सुभाउ ।। १८ ।।
अलषु गलिय जिन अलषु लषिउ, लषंतउ ममल सहाउ ।
भय षिपनिकु पर्जय विलयं, विषु विलय अमिय रस भाउ ।। १९ ।।
गंमु गलिय जिन गमु गमिऊ , गम दिप्ति दिस्टि उव उत्तु ।
सब्द इस्टि सुइ अमिय मउ, भय षिपिय ममल दर्संतु ।। २० ।।
अगमु गलिय जिनु अगमु गमिउ, गमियो नन्तानन्तु ।
विंद विन्यान सु समय मउ, धम्मु रमनु सिव पंथु ।। २१ ।।
लब्धि गलिय जिन लब्धि पउ, जिनियो कम्मु सहाउ ।
पर्जय भय विलयंतु सुइ, अमिय रस ममल सुभाउ ।। २२ ।।
परम परम परिनामु धरि, परम न्यान सहकार ।
पर पर्जय भय सल्य विली, परम धर्म सहकार ।। २३ ।।

४. कलशों की गाथा (फूलना क्र.७९)

(विषय : परिणाम भेद चार)

चौ उववन्न सुभावं, दिगंतरं नन्त नन्ताइ जिन दिट्ठं ।
पय कमले सहकारं, क्रांति सहकार कलस जिन ढलियं ।। १ ।।

सहकारं अर्थ तिअर्थं, अर्थं सहकार कलस जिन उत्तं ।
सुर विंजन परिनामं, सहसं अट्ठंमि चौ उवन चौबीसं ।। २ ।।
इस्टं दर्सति इन्द्रं, अप्प सहावेन इच्छ आछरयं ।
ऐरापति आयरनं, कमलं सहकार जिनेन्द विंदानं ।। ३ ।।
कलसं सहाव उत्तं, कमल सरूवं च ममल सहकारं ।
भय विनस्य भवियनं, धम्मं सहकार सिद्धि सम्पत्तं ।। ४ ।।
सिद्ध सरूवं रूवं, सिद्धं गुन विसेष ममल सहकारं ।
भय षिपिय कम्म गलियं, धम्मं पय पयडि मुक्ति गमनं च ।। ५ ।।
जनमन जैवन्त सुभावं, जाता उववन्न जयकार ममलं च ।
भय षिपनिक भवियनं, जय जय जयवन्त जन्म तित्थयरं ।। ६ ।।
धम्म सहाव संजुत्तं, तारन तरनं च उवन ममलं च ।
लोयालोय पयासं, तिअर्थ आयरन सिद्धि सम्पत्तं ।। ७ ।।

५. स्वामी तारन देवा फूलना (फूलना क्र.१२९)

(विषय : कलन चरन रमन महिमा)

जिनु जिनयति जिनय जिनय जिनु उवने, जिनु मुक्ति पंथ दर्संतु ।
सब्द प्रिये सुइ सुयं उवन जिनु, जय जयो सिद्धि संपत्तु, हो स्वामी तारन देवा ।। १ ।।
उत्पन्न अर्क दरसाइयौ, जिन स्वामी पाये, हो स्वामी तारन देवा ।
अलष लषाउन पाये, हो स्वामी तारन देवा ।
अगम गमाउन हो स्वामी तारन देवा ।
असह सहाउन हो स्वामी तारन देवा ।। २ ।।
।। आचरी ।।
जिन न्यान विन्यानह उवन रमाई, तारन तरन समत्थु ।
जिन दिप्ति दिस्टि उत्पन्न मिली, सिहु समय सिद्धि संपत्तु ।। ३ ।।
।। हो स्वामी ।।
रम रमयति रमन रमन जिन उवने, उव उवन अर्क अर्कंतु ।
अर्क सुभावे उवन अर्क जिनु, उव उवन सिद्धि संपत्तु ।। ४ ।।
।। हो स्वामी ।।
चर चरन उवन सुइ चरन उवन जिनु, कलि कलिय अर्क जिन उत्तु ।
जिन जिनय सहावे उवन कलन जिनु, कलि चरन सिद्धि संपत्तु ।। ५ ।।
।। हो स्वामी ।।
कलि कलन कलिय उव कलिय कलन जिनु, कलि कलिय अर्क जिन उत्तु ।
जिन जिनय सहावे उवन कलन जिनु, कलि उवन सिद्धि संपत्तु ।। ६ ।।
।। हो स्वामी ।।

चरि चरन कलन सुइ उवन रमन जिनु, त्काल रमनु जिन उत्तु ।
उव उवन सहावे रमन सुयं जिनु, सुइ रमन सिद्धि संपत्तु ॥ ७ ॥
॥ हो स्वामी ॥
चरन कलन सुइ उवन रमन जिनु, कलि उवन कमल धुव उत्तु ।
सुइ उवन कमल तर तार रमन जिनु, उव कमल सिद्धि संपत्तु ॥ ८ ॥
॥ हो स्वामी ॥
सुइ अर्क अर्क सुइ कमल अर्क जिनु, सुइ अर्क कमल जिन उत्तु ।
सह समय अर्क सुइ कमल अर्क जिनु, उव कमल सिद्धि संपत्तु ॥ ९ ॥
॥ हो स्वामी ॥
उव उवन कमल सुइ धुवं उवन जिनु, धुव उवन समय सुव उत्तु ।
धुव उवन सुवन सुइ कमल रमन जिनु, उव कमल सिद्धि संपत्तु ॥ १० ॥
॥ हो स्वामी ॥
सुइ तारन तरन सु कमल रमन जिनु, सुइ तार कमल जिन उत्तु ।
सुइ तरन सहावे उवन कमल जिनु, सह समय सिद्धि संपत्तु ॥ ११ ॥
॥ हो स्वामी ॥

६. दोहा बसन्त गाथा (फूलना क्र.११०)

(विषय : इष्ट दिष्टि, उत्पन्न दिष्टि, विवान-५)

उव उवन उवन दर्सतु, दर्सतु रे, उव उवन सहावे समय मौ ।
उव उवन समय विलसंतु, विलसंतु रे, उव उवन सहावे मुक्ति पौ ॥ १ ॥
दिष्टि दिस्टि जिन उत्तु, जिन उत्तु रे, दिस्टि दिष्टि सुइ रमन पौ ।
सब्द प्रियो जिन उत्तु, जिन उत्तु रे, प्रिये सब्द सुइ मुक्ति पौ ॥ २ ॥
मैय उवनु सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, सुइ मैय सुयं जिन उवन मौ ।
अढल ढलनु जिन दिट्ठु, जिन दिट्ठु रे, जिन जिनय ढलन सुइ मुक्ति पौ ॥ ३ ॥
अवयास ढलनु सुइ नंतु, सुइ नंतु रे, मै उवनु उवनु जिनु समय मौ ।
सम समय समय सम उत्तु, सम उत्तु रे, उव उवनु समय सुइ मुक्ति पौ ॥ ४ ॥
इस्ट उवन इस्टंतु, इस्टंतु रे, उवन इस्ट इस्ट ममल पौ ।
जं दिष्टि दिस्टि इस्टंतु, इस्टंतु रे, उवन इस्टि उव मुक्ति पौ ॥ ५ ॥
इस्ट उवन दर्सतु, दर्सतु रे, इस्ट उवनु सुइ समय मौ ।
उवन इस्टि दर्सतु, दर्सतु रे, उव उवन दिस्टि सुइ मुक्ति पौ ॥ ६ ॥
इस्ट उवन रमनंतु, रमनंतु रे, उवन इस्टि इस्ट समय मौ ।
उव उवन रमन इस्टंतु, इस्टंतु रे, उव इस्ट रमन जिनु मुक्ति पौ ॥ ७ ॥

तत्काल रमनु जिन उत्तु, जिन उत्तु रे, दिप्पि दिस्टि जिन रमन पौ ।
जं तारागन अवयास, अवयास रे, दिस्टि दिप्पि सुइ रमन मौ ॥ ८ ॥
नंत दिप्पि सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, ऐय दिप्पि नंत छन्न मौ ।
तं इस्ट दिप्पि सुइ नंतु, सुइ नंतु रे, उव उवन दिप्पि नंत छन्न मौ ॥ ९ ॥
जं तारा चंद्र दिपिनंतु, दिपिनंतु रे, रतिहि सहावे दिप्पि मौ ।
जं सूर दिप्पि दिपिनंतु, दिपिनंतु रे, तार चन्द्र नंत छन्न सुई ॥ १० ॥
दिप्पि नंत दिपिनंतु, दिपिनंतु रे, रयन दिप्पि सुइ छन्न मौ ।
तं इस्ट दिप्पि दिपिनंतु, दिपिनंतु रे, दिप्पि चिंतामनि उवन मौ ॥ ११ ॥
जं नंत दिप्पि फल उत्तु, फल उत्तु रे, उवन रमन दिपि अमिय फलु ।
तं नंत पयह संसारू, संसारू रे, उवन पयह जिनु मुक्ति पौ ॥ १२ ॥
तत्काल रमन सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, जं सूर दिप्पि रति विलय मौ ।
कमल नंद पिउ उत्तु, पिउ उत्तु रे, दिस्टि दिप्पि सुइ रमन मौ ॥ १३ ॥
सहकार रमन सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, दिप्पि सहावे दिस्टि जिनु ।
उवन दिप्पि दिपियंतु, दिपियंतु रे, समय दिस्टि रमि मुक्ति पौ ॥ १४ ॥
दिप्पि दिपिय सुइ नंतु, सुइ नंतु रे, ऐय दिस्टि सुइ सम रमनु ।
तं समय दिप्पि सुइ नंतु, सुइ नंतु रे, उवन दिस्टि सम मुक्ति पौ ॥ १५ ॥
सब्द नंत सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, अवयास सब्द सुइ नंत मौ ।
तं समय सब्द पिउ नंतु, पिउ नंतु रे, उव उवन सब्द पिउ मुक्ति पौ ॥ १६ ॥
साह रमनु सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, आद सहावे उवनु उवनु ।
तं असम समय सहनंतु, सहनंतु रे, उवन साह सम मुक्ति पौ ॥ १७ ॥
जं अर्क नंत सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, उवन अर्क बिनु विलय पौ ।
तं असम समय सुइ नंतु, सुइ नंतु रे, उवन उवन बिनु सरनि पौ ॥ १८ ॥
जं उवन अर्क अवयास, अवयास रे, अर्क समय सुइ विलसियौ ।
तं उवन कमल अवयास, अवयास रे, कर्न समय सम मुक्ति पौ ॥ १९ ॥
जं अर्क समय सम उत्तु, सम उत्तु रे, कलन कलिय सुइ उवन पौ ।
जं चरन चरन सुइ उत्तु, सुइ उत्तु रे, तं उवन कलन सम मुक्ति पौ ॥ २० ॥
जं चरन कलन कलयंतु, कलयंतु रे, कलन कमल उव उवन पौ ।
उव उवन कर्नु साहंतु, साहंतु रे, सुवन कमल सम मुक्ति पौ ॥ २१ ॥
जं तारन तरन उवन्नु, उवन्नु रे, उवन समय सम पिऊ रमनु ।
तं उवन कमल कलयंतु, कलयंतु रे, उवन दिप्पि दिस्टि मुक्ति पौ ॥ २२ ॥
जं उवन श्रेनि जिन श्रेनि, जिन श्रेनि रे, कलन सहावे कलन मौ ।
जं तारन तरन जिनुत्तु, जिनुत्तु रे, तार कमल सम मुक्ति पौ ॥ २३ ॥

जं उवनु जिनय जिन उत्तु, जिन उत्तु रे, समय साह सम नंत मौ ।
भय विलय भेउ सिय भव्वु, सिय भव्वु रे, उवन समय भत्ति मुक्ति पौ ॥ २४ ॥
उव उवन साहि सम उत्तु, सम उत्तु रे, सम समय साह जिन जिनय पौ ।
उव उवन समय सम उत्तु, सम उत्तु रे, सिद्ध समय सम मुक्ति पौ ॥ २५ ॥

७. फाग फूलना (फूलना क्र.६६)

(विषय : अर्क छत्तीस)

जिन जिनयति जिनय जिनय पऊ, जिन जिनयति जिनय जिनेन्दु ।
उव उवन हिययार उवन पऊ , सहयार सिद्धि सम्पत्तु ॥ १ ॥
सिद्ध सरूव सुरति, तरन जिन षेलहि फागु ।
मुक्ति पंथु सुइ ऊ वने, सह समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ २ ॥

॥ आचरी ॥

अर्क सु अर्क सु अर्क, सुयं सुइ अर्क स उत्तु । सुयं सुइ अर्क ऊवने, अर्क विंद संजुत्तु ॥ ३ ॥ सिद्ध. ॥
इस्ट इस्ट भय विलयं, उवन भय उवन विलन्तु ।
अभय अभय सुइ ऊवने, भय सल्य संक विलयन्तु ॥ ४ ॥ सिद्ध..
अर्क विंद सुइ ऊवने, विंद अर्क सुइ उत्तु । विंद सुयं सुइ अर्क, अर्क सुइ विंद अनन्तु ॥ ५ ॥ सिद्ध..
नन्त विंद सुइ अर्क, अर्क सुइ सुन्न पउत्तु । सुन्न सुयं सुइ उत्तु, जिनय जिन नन्त अनन्तु ॥ ६ ॥ सिद्ध..
कमल अर्क सुइ अर्क, अर्क सुइ इस्ट पउत्तु । इस्ट अर्क इस्टंतु, उवन पऊ उवन स उत्तु ॥ ७ ॥ सिद्ध..
पदम कमल सुइ अर्क, अर्क जिन अर्क पउत्तु । विंद अर्क उववन्न, अर्क सुइ विंद अनन्तु ॥ ८ ॥ सिद्ध..
विंद अर्क सुइ ऊवने, कमल सब्द सुइ उत्तु । कमल विंद सुइ अर्क, अर्क जिन सब्द अनन्तु ॥ ९ ॥ सिद्ध
कमल अर्क सुइ ऊवने, केवल अर्क जिनुत्तु । केवल अर्क उवने, नन्त चतुस्टै पउत्तु ॥ १० ॥ सिद्ध..
नन्तानन्त सु अर्क, नन्त जिन नन्त जिनुत्तु । नन्तानन्त सुभाइ, अर्क जिनु अर्क जिनुत्तु ॥ ११ ॥ सिद्ध
अन्मोय अर्क सुइ ऊवने, जिन जिनयति जिनय जिनुत्तु ।
सरनि संक भय विलयं, मुक्ति पंथु दर्संतु ॥ १२ ॥ सिद्ध..
तारन तरन सहाइ, सहज जिन अर्क पउत्तु ।
अन्मोय दिस्टि सुइ ऊवने, सिहु समय सिद्धि सम्पत्तु ॥ १३ ॥ सिद्ध..

८. ठहकार फूलना (फूलना क्र.५९)

(विषय : पांच अर्थ, कर्म की उत्पत्ति- षिपति, अक्षर, स्वर, व्यंजन)

जिन जिनवर हो उत्तउ भवियन ममल सुभाए ।
जिन जिनियौ हो कम्मु अनन्तु जु धम्म सहाए ॥
धरि धरियौ हो झान ठान सो ममल सहाए ।
ठहकारे हो ममल न्यान सो मुक्ति सुभाए ॥ १ ॥

उप उपजिऊ हो भय विनासु ठहकार सुभाए ।
जिन वयन जु हो उपजिऊ स्वामी ममल सुभाए ॥
उप उपजिऊ हो कम्मु जु विलयौ धम्म सहाए ।
षिपि कम्मु जु हो मुक्ति संजोये न्यान सहाए ॥ २ ॥
उव उवनउ हो अर्थति अर्थह ममल सहाए ।
ठहकारे हो न्यान विन्यान सु धम्म सुभाये ॥
जह कम्मु जु हो उपजिऊ भवियन समल सहाए ।
जो कम्मु जु हो विलयौ स्वामी न्यान सहाए ॥ ३ ॥
जो चष्य अचष्यह उपजिऊ भवियन अन्यान सहाए ।
सो कम्मु जु हो विलयौ चेयन धम्म सुभाए ॥
जं जानु उपजिऊ समई ममल सहाए ।
तं न्यान अन्मोयह मिलियौ ममल सुभाए ॥ ४ ॥
जं न्यान विन्यान उवनऊ ममल सहाए ।
तं न्यान अनन्तु जु दर्सिउ धम्म सुभाए ॥
जं अष्यर सुर विंजन सहियौ ठहकार सहाए ।
तं दर्सिउ हो दर्सन दिट्ठि हि ममल सुभाए ॥ ५ ॥
पद दर्सिउ हो परम तत्तु परमप्प सहाए ।
विन्यानह हो दर्सिउ विन्दु जु धम्म सहाए ॥
पद अर्थ उवन्नऊ समई ठहकार सहाए ।
तं अर्थति अर्थह जोयो ममल सुभाए ॥ ६ ॥
सम अर्थ संजोए जोयो धम्म सहाए ।
परमर्थह पद अर्थह ठवियौ न्यान सुभाए ॥
कल लंकृत हो कम्मु जु उपजै समल सहाए ।
सो न्यान अन्मोयह विलयौ ममल सुभाए ॥ ७ ॥
निसंकह हो संक जु विलयौ धम्म सहाए ।
ठहकारे हो न्यान विन्यानह ममल सुभाए ॥
भय विनसिय हो भव्वु उवन्नउ ममल सुभाए ।
षिपि कम्मु जु हो मुक्ति पहुंतऊ ममल सुभाए ॥ ८ ॥

९. सेहरौ फूलना (फूलना क्र.५०)

(विषय : नंद-५, लब्धि-१, सिध्द की महिमा)

उव उवनऊ उवन उवन उवन मौ उवन पऊ ।
उव उवनऊ नन्तानन्तु अलष जिन नन्द मऊ ।
तं नन्द अनन्द सनन्द नन्द गम अगम रऊ ॥ १ ॥

न्यानीय न्यान उववन्न अगम जिन जिनय जिनेंद स सेहरौ ।
तं गम्य अगम्य अगम्य उवन्नु जिनय जिन सेहरौ ॥
तं गमियौ नन्तानन्तु ममल जिन सेहरौ ।
भय षिपनिक नन्द अनन्द चेयनन्द सेहरौ ॥
तं अमिय रमन रस रसिय सहज जिन सेहरौ ॥ २ ॥
जिनवर उत्तउ जिनय जिनेन्द जिनय जिन नन्द मऊ ।
तं लब्धि अलब्धि सलब्धि जिनय जिन जिनय सनंद पऊ ॥
तं न्यान स न्यान सु न्यान विन्यान ममल रस सुष्य रऊ ।
न्यानीय सुयं सुववन्न जिनय जिन जिनय जिनंद स सेहरौ ॥
गमऊ गम्य अगम्य उवनु जिनु जिनय जिन सेहरौ ॥ ३ ॥

॥ आचरी ॥

तं न्यान लब्धि सुइ लब्धि सुयं, सुव सुवन सुयं जिन न्यान पऊ ।
तं दर्सिउ नन्तानन्तु सहज जिन, लब्धि अलब्धि सुलब्धि मऊ ॥
तं दान सु दान सु न्यान सुयं, जिन जिनय जिनय जिनेंद रऊ ।
न्यानीय निलय तं निलय निलय, जिन जिनय जिनेंद स सेहरौ ॥ ४ ॥

॥ गमऊ गम ॥

तं लब्धि अलब्धि सु लब्धि लब्धि जिन,जिनय जिनेंद सनन्द सनन्द सनन्द मऊ।
तं भोय सु भोय अभोय भोय गुन, जिनय जिनेंद सनन्द सनन्द पऊ ॥
उवभोय सुभोय अभोय भोग रै, नन्द सनन्द जिन सेहरौ ।
न्यानीय सुनीय सुनीय सुयं, सुई सहज जिनेंद स सेहरौ ॥ ५ ॥

॥ गमऊ गम ॥

नन्त वीय सुइ लब्धि सु लब्धि, सुयं सुव वीय सु नंतानन्त पऊ ।
सम्मत्त सम्मत्त स उत्तु सु समय, सुयं जिन जिनय जिनेंद पऊ ॥
तं चरनह चरिय चरंतु, चरन जिन जिनय जिनेंद रऊ ।
न्यानीय सु निलय जिनेन्द, जिनय जिन सहज जिनेन्द स सेहरौ ॥ ६ ॥

॥ गमऊ गम. ॥

नो लब्धि उवंन उवंन सु, उवन उवन सु जिनय पऊ ।
तं लब्धि अनन्तानन्त सहज रुई, सहज जिनेन्द सनन्द पऊ ॥
सुइ नन्द सनन्द अनन्द सु नन्द, सु चेयननन्द सु समय मऊ ।
न्यानीय सु न्यान अनन्त ममल, जिन जिनय जिनेन्द स सेहरौ ॥ ७ ॥

॥ गमऊ गम. ॥

संजम सुइ संजमु सुवन सुवन, सुव संजम समय सु सुद्ध पऊ ।
संजम संजम सुनहु सुयं सुइ, सुद्ध स सुद्ध सु समय मऊ ॥

गति गम्य अगम्य अनन्त, सु सुद्ध सुयं सुइ ममल विन्यान स सेहरौ ।
न्यानीय सुनीय सुनीय, सुयं सुइ ममल विन्यान स सेहरौ ॥ ८ ॥
॥ गमऊ गम. ॥
कषाय अषाय कषाय जिनय, जिन जिनय जिनेन्द पऊ ।
तं लिंगु अलिंगु सु लिंगु, सुयं जिन लिंग स लिंग सु जिनय पऊ ॥
मिथ्यात सहाव सरूव सुयं,सुइ विलय सुयं जिन सुयं रऊ ।
न्यानीय निवासु अवयासु, सु नन्त सु नन्त सुयं जिन सेहरौ ॥ ९ ॥
॥ गमऊ गम. ॥
न्यानेन न्यान विन्यान सु न्यान सु न्यान, सु न्यान सु ममलु सु ममल पऊ ।
तं सिद्ध सरूव सरूव सुयं सुइ, रूव अरूव सु मुक्ति पऊ ॥
सुइ तारन तरन विवान, विवान समय सह सहइ रऊ ।
न्यानीय सुनीय सु निर्त, निलय जिन जिनय सिद्ध जिन सेहरौ ॥ १० ॥
॥ गमऊ गम. ॥

१०. कल्याणक फूलना (फूलना क्र.७४)

(विषय : कल्याणक पाँच)

(१)

जब जिनु गर्भवास अवतरियौ, ऊर्ध ध्यान मनु लायौ ।
दर्सन न्यान चरन तव यरियौ, उव उवन सिद्धि चितु लायौ ॥ १ ॥
अरी मै संमत्तु रयनु धरिये, जिहि रमन मुक्ति लहिये ।
अरी मै समय सरनि मिलिये, अरी मै जिन वयनु हिये धरिये ॥ २ ॥
अरी मै जिन उत्तु उत्तु धरिये, अरी मै जिन दर्स दर्स रसिये ।
अरी मै दिप्ति दिस्टि सिधिए, अरी मै जिन अर्थ अर्थ मिलिये ॥ ३ ॥
अरी मै अलष लष्य लषिये, अरी मै मुक्ति रमनि मिलिये ।
अरी मै संमत्तु रयनु धरिये, अरी मै तिअर्थ अर्थ मिलिये ॥ ४ ॥
अरी मै ममल भाव रहिये, अरी मै संमत्तु रयनु धरिये ।
अरी मै उवन न्यान मिलिये, अरी मै सम समय सुद्ध मिलिये ॥ ५ ॥
अरी मै न्यान रमन रमिये, अरी मै सिद्धि मुक्ति मिलिये ।
अरी मै संमत्तु रयनु धरिये, अरी मै सुयं मुक्ति मिलिये ॥ ६ ॥

(२)

जब जिनु उवन उवन सुइ उवने,उवन उवन चितु लायौ ।
उव उवन हिययार सहयार उवन पौ, उव उवनु मुक्ति दरसायौ ॥ ७ ॥

हां जिन उवन उवन मिलिये, जिहि उवन सिद्धि चलिये ।
हां जिन समय सरनि सरिये, जिहि उवन मुक्ति मिलिये ॥ ८ ॥
हां जिन ममल भाव रमिये, जिहि सहज सिद्धि चलिये ।
हां जिन समय समय मिलिये, जिहि रमन मुक्ति चलिये ॥ ९ ॥
हां जिन सहयार सहज मिलिये, सहयार कम्मु गलिये ।
हां जिन गुप्ति न्यान मिलिये, जिहि रमन मुक्ति मिलिये ॥ १० ॥
हां जिन षिपक भाव षिपिये, हां जिन विंद रमन रमिये ।
हां जिन कमल कलन मिलिये, जिहि मुक्ति रमन रमिये ॥ ११ ॥
अन्मोय तरन मिलिये, तं विंद कमल रमिये ।
अरी मै न्यान रमन रमिये, जिननाथ सिद्धि मिलिये ॥ १२ ॥
सम समय मुक्ति मिलिये, हां जिन उत्तु वयन धरिये ॥ १३ ॥

(३)

जब जिनु रयन रमन जिन उवने, अन्मोय न्यान चितु लायौ ।
तं दिप्ति दिस्टि पिऊसब्द रमन जिनु, सह समय मुक्ति सिहु पायौ ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ १४ ॥
तं तारन तरन समर्थु, अब मैं पाए हैं स्वामी, अर्क अर्क दर्संतु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ १५ ॥
तं अर्क विंद संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । अब परम अगम दर्संतु, अब मैं पाए हैं स्वामी ।
अब समउ न विहडै सोई, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ १६ ॥
उत्पन्न मुक्ति संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । तं विंद कमल संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥
उत्पन्न अर्क संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । अर्क अनन्तानन्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ १७ ॥

(४)

उत्पन्न रंजु भय षिपक रमन जिनु, नन्द नन्द सुइ पाए ।
हिययार रंजु तं अमिय रमन जिनु, आनन्द मुक्ति रमि पाए ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ १८ ॥
जिन जिनयति जिनय जिनेंदु, अब मैं पाए हैं स्वामी । अब समउ न विहडै सोइ, अब मैं पाए हैं..॥१९ ॥
नन्द अनन्द संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । अन्मोय न्यान संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २० ॥
अलषु लषु जिनदेउ, अब मैं पाए हैं स्वामी । अगम गमिऊ जिन नन्दु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २१ ॥
तं गुप्ति रमन जिन नन्दु, अब मैं पाए हैं स्वामी । उत्पन्न नन्त दर्संतु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २२ ॥
उववन्न मुक्ति संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । उववन्न कमल जिन रत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २३ ॥
कमल कमल रस उत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । तं विंद रमन संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २४ ॥
सहयार रंजु वैदिप्ति रमन जिनु, अगम अगम दिपि पाए ।
अगम अगोचर अलष रमन जिनु, तं सिद्धि रमन जिन राए ॥ २५ ॥
जिन जिनयति जिनय जिनुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । विंद कमल रस उत्तु, अब मैं पाए हैं...॥ २६ ॥
सुइ सोलहि संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । तित्थयर भाव उवलद्धु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २७ ॥
सुइ लष्यन कलस जिनुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । निधि दिप्ति रमन जिन उत्तु, अब मैं पाए हैं...॥ २८ ॥

अष्यर रंज सुइ उत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी। मुक्ति रमनि सिद्धि रत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ २९ ॥
सहयार रंजु वैदिप्ति रमन जिनु, चेयनन्द सुइ राए ।
विन्यान रंजु जिन रमन जिनय जिनु, सहजनन्द सुइ पाए ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३० ॥
तित्थयर उवन जिन उत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । तारन तरन समर्थु, अब मैं पाए हैं स्वामी ।
अब समउ न विहडै सोइ, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३१ ॥
विंद कमल सुइ रत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी । अगम अगम दर्संतु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३२ ॥
तरन विवान जिनय जिन उत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी। सुयं रमन जिन उत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी।
सहज सुयं दर्संतु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३३ ॥
जिन जिनय रंजु जिननाथ रमन जिनु, रमन मुक्ति सुइ राए।
परमनन्द तं परम रमन जिनु, तं सिद्धि मुक्ति सुइ पाए ॥ अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३४ ॥
तं विंद कमल सिद्धि रत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी। अर्क विंद संजुत्तु, अब मैं पाए हैं स्वामी ॥ ३५ ॥

(५)

विंद विन्यान रस रमनु जिनय जिनु पाए हैं, तरन विवान जिनय जिन उत्तु तरन जिनु पाए हैं।
अर्क विंद दर्संतु अलष जिनु पाए हैं ॥ ३६ ॥
सम समय सिद्धि सम्पत्तु रमन जिनु पाए हैं, भय सल्य संक विलयन्तु ममल जिनु पाए हैं।
अप्प परम दर्संतु सहज जिनु पाए हैं ॥ ३७ ॥
परम गुप्ति उत्पन्न केवली पाए हैं, अन्मोय न्यान सिद्धि रत्तु सुयं जिनु पाए हैं ।
तं विंद कमल सिद्धि रत्तु सिद्ध जिनु पाए हैं ॥ ३८ ॥
सुइ समय समय सिद्धि रत्तु समय जिनु पाए हैं, उववन्न नन्त दर्संतु दर्स जिनु पाए हैं ।
परम भाउ उवलब्धु लब्धि जिनु पाए हैं ॥ ३९ ॥
परम दर्स दर्संतु दर्स जिनु पाए हैं, जिननाथ रमन रै जुत्तु रमन जिनु पाए हैं ।
परम मुक्ति सिद्धि रत्तु नन्द जिनु पाए हैं ॥ ४० ॥
दिपि दिस्टि सब्द पिउ उत्तु सहज जिनु पाए हैं, विंद कमल रस अर्क समय जिनु पाए हैं ।
तारन तरन समर्थु तरन जिनु पाए हैं ॥ ४१ ॥
सिहु समय सिद्धि सम्पत्तु सिद्ध जिनु पाए हैं, अन्मोय नन्द आनन्द समय जिनु पाए हैं ।
सिहु समय सिद्धि सम्पत्तु तरन जिनु पाए हैं ॥ ४२ ॥

११. मुक्ति श्री फूलना (फूलना क्र.०२)

(विषय : औकास, ज्ञान स्वभाव में मुक्ति, ज्ञान स्वभाव की महिमा और उदय)

चलि चलहुन हो, मुक्ति सिरी तुम्ह न्यान सहाए। कल लंक्रित हो, कम्म न उपजै ममल सुभाए ॥
जिन जिनवर हो, उत्तो स्वामी परम सुभाए। मुनि मुनहु न हो, भवियनगन तुम्ह अप्प सहाए ॥ १ ॥
तुम्हरी अषय रमन रै नारी हो, न्यानी भौहौ भौंर विनट्ठी ।
मन हरषिय लो जिन तारन को, जब सब मुक्ति पहुंते हो न्यानी ॥ २ ॥

॥ आचरी ॥

सो मुनियो हो, उत्तउ जिनु हो ममल सुभाए । धरि धरियो हो, अर्थ तिअर्थह न्यान सहाए ॥
कलि कलियो हो, ममल दिस्टि यहु कमल सुभाए । रै रमियो हो, पंच दिप्ति यहु आद सहाए ॥ ३ ॥
॥ तुम्हरी ॥
उदि उदियो हो, इस्ट संजोगे परम सुभाए । दिपि दिपियो हो, परम जोति यहु अप्प सहाए ॥
लहि लहियो हो, अंगदि अंगह सुद्ध सुभाए । मै मइयो हो, अंग सर्वंगह ममल सहाए ॥ ४ ॥
॥ तुम्हरी ॥
रहि रहियो हो, सुष्यम सहियो ममल सुभाए । गहि गहियो हो, नन्तानन्त सु गगन सहाए ॥
उगि उगियो हो, ऊर्धह सुद्धह मुक्ति सुभाए । मल रहियो हो, ममल बुद्धि यहु षिपक सहाए ॥ ५ ॥
॥ तुम्हरी ॥
उव उवनो हो, दिस्टि देइ सो देव सुभाए । सहकारे हो, देइ अनन्तु जु अन्मोय सुभाए ॥
दर दरसिउ हो, देइ सु दर्सन न्यान सहाए । औकासह हो, उपजै न्यानु सु रयन सुभाए ॥ ६ ॥
॥तुम्हरी ॥
गुरु गुरुवति हो, लोयालोय सु ममल सुभाए । गुरु गुपित सु हो, दिट्ठउ दीन्हउ चरन सहाए ॥
चरि चरियो हो, ममल दिस्टि यहु अप्प सुभाए । तव यरियो हो, सहकारे जिनु सहज सुभाए ॥ ७ ॥
॥ तुम्हरी ॥
उप उपजै हो, कम्मु अनन्तु अनिस्ट सुभाए । षिपि षिपियो हो, न्यान दिस्टि यहु ममल सहाए ॥
नंद नंदियो हो, चिदानन्द जिनु कमल सुभाए । आनन्दिउ हो, परम नन्द सु मुक्ति सहाए ॥ ८ ॥
॥ तुम्हरी ॥
यहु जानहु हो, भय विनासु सु भव्व सुभाए । पर परजय हो, दिस्टि न देइ सु ममल सुभाए ॥
अन्मोयह हो, मिलियो जोति सु रयन सहाए । षिपि कम्मु जु हो, मुक्ति पहुंते ममल सहाए ॥ ९ ॥
॥ तुम्हरी ॥
दिपि दिपियो हो, देउ लंक्रित सो अन्मोय सहाए । भय षिपनिक हो, मिलियो रमियो षिपक सुभाए ॥
आनन्दिउ हो, परमानन्द यहु परम सुभाए । अन्मोयह हो, मिलियो जोति सु सिद्ध सुभाए ॥१०॥
॥ तुम्हरी ॥

१२. स न्यानी मुक्ति पऊ फूलना (फूलना क्र.५३)

(विषय : लक्षण परिणाम)

उववंन उवन ममलं, तं न्यान रमन सुरयं । स न्यानी मुक्ति पऊ ॥ १ ॥
जिननाथ रमन मिलनं, तं अमिय कमल रमनं । स न्यानी मुक्ति पऊ ॥
भय षिपिय मुक्ति मिलनं, स न्यानी मुक्ति पऊ ॥ २ ॥ आचरी ॥
उवंकार ऊर्ध गमनं, विन्यान विंद ममलं ॥ ३ ॥ स न्यानी ॥
तं विंद सहज सुरयं, तं नन्त कम्मु विलयं ॥ ४ ॥ स न्यानी ॥
उववन्न कमल सुरयं, सिरी कमल सिद्धि रमनं ॥ ५ ॥ स न्यानी ॥

तं कमल कंद भवनं, परिनामु नन्त ममलं ॥ ६ ॥ स न्यानी ॥
सौ एक अट्ठ उवनं, तं कन्द सहज मिलनं ॥ ७ ॥ स न्यानी ॥
तं अग्र कमल कलनं, चौसठि चरन मिलनं ॥ ८ ॥ स न्यानी ॥
परिनामु अलष्य लषियं, तं तिविहि कम्मु षिपियं ॥ ९ ॥ स न्यानी ॥
सिरी नन्द नन्द सुरयं, तं सहजनन्द रमनं ॥ १० ॥ स न्यानी ॥
पर परमनन्द जिनुत्तं, तं सिद्धि मुक्ति विलसं ॥ ११ ॥ स न्यानी ॥

१३. जयना ले फूलना (फूलना क्र.१५३)

(विषय : जिन स्वभाव की महिमा, जिनेन्द्र स्वभाव को प्रगटाने का पुरुषार्थ)

जय जयना ले, जय जयो जिनेंद जयना ले । उव उवन समय जिनु परमानंद, जयना ले ॥
कलि कलन कलिय सुइ कमल जिनेंद, जयना ले । कलि कमल उवन सुइ जिनय जिनेंद, जयना ले ॥१॥
जयना ले जिन जिनवर राउ, जयना ले । मुक्ति रमन सम समय सहाउ, जयना ले ॥ २ ॥
॥ आचरी ॥
चरना ले चर चरन सहाउ, चरना ले । चरन कमल धुव उवन सुभाउ, चरना ले ॥
कमल उवन धुव उवन सुभाउ, धुवना ले । धुव उवन कमल सम कर्न सहाउ, धुवना ले ॥ ३ ॥
॥ जय ॥
सम समय समय सम सुवन सहाउ, सुवना ले । सुव सुवन समय सम हियन सुभाउ, हियना ले ॥
हिय उवन उवन हुव उवन सहाउ, हियना ले । हुव हुवन हुवन अवयास सुभाउ, हुवना ले ॥ ४ ॥
॥ जय ॥

१४. सुन्न उवन फूलना (फूलना क्र.१६२)

(विषय : जिन स्वभाव की महिमा, जिनेन्द्र स्वभाव को प्रगटाने का पुरुषार्थ)

उव उवन विंद विंद विंद जिनु होई, सुइ विंद सुन्न सुन्न विंद समेई ॥ १ ॥
समय उवन जिनवर बंध विलेई, कमल कलन जिन जिनवर सोई ॥ २ ॥ आचरी ॥
उवन उवन सुन्न सुन्न सुन्न जिन होई, सुइ सुन्न उवन जिन सुन्न समेई ॥ ३ ॥
॥ समय ॥
सुइ सुन्न समय सुइ सुन्न विंद सोई, सुइ विंद सुन्न सम जिनवर होई ॥ ४ ॥
॥ समय ॥
जिन नंत सुन्न सुइ नंत विंद सोई, सुइ नंत नंत सुन्न विंद समेई ॥ ५ ॥
॥ समय ॥
सुइ श्रेनि विंद सुन्न कलन जिन होई, सुइ कलन सुन्न जिन सुन्न समेई ॥ ६ ॥
॥ समय ॥
सुइ कलन श्रेनि जिन कलन समेई, सुइ तार कमल जिन जिनवर सोई ॥ ७ ॥
॥ समय ॥

ग्यारह नमस्कार

१ – देव को नमस्कार

तत्वं च नन्द आनन्द मऊ, चेयननन्द सहाउ ।
परम तत्व पद विंद पउ, नमियो सिद्ध सुभाउ ॥

२ – गुरु को नमस्कार

गुरु उवएसिउ गुपित रुइ, गुपित न्यान सहकार ।
तारन तरन समर्थ मुनि, गुरु संसार निवार ॥

३ – धर्म को नमस्कार

धम्मु जु उत्तउ जिनवरहं, अर्थतिअर्थह जोउ ।
भय विनासु भवु जु मुनहु, ममल न्यान परलोउ ॥

४ – श्री मालारोहण जी को नमस्कार

उवंकार वेदंति सुद्धात्म तत्त्वं, प्रनमामि नित्यं तत्वार्थ सार्धं ।
न्यानं मयं संमिक दर्सनेत्वं, संमिक्त चरनं चैतन्य रूपं ॥

५ – श्री पंडित पूजा जी को नमस्कार

उवंकारस्य ऊर्धस्य, ऊर्ध सद्भाव सास्वतं ।
विंद स्थानेन तिस्टन्ते, न्यानं मयं सास्वतं धुवं ॥

६ – श्री कमल बत्तीसी जी को नमस्कार

तत्वं च परम तत्वं, परमप्पा परम भाव दरसीये ।
परम जिनं परमिस्टी, नमामिहं परम देवदेवस्य ॥

७ – श्री श्रावकाचार जी को नमस्कार

देव देवं नमस्कृतं, लोकालोक प्रकासकं ।
त्रिलोकं भुवनार्थं जोति, उवंकारं च विन्दते ॥

८ – श्री ज्ञानसमुच्चयसार जी को नमस्कार

परमानंद परं जोतिः, चिदानंद जिनात्मनं ।
सुयं रूपं समं सुद्धं, विन्दस्थाने नमस्कृतं ॥

९ – श्री उपदेश शुद्ध सार जी को नमस्कार

अप्पानं सुद्धप्पानं, परमप्पा विमल निम्मलं सरूवं ।
सिद्ध सरूवं पिच्छदि, नमामिहं परम देवदेवस्य ॥

१० – श्री त्रिभंगीसार जी को नमस्कार

नमस्कृतं महावीरं, भवोद्भय विनासनं ।
त्रिभंगी दलं प्रोक्तं च, आस्रव निरोध कारनं ॥

११ – श्री चौबीसठाणा जी को नमस्कार

उवं उवन उवन विंद विंद भवनं, विन्यानं विनयं सुयं ।
उत्पन्नं नंतानंत सुयं च सुरयं, सुद्धं च सुद्धात्मनं ।।
उवनं उवन सुभाव मनस्य ममलं, मै मूर्ति न्यानं धुवं ।
लोकालोक सुयं सुरं च सुरयं, सुन्नं सहावं सुरं ।।

इष्ट वन्दना

देव देवं नमस्कृतं, लोकालोक प्रकासकं ।
त्रिलोकं भुवनार्थं जोति, उवंकारं च विन्दते ।। १ ।।
उवं ह्रियं श्रियं चिन्ते, सुद्ध सद्भाव पूरितं ।
संपूर्नं सुयं रूपं, रूपातीत विंद संजुतं ।। २ ।।
नमामि सततं भक्तं, अनादि आदि सुद्धये ।
प्रतिपूर्नं तिअर्थं सुद्धं, पंचदिप्ति नमामिहं ।। ३ ।।
परमिस्टी परंजोति, आचरनं नंत चतुस्टयं ।
न्यानं पंच मयं सुद्धं, देव देवं नमामिहं ।। ४ ।।
अनंत दर्सनं न्यानं, वीर्जं नंत अमूर्तयं ।
विस्व लोकं सुयं रूपं, नमामिहं धुव सास्वतं ।। ५ ।।
नमस्कृतं महावीरं, केवलं दिस्टि दिस्टितं ।
विक्त रूपं अरूपं च, सिद्ध सिद्धं नमामिहं ।। ६ ।।
केवली नंत रूपी च, सिद्ध चक्र गनं नमः ।
बोच्छामि त्रिविधि पात्रं च, केवल दिस्टि जिनागमं ।। ७ ।।
साधऊ साधु लोकेन, ग्रंथ चेल विमुक्तयं ।
रत्नत्रयं मयं सुद्धं, लोकालोकेन लोकितं ।। ८ ।।
संमिक्तं सुद्ध धुवं दिस्टा, सुद्ध तत्त्व प्रकासकं ।
ध्यानं च धर्म सुकलं च, न्यानेन न्यान लंकृतं ।। ९ ।।
आरति रौद्र परित्याजं, मिथ्या त्रिति न दिस्टिते ।
सुद्ध धर्म प्रकासी भूतं, गुरं त्रैलोक वंदितं ।। १० ।।
सरस्वती सास्वती दिस्टं, कमलासने कंठ स्थितं ।
उवं ह्रियं श्रियं सुद्धं, तिअर्थं प्रति पूर्नितं ।। ११ ।।
कुन्यानं त्रि विनिर्मुक्तं, मिथ्या छाया न दिस्टते ।
सर्वन्यं मुष वानी च, बुद्धि प्रकास सास्वती नमः ।। १२ ।।
कुन्यानं तिमिरं पूर्नं, अंजनं न्यान भेषजं ।
केवल दिस्टि सुभावं च, जिन कंठं सास्वती नमः ।। १३ ।।
देवं गुरं श्रुतं वन्दे, न्यानेन न्यान लंकृतं ।
बोच्छामि श्रावगाचारं, अविरतं संमिक दिस्टितं ।। १४ ।।

१. देव वन्दना

सब घातिया का घात कर, निज लीन हुई जो आत्मा ।
परिपूर्ण ज्ञानी वीतरागी, वह सकल परमात्मा ।।
जिनराज हैं वह जिन्हें आती, कभी पर की गंध ना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वंदना ।। १ ।।

जिनवर वही प्रभु हैं वही, जो राग द्वेष विहीन हैं ।
कहते जिनेश्वर उन्हीं को, निज रूप में जो लीन हैं ।।
निर्दोष निष्कषाय जिनको, है करम का बन्ध ना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। २ ।।

सब घाति और अघाति आठों, कर्म जिनने क्षय किये ।
सम्यक्त्व दर्शन ज्ञान मय जिन, सर्वगुण प्रगटा लिये ।।
वे सिद्ध परमातम प्रभु, स्व तत्व मय जहां द्वन्द ना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ३ ।।

हैं सिद्ध सर्व विशुद्ध निर्मल, तत्व मय जिनकी दशा ।
जो हैं सदा विज्ञान घन, अमृत रसायन मय दशा ।।
ऐसे निकल परमात्म जिन, परिणति हुई निरंजना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ४ ।।

अरिहन्त हैं सर्वज्ञ चिन्मय, वीतराग जिनेश हैं ।
लोकाग्रवासी सिद्ध जो, नित निरंजन परमेश हैं ।।
यह देव हैं जिनका रहा, पर से कोई सम्बन्ध ना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ५ ।।

अरिहंत सिद्धादि कहे, व्यवहार से सत देव हैं ।
परमार्थ सच्चा देव, निज शुद्धात्मा स्वयमेव है ।।
चैतन्य मय शुद्धात्मा में, राग का है रंग ना ।
चेतनमयी सतदेव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ६ ।।

इस देह देवालय बसे, शुद्धात्मा को जान लो ।
चेतन त्रिलोकी भूप, सच्चा देव यह पहिचान लो ।।
अरिहंत सम निज आत्मा, जहां योग की निस्पंदना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ७ ।।

जग मांहि सच्चे देव को तो, कोई विरले जानते ।
जो भेद ज्ञानी हैं वही, निज रूप को पहिचानते ।।
सिद्धों सदृश निज आत्मा, जहां कर्म का है संग ना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ८ ।।

सत देव के शुभ नाम पर, जो अदेवों को पूजते ।
वे मूढ़ रवि का उजाला तज, अंधेरे से जूझते ।।
वह धर्म बह्वल बंधी बेड़ी, कह रही थी चन्दना ।
चेतनमयी सत देव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ९ ।।

जग जीव लौकिक स्वार्थ वश, तो कुदेवों को मानते ।
अज्ञान भ्रम को बढ़ाते, चलनी से पानी छानते ।।
जग जीव खुद के साथ ही, इस विधि करें प्रवंचना ।
चेतनमयी सतदेव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। १० ।।

सद्गुरू तारण-तरण कहते, जाग जाओ तुम स्वयं ।
शुद्धात्मा को जानकर, सब मेट दो अज्ञान भ्रम ।।
सत देव ब्रह्मानंद मय, कर दे जगत की भंजना ।
चेतनमयी सतदेव की, शत शत करूं मैं वन्दना ।। ११ ।।

जयमाल

निज चैतन्य स्वरूप में, पर का नहीं प्रवेश ।
चिन्मय सत्ता का धनी, है सच्चा परमेश ।। १ ।।

अरस अरूपी है सदा, शुद्धातम ध्रुव धाम ।
निश्चय आतम देव को, शत शत करूं प्रणाम ।। २ ।।

अरिहन्त सिद्ध व्यवहार से, जानो सच्चे देव ।
निश्चय सच्चा देव है, शुद्धातम स्वयमेव ।। ३ ।।

वीतराग देवत्व पर, चेतन का अधिकार ।
सिद्ध स्वरूपी आत्मा, स्वयं समय का सार ।। ४ ।।

दर्शन ज्ञान अनन्त मय, वीरज सौख्य निधान ।
पहिचानो निज रूप को, पाओ पद निर्वाण ।। ५ ।।

अट्ठसट्ठ तीरथ परिभमइ, मूढ़ा मरइ भमंतु ।
अप्पा देउ ण वंदहि, घट महिं देव अणंदु - आणंदा रे ।।

अज्ञानी अड़सठ तीर्थों की यात्रा करता है, इधर-उधर भटकता हुआ अपना जीवन समाप्त कर देता है किन्तु निजात्मा शुद्धात्मा भगवान की वंदना नहीं करता है। अपने ही घट में महान आनंदशाली देव है। हे आनंद को प्राप्त करने वाले ! अपने ही घट में महान आनंद शाली देव है।
(श्री महानंदि देव कृत आणंदा गाथा - ३)

२. गुरू स्तुति

अनुभूति में अपनी जिन्होंने, आत्म दर्शन कर लिया ।
समकित रवि को व्यक्त कर, मिथ्यात्व का तम क्षय किया ।।
रागादि रिपुओं पर विजय पा, कर दिये सबको शमन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। १ ।।

जिनके अचल सद्ज्ञान में, दिखता सतत् निज आत्मा ।
वे जानते हैं जगत में, हर आत्मा परमात्मा ।।
जो ज्ञान चारित लीन रहते, हैं सदा विज्ञान घन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। २ ।।

जिनको नहीं संसार की, अरू देह की कुछ वासना ।
जो विरत हैं नित भोग से, पर की जिन्हें है आस ना ।।
निर्ग्रन्थ तन इसलिये दिखता, है सदा निर्ग्रन्थ मन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ३ ।।

परित्याग जिनने कर दिया, दुर्ध्यान आरत रौद्र का ।
शुभ धर्म शुक्ल निहारते, धर ध्यान चिन्मय भद्र का ।।
जग जीव को सन्मार्ग दाता, इस तरह ज्यों रवि गगन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ४ ।।

उपवन का माली जिस तरह, पौधों में जल को सिंचता ।
मिट्टी को गीली आर्द्र कर, वह स्वच्छ जल को किंचता ।।
त्यों श्री गुरू उपदेश दे, सबको करें आतम मगन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ५ ।।

जो ज्ञान ध्यान तपस्विता मय, ग्रन्थ चेल विमुक्त हैं ।
निर्ग्रन्थ हैं निश्चेल हैं, सब बन्धनों से मुक्त हैं ।।
संस्कार जाति देह में, जिनका कभी जाता न मन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ६ ।।

जो नाम अथवा काम वश, या अहं पूर्ति के लिये ।
धरते हैं केवल द्रव्यलिंग, वह पेट भरने के लिये ।।
ऐसे कुगुरू को दूर से तज, चलो ज्ञानी गुरू शरण ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ७ ।।

सर्प अग्नि जल निमित से, एक ही भव जाय है ।
लेकिन कुगुरू की शरण से, भव भव महा दु:ख पाय है ।।
काष्ठ नौका सम सुगुरू हैं, ज्ञान रवि तारण तरण ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ।। ८ ।।

जग मांहि जितने भी कुगुरू, सब उपल नाव समान हैं ।
भव सिंधु में डूबें डुबायें, जिन्हें भ्रम कुज्ञान है ॥
पर भावलिंगी सन्त करते, ज्ञान मय नित जागरण ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ॥ ९ ॥

निस्पृह अकिंचन नित रहें, वे हैं सुगुरू व्यवहार से ।
है अन्तरात्मा सद्गुरू, परमार्थ के निरधार से ॥
निज अन्तरात्मा है सदा, चैतन्य ज्योति निरावरण ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ॥ १० ॥

निज अन्तरात्मा को जगालो, भेदज्ञान विधान से ।
भय भ्रम सभी मिट जायेंगे, सद्गुरू सम्यक्ज्ञान से ॥
वह करे ब्रह्मानन्द मय, मिट जायेगा आवागमन ।
उन वीतरागी सद्गुरू को, नित नमन है नित नमन ॥ ११ ॥

जयमाल

चेतन अरू पर द्रव्य का, है अनादि संयोग ।
सद्गुरू के परिचय बिना, मिटे न भव का रोग ॥ १ ॥

आतम अनुभव के बिना, यह बहिरातम जीव ।
सद्गुरू से होकर विमुख, जग में फिरे सदीव ॥ २ ॥

भेद ज्ञान कर जान लो, निज शुद्धातम रूप ।
पर पुद्गल से भिन्न मैं, अविनाशी चिद्रूप ॥ ३ ॥

गुरू ज्ञान दीपक दिया, हुआ स्वयं का ज्ञान ।
चिदानन्द मय आत्मा, मैं हूँ सिद्ध समान ॥ ४ ॥

ज्ञाता रहना ज्ञान मय, यही समय का सार ।
सद्गुरू की यह देशना, करती भव से पार ॥ ५ ॥

सद्गुरु की प्राप्ति दुर्लभ

जीवों को सर्वज्ञ द्वारा भाषित वीतरागी धर्म प्राप्त करना दुर्लभ है, मनुष्य जन्म प्राप्त होना दुर्लभ है, परन्तु मनुष्य जन्म मिलने पर भी अंतरात्मा एवं वीतरागी सद्गुरू रूप सामग्री प्राप्त होना अत्यंत दुर्लभ है।

३. जिनवाणी का सार

श्री जिनवर सर्वज्ञ प्रभु, परिपूर्ण ज्ञान मय लीन रहें ।
दिव्य ध्वनि खिरती फिर, ज्ञानी गणधर ग्रंथ विभाग करें ।।
जिससे निर्मित होता, श्रुत का, द्वादशांग भंडार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। १ ।।

पूर्वापर का विरोध होता, किंचित् न जिनवाणी में ।
वस्तु स्वरूप यथार्थ प्रकाशित, करती जग के प्राणी में ।।
निज पर को पहिचानो चेतन, यही मुक्ति का द्वार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। २ ।।

जिनवाणी मां सदा जगाती, ज्ञायक स्वयं महान हो ।
अपने को क्यों भूल रहे, तुम स्वयं सिद्ध भगवान हो ।।
देखो अपना ध्रुव स्वभाव, पर पर्यायों के पार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ३ ।।

द्वादशांग का सार यही, मैं आतम ही परमातम हूँ ।
शरीरादि सब पर यह न्यारा, पूर्ण स्वयं शुद्धातम हूँ ।।
ध्रुव चैतन्य स्वभाव सदा ही, अविनाशी अविकार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ४ ।।

बाह्य द्रव्य श्रुत जिनवाणी, कहलाती है व्यवहार से ।
स्वयं सुबुद्धि है जिनवाणी, निश्चय के निरधार से ।।
मुक्त सदा त्रय कुज्ञानों से, जहां न कर्म विकार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ५ ।।

कण्ठ कमल आसन पर शोभित, बुद्धि प्रकाशित रहती है ।
पावन ज्ञानमयी श्रुत गंगा, सदा हृदय में बहती है ।।
शुद्ध भाव श्रुत मय जिनवाणी, मुक्ति का आधार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ६ ।।

हे मां तव सुत कुन्द कुन्द, गुरू तारण तरण महान हैं ।
ज्ञानी जन निज आत्म ध्यान धर, पाते पद निर्वाण हैं ।।
आश्रय लो श्रुत ज्ञान भाव का, हो जाओ भव पार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ७ ।।

जड़ चेतन दोनों हैं न्यारे, यह जिनवर संदेश है ।
तन में रहता भी निज आतम, ज्ञान मयी परमेश है ।।
तत्व सार तो इतना ही है, अन्य कथन विस्तार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ८ ।।

मिथ्या बुद्धि का तम हरने, ज्ञान रवि हो सरस्वती ।
सम्यक्ज्ञान करा दो मुझको, सुन लो अब मेरी विनती ।।
अनेकान्त का सार समझ कर, हो जाऊं भव पार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ९ ।।

स्याद्वाद की गंगा से, कुज्ञान मैल धुल जाता है ।
ज्ञानी सम्यक् मति श्रुत बल से, केवल रवि प्रगटाता है ।।
आत्म ज्ञान ही उपादेय है, बाकी जगत असार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। १० ।।

भव दु:ख से भयभीत भविक जन, शरण तिहारी आते हैं ।
स्वयं ज्ञान मय होकर वे, भव सिन्धु से तर जाते हैं ।।
आत्म ज्ञान मय जिन वचनों की, महिमा अपरम्पार है ।
स्वानुभूति ही सच्ची पूजा, जिनवाणी का सार है ।। ११ ।।

जयमाल

वीतराग जिन प्रभु का, यह सन्देश महान ।
चिदानन्द चैतन्य तुम, शाश्वत सिद्ध समान ।। १ ।।

द्वादशांग मय जिन वचन, श्रुत महान विस्तार ।
जीव जुदा पुद्गल जुदा, जिनवाणी का सार ।। २ ।।

करो सुबुद्धि जागरण, सम्यक् मति श्रुत ज्ञान ।
निश्चय जिनवाणी कही, तारण तरण महान ।। ३ ।।

जिनवाणी की वन्दना, करूं त्रियोग सम्हार ।
ब्रह्मानंद में लीन हो, हो जाऊं भव पार ।। ४ ।।

करो साधना ध्रौव्य की, बढ़े ज्ञान से ज्ञान ।
ज्ञान मयी पूजा यही, पाओ पद निर्वाण ।। ५ ।।

जिन वचनों की महिमा

वीतरागी जिनेन्द्र परमात्मा के द्वारा जो अर्थ रूप से उपदिष्ट है तथा गणधरों के द्वारा सूत्र रूप से गुंथित है। स्व पर का बोध कराने वाले ऐसे श्रुतज्ञान रूपी महान सिन्धु को मैं भक्ति पूर्वक प्रणाम करता हूँ।

४. धर्म का स्वरूप

चेतन अचेतन द्रव्य का, संयोग यह संसार है ।
निश्चय सु दृष्टि से निहारो, आत्मा अविकार है ।।
रागादि से निर्लिप्त ध्रुव का, करो सत्श्रद्धान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। १ ।।

आतम अनातम की परख ही, जगत में सत धर्म है ।
इस धर्म का आश्रय गहो, तब ही मिले शिव शर्म है ।।
जिनवर प्रभु कहते सदा ही, भेदज्ञान महान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। २ ।।

जितनी शुभाशुभ क्रियायें, सब हेतु हैं भव भ्रमण की ।
यह देशना है वीतरागी, गुरू तारण तरण की ।।
निज में रहो ध्रुव को गहो, धर लो निजातम ध्यान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ३ ।।

चिन्मयी शुद्ध स्वभाव में, जो भविक जन लवलीन हों ।
वे अन्तरात्मा शुद्ध दृष्टि, सब दुखों से हीन हों ।।
पल में स्वयं वे प्राप्त करते, ज्ञान मय निर्वाण हैं ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ४ ।।

जिसमें ठहरता न कभी, शुभ अशुभ राग विकार है ।
वह भेद से भ्रम से परे, पर्याय के भी पार है ।।
जो है वही सो है वही, निज स्वानुभूति प्रमाण है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ५ ।।

सब जगत कहता है, अहिंसा परम धर्म महान है ।
निश्चय अहिंसा का परंतु, किसी को न ज्ञान है ।।
शुभ क्रियाओं को धर्म माने, यही भ्रम अज्ञान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ६ ।।

जग तो क्रिया के अंधेरे में, कैद करके धर्म को ।
भूला स्वयं की चेतना, नित बांधता है कर्म को ।।
विपरीत दृष्टि में न होता, कभी निज कल्याण है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ७ ।।

मठ में रहो लुंचन करो, पढ़ लो बहुत पीछी धरो ।
पर धर्म किंचित् नहीं होगा, और न भव से तरो ।।
सब राग द्वेष विकल्प तज, ध्रुव की करो पहिचान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ।। ८ ।।

निज को स्वयं निज जान लो, पर को पराया मान लो ।
यह भेदज्ञान जहान में, निज धर्म है पहिचान लो ॥
इससे प्रगटता आत्मा में, अचल केवलज्ञान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ॥ ९ ॥

है धर्म वस्तु स्वभाव सच्चा, जिन प्रभु ने यह कहा ।
हर द्रव्य अपने स्व चतुष्टय में, सदा ही बस रहा ॥
आतम सदा ज्योतिर्मयी, परिपूर्ण सिद्ध समान है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ॥ १० ॥

आनंद मय रहना सदा, बस यही सच्चा धर्म है ।
इस धर्म शुद्ध स्वभाव से, निर्जरित हों सब कर्म हैं ॥
रत रहो ब्रह्मानंद में, पाओ परम निर्वाण है ।
सत धर्म शुद्ध स्वभाव अपना, चेतना गुणवान है ॥ ११ ॥

जयमाल

वीतरागता धर्म है, सब शास्त्रों का सार ।
लीन रहो निज में स्वयं, समझाते गुरू तार ॥ १ ॥

सत्य धर्म शिव पंथ है, निर्विकल्प निज भान ।
भेद ज्ञान कर जान लो, चेतन तत्व महान ॥ २ ॥

कथनी करनी एक हो, तभी मिले शिव धाम ।
संयम तप मय हो सदा, ज्ञायक आतम राम ॥ ३ ॥

धर्म - धर्म कहते सभी, करते रहते कर्म ।
अपने को जाने बिना, होता कभी न धर्म ॥ ४ ॥

निज पर की पहिचान कर, धर लो आतम ध्यान ।
इसी धर्म पथ पर चलो, पाओ पद निर्वाण ॥ ५ ॥

धर्म की महिमा

धर्म आत्मा का शुद्ध स्वभाव, वस्तु स्वभाव है, धर्म किसी शुभ-अशुभ क्रिया काण्ड में नहीं होता। शुभ - अशुभ क्रियायें पुण्य-पाप बंध की कारण हैं। धर्म तो निर्विकल्पता शुद्धात्मानुभूति है, यही सत्य धर्म है जो आत्मा के समस्त दु:खों का अभाव कर परमात्म पद प्राप्त कराने वाला है। ऐसा महान सत्य धर्म अंतर आत्मानुभूति में सदा जयवंत हो।

श्री महावीराष्टक स्तोत्र

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः ।
समं भांति ध्रौव्य व्यय जनिलसंतोन्तरहिताः ॥
जगत्साक्षी मार्ग प्रकटन परो भानुरिव यो ।
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ १ ॥
आताम्रं यच्चक्षुः कमल युगलं स्पन्द रहितं ।
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ॥
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ २ ॥
नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि भाजालजटिलं ।
लसत्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ॥
भवज्ज्वालाशान्तयै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ३ ॥
यदर्च्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह ।
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगण समृद्धः सुख निधिः ॥
लभंते सद्भक्ताः शिवसुख समाजं किमु तदा ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ४ ॥
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत तनुर्ज्ञान निवहो ।
विचित्रात्माप्येको नृपतिवर सिद्धार्थ तनयः ॥
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोऽद्भुत् गतिर् ।
महावीर स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ५ ॥
यदीया वाग्गङ्गा विविध नय कल्लोल विमला ।
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ६ ॥
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः ।
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ॥
स्फुरन् नित्यानन्द प्रशम पद राज्याय स जिनः ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ७ ॥
महामोहातङ्क प्रशमन पराकस्मिकभिषग् ।
निरापेक्षो बन्धुर्विदित महिमा मङ्गलकरः ॥
शरण्यः साधूनां भव भयभृतामुत्तमगुणो ।
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ ८ ॥

श्लोक –

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।
यः पठेच्छ्रुणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम् ।। ९ ।।

श्री गुरु तारण स्तोत्र

शुद्धचिद्रूप तत्वज्ञं, मोक्षमार्ग प्रदर्शकम् ।
भक्त्याहं मण्डलाचार्यं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। १ ।।
धन्या वीर श्री माता, वीर माता महासती ।
धन्योऽसि त्वं गढ़ाशाह, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। २ ।।
मार्ग शीर्षोत्तमे मासे, सु नक्षत्रे सुमंगले ।
सप्तम्यां शुक्ल पक्षे च, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ३ ।।
जन्मभूरति रम्या सा, नगरी च पुष्पावती ।
गुरु जन्मोत्सवं यत्र , वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ४ ।।
पूर्व जन्मार्जितं ज्ञानं, संस्कारेणात्र जन्मनि ।
बाल्यकालादति प्राज्ञं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ५ ।।
पूर्ण जीवनवृत्तान्तं, नैव जानामि सज्जन् ।
परम्परानुसारेण, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ६ ।।
श्रूयते श्री गुरोर्दीक्षा, वनं सेमरखेड़िकम् ।
ज्ञानध्यानतपोयुक्तं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ७ ।।
निसही क्षेत्र मध्ये च, वेतवा निकटे खलु ।
अन्ते समाधि सम्प्राप्तं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ८ ।।
आत्म तत्व रहस्यज्ञं, महामान्यं जगद्गुरुम् ।
प्रचण्ड धर्मसूरिं तं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। ९ ।।
जयसेन कृतं स्तोत्रं, श्रुत्वा स्वामिन् ददातु मे ।
शांतिं शांतिं सदा शांतिं, वन्दे श्री गुरु तारणम् ।। १० ।।

सतत् प्रणाम

आत्म तत्त्व के जो ज्ञाता थे ध्रुव स्वभाव था जिनका धाम ।
निश्चय नय के वे पथगामी तारण था जिनका शुभ नाम ।।
जिनकी वाणी से झरता था ज्ञान भरा अमृत अविराम ।
ऐसे तपसी महा मनीषी को है मेरा सतत् प्रणाम ।।

श्री दशलक्षण धर्म आराधन

सोरठा

पीडैं दुष्ट अनेक, बांध मार बहुविधि करैं ।
धरिये क्षमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ।।

चौपाई मिश्रित गीता छंद

उत्तम क्षमा गहो रे भाई, इह भव जस पर भव सुखदाई ।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो ।।
कहि है अयानो वस्तु छीने, बांध मार बहुविधि करैं ।
घरतैं निकारें तन विदारै, बैर जो न तहाँ धरैं ।।
जे करम पूरव किये खोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा ।
अति क्रोध अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ।। १ ।।
मान महा विषरूप, करहिं नीच गति जगत में ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ।।
उत्तम मार्दव गुन मन माना, मान करन को कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोद माहिं तैं आया, दमरी रूकन भाग बिकाया ।।
रूकन बिकाया भाग वशतैं,देव इकइन्द्री भया ।
उत्तम मुआ चाण्डाल हुआ, भूप कीड़ों में गया ।।
जीतव्य जोवन धन गुमान, कहा करै जलबुदबुदा ।
करि विनय बहुगुण बड़े जन की, ज्ञान का पावे उदा ।। २ ।।
कपट न कीजे कोय, चोरन के पुर ना बसे ।
सरल सुभावी होय , ताके घर बहु सम्पदा ।।
उत्तम आर्जव नीति बखानी, रंचक दगा बहुत दुःखदानी ।
मन में होय सो वचन उचरिये,वचन होय सो तनसौं करिये ।।
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निर्मल आरसी ।
मुख करै जैसा लखे तैसा, कपट प्रीति अंगारसी ।।
नहिं लहै लछमी अधिक छल करि करम बंध विशेषता ।
भय त्यागि दूध बिलाव पीवै, आपदा नहिं देखता ।। ३ ।।
कठिन वचन मत बोल, परनिन्दा अरू झूठ तज ।
सांच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी ।।
उत्तम सत्य वरत पालीजै, पर विश्वासघात नहिं कीजै ।
साँचे झूठे मानुष देखे, आपन पूत स्वपास न पेखे ।।
पेखे तिहायत पुरूष सांचे को, दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावक की प्रतिष्ठा, सांच गुन लख लीजिये ।।

उँचे सिंहासन बैठ बसुनृप, धरम का भूपति भया ।
बच झूठ सेती नरक पहुँचा, सुरग में नारद गया ॥ ४ ॥
धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देह सों ।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में ॥
उत्तम शौच सर्व जग जाना, लोभ पाप को बाप बखाना ।
आशा फांस महा दुखदानी, सुख पावै सन्तोषी प्रानी ॥
प्राणी सदा शुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावतैं ।
नित गंग-जमुन समुद्र न्हाये, अशुचि दोष सुभावतैं ॥
ऊपर अमल मल भरयो भीतर, कौन विध घट शुचि कहैं ।
बहु देह मैली सुगुन थैली, शौच गुन साधू लहैं ॥ ५ ॥
काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो ।
संयम रतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं ॥
उत्तम संयम गहु मन मेरे, भव भव के भाजैं अघ तेरे ।
सुरग नरक पशुगति में नाहीं,आलस हरन करन सुखठांही ॥
ठाहीं पृथ्वी जल आग मारूत, रूख त्रस करुना धरो ।
सपरसन रसना घ्रान नैना, कान मन सब वश करो ॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रूल्यो जग कीच में ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आव जममुख बीच में ॥ ६ ॥
तप चाहें सुरराय, करमशिखर को वज्र है ।
द्वादश विधि सुखदाय; क्यों न करै निज सकति सम ॥
उत्तम तप शिवमार्ग बखाना,करम शिखर को वज्र समाना ।
वस्यो अनादि निगोद मझारा,भू विकलत्रय पशुतन धारा ॥
धारा मनुषतन महादुर्लभ, सुकुल आयु निरोगता ।
श्री जैनवाणी तत्वज्ञानी भई विषमपयोगता ॥
अति महा दुर्लभ त्याग, विषय कषाय जो तप आदरैं ।
नरभव अनूपम कनकघर पर, मणिमयी कलशा धरैं ॥ ७ ॥
दान चार परकार, चार संघ को दीजिये ।
धन बिजुली उनहार, नरभव लाहो लीजिये ॥
उत्तम त्याग कह्यो जग सारा औषधि शास्त्र अभय आहारा ।
निहचे रागद्वेष निरवारैं ज्ञाता दोनों दान संभारैं ॥
दान संभारैं कूप जल सम, दरब घर में परिनया ।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया बह गया ॥
धनि साधु शास्त्र अभय दिवैया, त्याग राग विरोधकों ।
बिन दान श्रावक साधु दोनों, लहै नाहीं बोध को ॥ ८ ॥

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करैं मुनिराज जी ।
तिसनाभाव उच्छेद, घटती जान घटाइये ।।
उत्तम आकिंचन गुण जानों, परिग्रह चिन्ता दुःख ही मानो ।
फांस तनकसी तन में सालै,चाह लंगोटी की दुःख भालै ।।
भालै न समता सुख कभी, नर बिना मुनि मुद्रा धरैं ।
धनि नगन पर तन-नगन, ठाड़े सुर असुर पायन परैं ।।
घरमांहि तिसना जो घटावैं, रूचि नहीं संसार सौं ।
बहु धन बुराहू भला कहिये, लीन पर उपगार सौं ।। ९ ।।
शीलबाड़ि नौ राख, ब्रह्मभाव अन्तर लखो ।
करि दोनों अभिलाष करहु सफल नरभव सदा ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ ।
सहैं बान वरषा बहु सूरे, टिकें न नैन वान लखिकूरे ।।
कूरे त्रियाके अशुचि तन में, काम रोगी रति करें ।
बहु मृतक सड़हिं मसान माहिं, काक ज्यों चोंचे भरें ।।
संसार में विषबेल नारी, तज गये जोगीश्वरा ।
'द्यानत' धरम दश पैंड़ि चढ़ि के,शिवमहल में पग धरा ।। १० ।।

समुच्चय जयमाला दशधर्म की

दशलक्षण बंदों सदा, मन वांछित फलदाय ।
करहुँ आरती भारती, हम पर होहु सहाय ।।
उत्तम क्षमा जहाँ मन होई, अन्तर बाहिर शत्रु न कोई ।। १ ।।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ।। २ ।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावे, दुरगति टाल सुगति उपजावै ।। ३ ।।
उत्तम सत्य वचन मुख बोलै, सो प्रानी संसार न डोलै ।। ४ ।।
उत्तम शौच लोभ परिहारी, संतोषी गुण रतन भंडारी ।। ५ ।।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नरभव सफल करै, लह साता ।। ६ ।।
उत्तम तप निरवांछित पालै, सो नर करम शत्रु को टालै ।। ७ ।।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोग भूमि सुर शिव सुख होई ।। ८ ।।
उत्तम आकिंचन व्रत धारैं, परम समाधि दशा विस्तारै ।। ९ ।।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावे, नर सुर सहित मुक्ति फल पावे ।। १० ।।

: दोहा :

करै करम की निरजरा, भव पींजरा विनाशि ।
अजर अमर पद को लहै 'द्यानत' सुख की राशि ।।

सोलह कारण भावना

॥ दोहा ॥

सोलह कारण भावना, भावें मुनि आनन्द ।
जिनकौ नाम स्वरूप कछु, लिखूं सकल सुख कन्द ॥

॥ चौपाई ।

आठ दोष मद आठ मलीन, छह अनायतन शठता तीन ।
ये पच्चीस मल वर्जित होय, दर्शन शुद्धि कहावै सोय ॥ १ ॥
रत्नत्रय धारी मुनिराय, दर्शन ज्ञान रचित समुदाय ।
इनकी विनय विषैं परबीन, दुतिय भावना सो अमलीन ॥ २ ॥
शील भाव धारैं समचित्त, सहस अठारह अंग समेत ।
अतीचार नहिं लागे जहाँ, तृतीय भावना कहिये तहाँ ॥ ३ ॥
आगम कथित अर्थ अवधार, यथाशक्ति निज बुधि अनुसार ।
करै निरन्तर ज्ञान अभ्यास, तुरिय भावना कहिये तास ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

धर्मी धर्म के फल विषै, बरतैं प्रीति विशेष ।
यही भावना पंचमी, लिखी जिनागम देख ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

औषधि अभय ज्ञान आहार, महादान यह चार प्रकार ।
शक्ति समान सदा निरबहे, छठी भावना धारक बहै ॥ ६ ॥
अनशन आदि मुक्ति दातार, उत्तम तप बारह परकार ।
बल अनुसार करै जो कोय, सोई सातमी भावना होय ॥ ७ ॥
यती वर्ग को कारण पाय, विघन होत जो करे सहाय ।
साधु समाधि कहावै सोय, यही भावना अष्टम होय ॥ ८ ॥
दश विधि साधु जिनागम कहे, पथ पीड़ित रोगादिक गहै ।
तिनकी जो सेवा सत्कार, यही भावना नवमी सार ॥ ९ ॥
परम पूज्य आतम अर्हन्त, अतुल अनन्त चतुष्टयवंत ।
तिनकी थुति नित पूजा भाव, दशम भावना भव जल नाव ॥ १० ॥
जिनवर कथित अर्थ अवधार, रचना करै अनेक प्रकार ।
आचारज की भक्ति विधान, एकादशम् भावना जान ॥ ११ ॥
विद्यादायक विद्यालीन, गुणगरिष्ट पाठक परवीन ।
तिनके चरण सदा चित्त रहै, बहुश्रुत भक्ति बारमी यहै ॥ १२ ॥

भगवत भाषित अर्थ अनूप, गणधर गूंथत ग्रन्थ सरूप ।
तहाँ भक्ति बरतै अमलान, प्रवचन भक्ति तेरमी जान ॥ १३ ॥
षट् आवश्यक क्रिया विधान, इनकी करहैं न कबहूँ हान ।
सावधान वरतै थिर चित्त, सो चौदहवीं परम पवित्र ॥ १४ ॥
कर जप तप पूजा व्रत भाव, प्रगट करे जिनधर्म प्रभाव ।
सोई मारग पर भावना, यही पंचदशमी भावना ॥ १५ ॥
चार प्रकार संघ सों प्रीति, राखे गाय बच्छ की रीति ।
यही सोलमी सब सुखदाय, प्रवचन वात्सल्य अभिधाय ॥ १६ ॥

॥ दोहा ॥

सोलह कारण भावना, परम पुण्य को खेत ।
भिन्न भिन्न अरु सोलहों, तीर्थंकर पद देत ॥
बंध प्रकृति जिनमत विषैं, कहीं एक सो बीस ।
सौ सत्रह मिथ्यात में, बांधत हों निश दीस ॥
तीर्थंकर आहार दुक, तीन प्रकृति ये जान ।
इनको बंध मिथ्यात में, कहो नहीं भगवान ॥
तातें तीर्थंकर प्रकृति, तीनहि समकित माहिं ।
सोलह कारण सों बंधे, सबको निश्चय नाहिं ॥
तीन लोक तिहुँ काल में, पूजा सम नहिं पुन्न ।
गृहवासी के प्रातहिं, जिन पूजा दरशन ॥
यह थोड़ो सो कथन है, लेहु बहुत कर मान ।
नित उठ पूजा कीजिए, यही बड़ो परमान ॥

॥ सोरठा ॥

पूज्यपाद मुनिराय, श्री सरवारथ सिद्धि में ।
कह्यो कथन इस न्याय, देख लीजिये सुबुधजन ॥

सोलह कारण भावना की जयमाला

॥ दोहा ॥

षोडश कारण गुण करै, हरै चतुर्गति वास ।
पाप पुण्य सब नाश कैं, ज्ञान भानु परकास ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

दरसन विशुद्ध धरै जो कोई, ताको आवागमन न होई ।
विनय महा धारै जो प्रानी, शिव वनिता की सखी वखानी ॥ २ ॥

शील सदा दिढ़ जो नर पालै, सो औरन की आपद टालै ।
ज्ञानाभ्यास करै मन माहीं, ताके मोह महातम नाहीं ॥ ३ ॥
जो संवेग भाव विस्तारै, सुरग मुकति पद आप निहारै ।
दान देय मन हरष विशेषै, इह भव जस परभव सुख देखै ॥ ४ ॥
जो तप तपै खिपै अभिलाषा, चूरै करम शिखर गुरु भाषा ।
साधु समाधि सदा मन लावै, तिहुँ जग भोग भोगि शिव जावै ॥ ५ ॥
निशि दिन वैयावृत्य करैया, सो निहचै भव नीर तरैया ।
जो अरहंत भक्ति मन आनै, सो जन विषय कषाय न जानै ॥ ६ ॥
प्रवचन भक्ति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानन्द दाता ।
षट् आवश्यक नित जो साधै, सो ही रत्नत्रय आराधै ॥ ८ ॥
धर्म प्रभाव करे जो ज्ञानी, तिन शिव मारग रीति पिछानी ।
वात्सल्य अंग सदा जो ध्यावें, सो तीर्थंकर पदवी पावें ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

ऐसी सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।
देव इन्द्र नर वंद्य पद, द्यानत शिव पद होय ॥

तारण वाणी

जीओ जीवंपि जीवं, जीवन्तो न्यान दंसन समग्गं ।
बीजं सुद्ध सु चरनं, न्यानमयोपि नन्त सुह निलयं ॥

अर्थ – जो जीता था, जी रहा है और जीता रहेगा, वह ज्ञान दर्शन से समग्र जीव तत्त्व है। त्रिकालवर्ती चैतन्य तत्त्व शुद्ध चारित्र का बीज है। वह ज्ञानमयी और अनन्त सुख का भण्डार है। (श्री ज्ञान समुच्चय सार जी गाथा – ७७२)

अप्पं च अप्प तारं, नाव विसेसं च पार गच्छंति ।
अप्पं विमल सरूवं, कम्मं षिपिऊन तिविह जोएन ॥

अर्थ – स्वयं आत्मा ही आत्मा के लिए तारणहार है। आत्मा अपने विमल स्वरूप नौका विशेष में बैठकर तीन प्रकार के योगों की एकता रूप पतवार चलाकर दुःख भरे असार संसार रूपी संसार सागर से पार हो जाती है। (श्री उपदेश शुद्ध सार जी – ४९२)

कमलं कलंक रहियं, कल लंकृत कम्म भाव गलियं च ।
जं पर्जाव विसेषं, ममल सहावेन पर्जाव विलयंति ॥

अर्थ – जैसे कमल कीचड़ से रहित है, उसी प्रकार संयोग में रहता हुआ ज्ञायक आत्म कमल कर्म कलंक से रहित है। जिसके आश्रय से अनेक शरीरों को प्राप्त कराने वाले कर्म भाव गल जाते हैं। कर्मोदय जन समस्त पर्यायी भाव ममल स्वभाव में रहने से विलय हो जाते हैं। (श्री ममल पाहुड़ जी – फूलना २२, गाथा – १७)

आसादन दोष

(जो चैत्यालय में नहीं करना चाहिये)

- दीवाल से टिककर बैठना नहीं।
- वेदी की तरफ पीठ करना नहीं।
- एक हाथ से आरती करना नहीं।
- एक हाथ से जिनवाणी उठाना नहीं।
- एक हाथ से प्रसाद लेना नहीं।
- पैर पर पैर चढ़ाकर बैठना नहीं।
- अंगुलियाँ चटकाना नहीं।
- नाखून काटना नहीं।
- शरीर का मैल घिसकर छुड़ाना नहीं।
- स्वाध्याय आदि करते समय हाथ से अपने पैर को स्पर्श कराना नहीं।
- मोजे पहिनकर चैत्यालय आना नहीं।
- चैत्यालय में किसी के पैर पड़ना नहीं।
- अंगुली से जीभ को स्पर्श कराकर ग्रंथ के पन्ना पलटना नहीं।
- जिनवाणी या प्रवचनकर्ता से ऊँचे आसन पर बैठना नहीं।
- पैर फैलाकर बैठना नहीं।
- स्वाध्याय करते समय ग्रंथ के पेज मोड़ना नहीं।
- चैत्यालय में दूसरों को बाधा पहुँचे इतने जोर–जोर से पढ़ना या बोलना नहीं।
- चैत्यालय में राग–द्वेष और कषाय पूर्ण कार्य करना नहीं।
- तत्व चर्चा के अलावा व्यर्थ चर्चा करना नहीं।
- प्रवचन के समय व्यक्तिगत स्वाध्याय जाप करना नहीं।
- प्रवचन के समय बच्चों को शोरगुल करने के लिये छोड़ना नहीं।
- प्रवचन के समय घंटा बजाना नहीं।

जिज्ञासा –समाधान– प्रश्नोत्तर

धर्मोपदेश में प्रयुक्त और संशोधित विषय वस्तु का उपयुक्त अभिप्राय–

जिज्ञासा– भव संसार निवार के स्थान पर गुरू संसार निवार क्यों पढ़ना चाहिये ?

समाधान– तत्त्व मंगल में श्री ममल पाहुड़ जी ग्रंथ की पहली फूलना देव दिप्ति गाथा, तीसरी फूलना गुरू दिप्ति गाथा और पाँचवीं फूलना धर्म दिप्ति गाथा की पहली– पहली गाथायें हैं। तत्त्व मंगल इन तीनों गाथाओं से मिलकर बना है। दूसरी गाथा में 'भव संसार निवार' के स्थान पर 'गुरू संसार निवार' योग्य और उचित है क्योंकि 'गुरू ही संसार से पार लगाने वाले हैं" ऐसा इस पद का अर्थ है और संपादित प्रति में मूल पाठ भी यही है अत: 'गुरू संसार निवार' पढ़ें, यही अनुरोध है। तत्त्व मंगल के बाद हाथ जोड़कर बोलना चाहिये – 'देव को, गुरू को,धर्म को नमस्कार हो।'

जिज्ञासा– तीन आशीर्वाद क्यों, किसको, किसके द्वारा दिये गये ?

समाधान– आशीर्वाद –श्री संघ का उदय–श्री गुरू तारण स्वामी जी ने जाति पंथ गढ़ तोड़कर, जग से मुख को मोड़कर, निज से नाता जोड़कर जो आध्यात्मिक महाक्रांति की वह अद्वितीय थी। श्री तारण तरण स्वामी जी महाराज द्वारा उदित जन चेतनाओं के जागरण का महा प्रवाह तथाकथित धर्म गुरूओं–भट्टारकों और पंडितों को रास नहीं आया फलत: श्री गुरू तारण स्वामी जी को जहर दिया गया, अनेकों उपसर्ग हुए, किन्तु उनकी साधना निरंतर वृद्धिंगत होती गई और सिद्ध पुरूष के रूप में उनकी प्रसिद्धि हुई। लाखों लोग जुड़ने लगे तब एक निश्चित व्यवस्था बनाने के उद्देश्य से उनके लगभग ८४ प्रमुख शिष्यों की सेमरखेड़ी में बैठक हुई और श्री तारण तरण श्रावकाचार जी ग्रंथ की गाथा १९९–२०० के आधार पर तारण पंथ की आचार व्यवस्था का निर्धारण किया गया कि ''जो भी व्यक्ति सात व्यसनों का त्याग और १८ क्रियाओं का पालन करने का संकल्प करेगा वह तारण पंथी होगा।'' यह निर्णय लेने के पश्चात् वे सभी शिष्य सेमरखेड़ी के निर्जन वन की गुफा में साधनारत श्री गुरू तारण स्वामी जी के पास पहुंचे और लिये गये निर्णय का विनम्र निवेदन किया तथा सभी ने ७ व्यसनों का त्याग कर १८ क्रियाओं का पालन करने का संकल्प करके श्री गुरू महाराज से आशीर्वाद प्रदान करने की प्रार्थना की, उस समय श्री गुरू तारण स्वामी जी ने सर्वप्रथम तारण पंथी होने वाले उन भव्य आत्माओं को यह तीन आशीर्वाद दिये। पहला आशीर्वाद – सम्यग्दर्शन का, दूसरा आशीर्वाद – सम्यग्ज्ञान का और तीसरा आशीर्वाद सम्यक्चारित्र की प्राप्ति के लिये दिया। तीसरे आशीर्वाद की अंतिम पंक्ति में कहा गया है **''उववन्नं श्री संघं जयं ''** अर्थात् ''श्री संघ उत्पन्न हो गया, जयवंत हो।'' इस प्रकार श्री गुरू महाराज ने तीन आशीर्वाद दिये और श्री संघ का उदय हुआ।

जिज्ञासा– 'यांचे सुरतरू देय सुख' दोहा क्यों नहीं दिया गया ?

समाधान– 'यांचे सुरतरू देय सुख' दोहा प्राचीन प्रतियों में नहीं है इसलिये नहीं दिया गया और प्रारम्भिक शुरूवात प्राचीन प्रतियों के अनुसार यथावत् है।

जिज्ञासा– 'धर्मं च आत्म धर्मं च' श्लोक जोड़ने का क्या कारण है ?

समाधान– धर्मोपदेश में 'भगवान ने आत्म धर्म रूप धर्म की प्रर्वतना की ' ऐसा उल्लेख है, इसी भाव को दृढ़ करने के लिये 'धर्मं च आत्म धर्मं च' श्लोक दिया गया है।

जिज्ञासा– 'चिन्त्यं नाशनं ज्ञानं' श्लोक क्यों नहीं है ?

समाधान– 'चिन्त्यं नाशनं ज्ञानं' श्लोक प्राचीन प्रतियों में नहीं है।

जिज्ञासा– पंच ज्ञान को पंचम ज्ञान क्यों किया गया है ?

समाधान– पंचज्ञान विवेक संपूर्ण आदि वाक्य में 'पंचमज्ञान धर्तार' पुरानी प्रतियों से लिया गया है जिसका अर्थ है पंचम ज्ञान को धारण करने वाले। पंच ज्ञान का अर्थ है पाँच ज्ञान, तो पाँच ज्ञान एक साथ किसी भी जीव को नहीं होते। एक साथ एक जीव को चार ज्ञान तक हो सकते हैं, केवलज्ञान एक ही होता है।

जिज्ञासा– 'सम्मत्त सलिल पवहो' से सम्यक्त्व की महिमा को क्यों जोड़ा है ?

समाधान– सो कैसी है सम्यक्त्व की महिमा ? इसके साथ 'सम्मत्त सलिल पवहो' प्रसंग के अनुरूप है।

जिज्ञासा– 'सम्मत्त सलिल पवहो' गाथा में क्या किया है ?

समाधान– 'सम्मत्त सलिल पवहो' अष्ट पाहुड़ ग्रंथ में दर्शन पाहुड़ की सातवीं गाथा है, जो ग्रंथ के आधार पर शुद्ध की गई है।

जिज्ञासा– अतीत की चौबीसी के अंतिम तीर्थंकर कौन थे ?

समाधान– गतोत्सर्पिणी आदि पैराग्राफ में अंतिम तीर्थंकर के श्री सम्पतनाथ,सन्मति, सम्पतिनाथ, शांतिनाथ आदि नाम पढ़े जाते हैं, जो उपयुक्त नहीं हैं। त्रिकाल की चौबीसी की माहिती के अनुसार अंतिम तीर्थंकर श्री अनन्तवीर्य जी थे यह नाम उचित है जो लिख दिया गया है।

जिज्ञासा– सिद्धार्थ वन और चन्द्रकांत मणि की शिला क्या है ?

समाधान– आदिनाथ भगवान के दीक्षा प्रसंग के समय '' इन्द्र आयकर विमला नामक पालकी में बैठाय उत्सव सहित आकाश मार्ग से कैलाश पर्वत पर ले गये। तहाँ पांडुक शिला ऊपर '' ऐसा वाक्य पढ़ा जाता है। वस्तुतः कैलाश पर्वत से आदिनाथ भगवान मोक्ष गये हैं, उनकी दीक्षा कैलाश पर्वत पर नहीं हुई और कैलाश पर्वत से पांडुक शिला का कोई संबंध नहीं है क्योंकि पांडुक शिला सुमेरु पर्वत पर ही होती है।

सभी तीर्थंकरों का जन्म कल्याणक वहीं होता है। जैसा मंदिर विधि में भगवान महावीर स्वामी के जन्म के समय का प्रसंग है – '' पांडुक शिला पर ले जायकर प्रभु का जन्म कल्याणक किया ''। फिर आदिनाथ भगवान की दीक्षा के समय वन और शिला कौन सी थी यह जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। इस संदर्भ में चौबीस तीर्थंकर महापुराण में पृष्ठ ४७ – ४८ पर लिखा है – '' अयोध्या से थोड़ी दूर सिद्धार्थ नामक वन में आकर एक पवित्र शिला पर वैरागीनाथ विराजे। चन्द्रकांत मणि की वह शिला ऐसी शोभायमान हो रही थी .....''।

इस प्रकार आदिनाथ भगवान ने सिद्धार्थ वन में चन्द्रकांत मणि की शिला पर विराजमान होकर दीक्षा धारण की। श्री जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग – २, पृष्ठ ३८३ पर और श्री यतिवृषभाचार्य कृत तिलोय पण्णत्ति में भी यही वर्णन है।

जिज्ञासा– 'नमूं अष्टांग नमि इकवीसा' क्यों किया गया है ?

समाधान– 'नमियो अष्टांग सिद्ध इकवीसा' चौबीसी की इस पंक्ति में २१ वें तीर्थंकर नमिनाथ का उल्लेख ही नहीं है ; इसलिये इसके स्थान पर 'नमूं अष्टांग नमि इकवीसा' प्राचीन प्रतियों के आधार पर शुद्ध किया गया है।

जिज्ञासा– जगदीश शब्द के स्थान पर जगशीश क्यों किया गया है ?

समाधान– 'जगदीश' के स्थान पर 'जग शीश' हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर किया गया है, जिसका अर्थ है कि ''लोक के अग्रभाग पर वास करने वाले सिद्धों की वंदना करता हूँ ।''

जिज्ञासा– विद्यमान बीसी में क्या परिवर्तन किया गया है ?

समाधान– शब्दों की गल्तियों को जैसे– जुग को युग, सुजाति को संजात, अनन्त वीर को अनन्तवीर्य, सूरप्रभु को सूरिप्रभ करके सही किया है।

जिज्ञासा– 'ये ज्ञान दानं' श्लोक क्या पहले शुद्ध नहीं था ?

समाधान– 'ये ज्ञान दानं कुरुते मुनीनां' श्लोक पहले अशुद्ध वांचन किया जाता था, इस श्लोक को शुद्ध और अर्थानुगामी किया गया है। श्लोक और अर्थ यथास्थान पर देखें।

जिज्ञासा– भगवान महावीर स्वामी के जन्म स्थान का सही नाम क्या है ?

समाधान– भगवान महावीर स्वामी के जन्म स्थान कुंदनपुर नगरी के स्थान पर शुद्ध सही नाम कुण्डलपुर नगरी किया गया है।

जिज्ञासा– देवांगली पूजा में क्या संशोधन किया है ?

समाधान– देवांगली पूजा में व्याकरण के अनुरूप आंशिक संशोधन शुद्धिकरण किया गया है–जैसे – अरिहंता, सिद्धा, लोगुत्तमा, लोगुत्तमो,अरिहंते, सिद्धे, धम्मं आदि।

जिज्ञासा– शास्त्र पूजा में क्या संशोधन हुआ है ?

समाधान– शास्त्र पूजा गाथा में स्वर्ग मोक्ष संगम करणं के स्थान पर 'सग्ग मोक्ख संगम करणम्' किया गया है, जो भाषा शुद्धि के अनुरूप है। शास्त्र पूजा की दूसरी गाथा में प्राचीन प्रतियों में 'लड्ढिय' के स्थान पर 'सिद्धं' शब्द आया है और इस शब्द का भाव तथा अर्थ दोनों ही स्पष्ट हैं, अत: 'लड्ढिय' के स्थान पर 'सिद्धं' किया गया है।

जिज्ञासा– गुण पाठ पूजा में कहाँ–कहाँ और किस कारण से संशोधन किये गये हैं ?

समाधान– गुण पाठ पूजा के पहले श्लोक में–धर्मं को धम्मं, दर्सन को दंसण और चरितं को चरणं भाषानुगामी भाव के अनुरूप किया है।

गुण पाठ पूजा के पाँचवें श्लोक में पढ़ा जाता है–'अनंत वीर्य अनंतरायेन' यह उचित नहीं है क्योंकि उक्त श्लोक में सिद्ध भगवान के ८ गुण किन कर्मों के अभाव से प्रगट होते हैं यह प्रसंग है इसलिये 'अनन्त वीर्य अन्तरायेन' प्रासंगिक है, जिसका अर्थ है अनन्तवीर्य नामक गुण अन्तराय कर्म के अभाव से प्रगट होता है।

गुण पाठ पूजा के सातवें श्लोक में 'ए आराह अष्ट गुण' के स्थान पर 'ए आइरिय अष्ट गुण' शुद्ध है। जिसका भाव है–अहो ! आचार्य आठ गुणों का पालन करते हैं, इसमें आगे ३६ गुणों का उल्लेख है। इसी श्लोक में 'अव्वा' की जगह 'अप्पा' शब्द है जो शुद्ध है। 'होय दिढ़ अप्पा' का अर्थ है–आत्मा में दृढ़ होते हैं। '

जिज्ञासा– 'सुगुरू निदान' के स्थान पर 'सुगुण निधान' करने का क्या कारण है ?

समाधान– चौथे काल के अन्त ....मंगल की यह पंक्ति 'भगवान सुगुरू निदान मुनिवर' अर्थ पूर्ण नहीं है; अत: 'भगवान सुगुण निधान मुनिवर' किया गया है, जिसका सटीक अर्थ मंगल में देखें।

जिज्ञासा– मंदिर विधि के विशेष उल्लेखनीय बिन्दु कौन–कौन से हैं ?

समाधान– 'समवशरण चौसंघ' वाले विभाग की अंतिम पंक्ति 'अगम निगम प्रवेश पहुंचे' के स्थान पर 'अगम गम प्रवेश पहुँचे' उपयुक्त है। अर्थ यथास्थान देखें।

विशेष यह कि मंगल में भगवान महावीर स्वामी का विपुलाचल पर्वत पर समवशरण लगना, राजा श्रेणिक का समवशरण में जाना, रथ से उतर पयादे भये..., समवशरण में राजा श्रेणिक अनेक प्रश्न पूछते भये, भगवान महावीर स्वामी द्वारा राजा श्रेणिक को अकता प्रसाद और गुरू की महिमा, इस संपूर्ण प्रसंग को क्रमिक स्वरूप दिया गया है। यह संपूर्ण प्रसंग पहले आगे पीछे पढ़ने का क्रम रहा है जो इस संपादन में व्यवस्थित कर दिया गया है।

'श्रेणीय कथ्य नायक 'श्लोक में अनेक स्थानों पर 'तं तुट्ठो, नं तुट्ठो 'मिलता है किन्तु इसका सही पाठ है–'संतुट्ठो' जिसका अर्थ है–संतुष्ट, पूरा अर्थ धर्मोपदेश में देखें।

प्रारंभ में धर्मोपदेश पूज्य आर्यिका कमल श्री माता जी के मार्गदर्शन में आर्यिका ज्ञान श्री और श्री रुइया रमन जी द्वारा लिखा गया है, प्राचीन प्रतियों में प्रमाण उपलब्ध हैं, अत: अर्थ में इसे स्पष्ट किया गया है। धर्मोपदेश में पहले हम भ्रम सहित पढ़ते रहे 'आठ पहर की ३२ घड़ी, या आठ पहर की ६४ घड़ी 'और जब भ्रांति अपनी चरम सीमा पर पहुंची तो संख्या पढ़ना ही छोड़ दिया और पुस्तकों में छपने लगा 'आठ पहर की घड़ी में।' किन्तु गणित से प्रमाणित है कि आठ पहर में ६० घड़ी ही होती हैं, देखिये घड़ी वाला प्रसंग।

जिज्ञासा– 'नाम लेत पातक कटें' स्तवन का उपयुक्त क्रम क्या है ?

समाधान– 'नाम लेत पातक कटें' स्तवन विभिन्न स्थानों पर अलग–अलग क्रम से पढ़ा जाता है; किन्तु इस कृति में जो क्रम दिया है वह बहुत ही उपयुक्त और प्रासंगिक है अत: यही क्रम उचित है, क्योंकि – नाम लेत पातक कटें और गुण अनंतमय ..... इन दो दोहों में सच्चे देव का स्तवन है। पश्चात् अगम हती....., विघन विनाशन ..... और कठिन काल ..... इन तीन दोहों में सच्चे गुरू का स्तवन है। परम्परा यह धर्म..... और धन्य धन्य जिन धर्म..... इन दो दोहों में सच्चे धर्म का स्तवन है और अंत में धन्य धन्य गुरू तार जी..... और जो कदापि गुरू तार को इन दो दोहों में इन सच्चे देव गुरू धर्म का सच्चा स्वरूप बताने वाले श्री गुरू तारण तरण स्वामी जी महाराज की भक्ति और बहुमान है, इस प्रकार यह क्रम उचित और प्रासंगिक है।

जिज्ञासा– शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं इसका क्या अर्थ है ?

समाधान– ''अब श्री शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं '' इस वाक्य में 'कहा' का अर्थ कहने के अभिप्राय में नहीं समझना चाहिये। जैसे–यह पढ़ते हैं कि, 'अब शास्त्र जी का नाम कहा, सो दर्शावत हैं'। यह अशुद्ध वांचन उचित नहीं है। यहाँ अर्थ है कि शास्त्र का नाम (स्वरूप) क्या दर्शाते हैं इसलिये अब श्री शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं, ऐसा उच्चारण करके अस्थाप किये हुए ग्रंथों का हाथ जोड़कर भक्ति पूर्वक उल्लेख करना चाहिये।

जिज्ञासा– पाँच मतों में विचार मत आचार मत..... इस क्रम का सटीक प्रमाण क्या है ?

समाधान– आचार्य श्री जिन तारण स्वामी जी ने पाँच मतों में चौदह ग्रंथों की रचना की। इनमें विचार मत में –साध्य, आचार मत में –साधन, सारमत में –साधना, ममल मत में–सम्हाल और केवलमत में सिद्धि इस प्रकार क्रमश: कथन किया है। अत: विचार मत, आचार मत, सारमत आदि यही क्रम युक्ति संगत बैठता है। सिंगोड़ी से प्राप्त ठिकानेसार में इनका वर्णन इस प्रकार है – पाँच मत विदि–विचारमति, आचार मति, सार मति, ममल मति, केवलमति। सन् १९८४ में गंजबासौदा में आयोजित विद्वत् शिविर में भी विचार मत, आचार मत, सारमत आदि इसी क्रम से सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया था। अत: विचार मत, आचारमत, सारमत, ममलमत, केवलमत इसी क्रम से उल्लेख किया गया है, ऐसा ही सबको पढ़ना चाहिये।

जिज्ञासा– आचार्य दाता, सहाई दाता आदि शब्द क्यों दिये गये हैं ?

समाधान– 'आचार्य दाता, सहाई दाता, प्यारो दाता' यह गुरू की महिमा और बहुमान को प्रगट करने वाले शब्द हैं अत: परम्परा की प्राचीनता को बनाये रखने के लिये अबलबली के बाद उक्त शब्द समूह दिये गये हैं।

जिज्ञासा– संसारे तरण के स्थान पर उचित और शुद्ध क्या है ?

समाधान– अंतिम प्रमाण गाथाओं में 'संसग्ग कम्म खिवणं' गाथा में 'संसारे तरण मुक्ति गमनं च' स्थान पर मूल पाठ के अनुसार 'संसारं तिरन्ति मुक्ति गमनं च' किया गया है, जो उचित है।

जिज्ञासा– 'गुण वय तव सम पडिमा दाणं' यह गाथा सबसे अंत में क्यों पढ़ना चाहिये ?

समाधान– अंतिम प्रमाण गाथाओं में अनेक स्थानों पर संसग्ग कम्म खिवणं पहले और गुण वय तव सम गाथा बाद में पढ़ी जाती है और कुछ स्थानों पर गुण वय पहले और संसग्ग कम्म खिवणं बाद में पढ़ने का क्रम चल रहा है ; किन्तु प्रमाण के आधार पर विचार करें तो संसग्ग कम्म खिवणं पहले और गुण वय तव सम गाथा सबसे अंत में पढ़ने की प्रासंगिकता सिद्ध होती है। वह इस प्रकार है कि प्रारंभ से इन प्रमाण गाथाओं में अरिहंत परमात्मा, जिनबिम्ब, जिनप्रतिमा आदि का स्वरूप बताया गया है, वह सब व्यवहार नय से है और इन्हीं गाथाओं के तत्काल बाद संसग्ग कम्म खिवणं गाथा आती है, जिसका भाव है अरिहंत आदि परमेष्ठीमयी निज शुद्धात्मा है, निश्चय से ऐसे स्वभाव का संसर्ग करने से कर्म क्षय होते हैं,संसार से तिरते हैं और मुक्ति की प्राप्ति होती है। संसार से छूटना, मुक्त होना यह लक्ष्य है, इसकी प्राप्ति के लिये ५३ क्रियाओं का आचरण पालन करना आवश्यक है अर्थात् सम्यग्दर्शन ज्ञान पूर्वक उत्तम पात्र वीतरागी साधु १९ क्रिया (१२ तप, ७ शील) पालते हैं। मध्यम पात्र देशव्रती श्रावक १६ क्रिया (११ प्रतिमा, ५ अणुव्रत) का पालन करते हैं और जघन्य पात्र तत्त्व श्रद्धानी अविरत सम्यक्दृष्टि श्रावक १८ क्रियाओं (८ मूलगुण, ४ दान, ३ रत्नत्रय, समताभाव, पानी छानकर पीना, रात्रि भोजन त्याग) का पालन करते हैं, इस प्रकार मुक्ति की प्राप्ति का निश्चय–व्यवहार से समन्वित, प्रायोगिक मार्ग है। इसी कारण गुण वय तव सम गाथा सबसे अंत में पढ़ी जाती है; क्योंकि यही चर्या है जो श्रावक से साधु, साधु से अरिहंत और अरिहंत से सिद्ध पद प्राप्त कराती है अत: गुण वय तव सम गाथा सबसे अन्त में ही पढ़ना चाहिये।

साधारण (लघु) मंदिर विधि

सावधान ! उच्चारण करते हुए सभी श्रावकजन खड़े होकर श्री अध्यात्मवाणी जी को विनयपूर्वक उच्चासन पर विराजमान करके हाथ जोड़कर विनय संबंधी यह दोहा पढें –

जिनवाणी के ज्ञान से, सूझे लोकालोक ।
सो वाणी मस्तक धरूं, सदा देत पद धोक ।।

(पश्चात् ''जय नमोऽस्तु'' कहकर तत्त्व मंगल प्रारंभ करें)

तत्त्व मंगल

देव को नमस्कार

तत्त्वं च नन्द आनन्द मउ, चेयननन्द सहाउ ।
परम तत्त्व पद विंद पउ, नमियो सिद्ध सुभाउ ।।

गुरू को नमस्कार

गुरु उवएसिउ गुपित रुइ, गुपित न्यान सहकार ।
तारन तरन समर्थ मुनि, गुरु संसार निवार ।।

धर्म को नमस्कार

धम्मु जु उत्तउ जिनवरहं, अर्थ तिअर्थह जोउ ।
भय विनासु भवु जु मुनहु, ममल न्यान परलोउ ।।

(देव को, गुरु को, धर्म को नमस्कार हो)

: दोहा :

ॐकार से सब भये, डार पत्र फल फूल ।
प्रथम ताहि को वंदिये, यही सबन को मूल ।।

: श्लोक :

ॐकारं विन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिन: ।
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमो नम: ।।

: चौपाई :

ॐकार सब अक्षर सारा,पंच परमेष्ठी तीर्थ अपारा ।
ॐकार ध्यावे त्रैलोका, ब्रह्मा विष्णु महेसुर लोका ।।
ॐकार ध्वनि अगम अपारा, बावन अक्षर गर्भित सारा ।
चारों वेद शक्ति है जाकी, ताकी महिमा जगत प्रकाशी ।।
ॐकार घट घट परवेसा, ध्यावत ब्रह्मा विष्णु महेशा ।
नमस्कार ताको नित कीजे, निर्मल होय परम रस पीजे ।।

प्रारंभ कैसे करें ?

तत्त्व मंगल, मंगल स्वरूप है। इसके स्मरण करने से मंगल होता है।''जय नमोऽस्तु'' कहकर तत्त्व मंगल प्रारंभ करना चाहिये। जय नमोऽस्तु का अर्थ है– जय हो, नमस्कार हो। यह अपने इष्ट के प्रति बहुमान का सूचक है।

तत्त्व मंगल का अर्थ –

देव वंदना –

शुद्धात्म तत्त्व नन्द आनन्दमयी चिदानन्द स्वभावी है, यही परमतत्त्व निर्विकल्पता युक्त विन्द पद है जिसे स्वानुभव में प्राप्त करते हुए सिद्ध स्वभाव को नमस्कार करता हूँ।

गुरूवंदना –

सच्चे गुरू गुप्त रुचि अर्थात् आत्म श्रद्धान, स्वानुभूति का उपदेश देते हैं और गुप्त ज्ञान आत्मज्ञान से सहकार कराते हैं। ऐसे स्वयं तरने और दूसरों को तारने में समर्थ वीतरागी मुनि सद्गुरू ही संसार से पार लगाने वाले हैं।

धर्म की महिमा –

धर्म वह है जो जिनवरेन्द्र अर्थात् तीर्थंकर भगवंतों ने कहा है। क्या कहा है ? अपने प्रयोजनीय रत्नत्रयमयी स्वभाव को संजोओ यही धर्म है। जो भव्य जीव रत्नत्रय स्वरूप का मनन करते हैं उनके भय विनस जाते हैं और परलोक अर्थात् आगामी काल में उन्हें ममल ज्ञान, पूर्ण ज्ञान अर्थात् केवलज्ञान की प्राप्ति होती है।

ॐकार से.....दोहा का अर्थ –

'ॐकार' सबके मूल में है अर्थात् जड़ (आधार) है, इसी से डालियां, पत्ते, फल, फूल सब प्रगट होते हैं इसलिये मैं सर्वप्रथम ॐकार की वंदना करता हूँ।

ॐकार बिन्दु .....श्लोकार्थ –

योगीजन विन्दु संयुक्त ॐकार का नित्य ध्यान करते हैं। यह ॐकार सर्व इच्छाओं की पूर्ति करने वाला और मोक्ष भी देने वाला है,ऐसे ॐकार के लिये बारंबार नमस्कार है।

चौपाई का अर्थ –

ॐकार समस्त अक्षरों का सार है, यही पंच परमेष्ठीमयी अपार तीर्थ स्वरूप है।

तीनों लोकों के समस्त जीव ॐकार का ध्यान करते हैं तथा इस लोक में ब्रह्मा विष्णु महेश भी ॐकार को ध्याते हैं।

ॐकार ध्वनि अरिहंत भगवान की निरक्षरी दिव्य वाणी अगम और अपार है। जिसका सार बावन अक्षरों में गर्भित है।

चारों वेद अर्थात् चारों अनुयोग इसी की शक्ति हैं। जिसकी महिमा जगत में प्रकाशमान हो रही है।

ॐकार स्वरूपी शुद्धात्मा जो घट – घट में निवास कर रही है। ऐसे शुद्धात्मा का ब्रह्मा विष्णु महेश भी ध्यान करते हैं। ऐसे ॐकार स्वरूप शुद्धात्मा व ॐकारमयी दिव्य वाणी को हमेशा नमस्कार करते हुए निर्मल होकर अमृत रस का पान करो।

: श्लोक :

देव देवं नमस्कृतं, लोकालोक प्रकासकं ।
त्रिलोकं भुवनार्थं जोति, उवंकारं च विन्दते ॥
अज्ञान तिमिरान्धानां, ज्ञानांजनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
श्री परम गुरवे नमः, परम्पराचार्येभ्यो नमः ॥

॥ विनती फूलना ॥

भनै विरमु तारन तरन जिन उवने, विनती एक सुनीजै ।
तुम्ह अन्मोय भव्य जिय उवने, तिन्ह उवएसु कहीजै ॥
हां जू तरन जिन विनती एक सुनीजै ॥१॥

नन्द अनन्दह चिदानन्द जिनु, कम्मु उवंनु विलीजै ।
हां जू तारन जिन विनती एक सुनीजै ॥
॥ आचरी ॥ २ ॥

चौ गै भमत दुष भौ भारी, सुष न कहईं पायौ ।
ऐसे काल तारन जिन उवने, मुक्ति पंथु दरसायौ ॥
॥ हां जू ॥३॥

कालु पंचमौ चपल अनिस्ट है, इस्टि दिस्टि नहु उपजै ।
न्यान बलेन इस्ट संजोए, भय षिपनिकु कम्मु विलीजै ॥
॥ हां जू ॥ ४ ॥

संसय सरनि नंत भौ भारी, भयहं दिस्टि भौ भमीजे ।
भय विनासु तं भव्य उवंनऊ कम्मु उवन्नु विलीजै ॥
॥ हां जू ॥ ५ ॥

दव्व कम्मु आवरन ऊपजै, सल्य संक भय उत्तं ।
न्यान आवर्नु न्यान तं विलियौ,भय षिपिय सिद्धि संपत्तं ॥
॥ हां जू ॥ ६ ॥

वजृ नराच संहरन जं सहिउ, भउ विनासु सुपएसं ।
तं सरीर औदारिक सहियो, भय षिपिय तरन सुपएसं ॥
॥ हां जू ॥ ७ ॥

चष्य अचष्यह जं भौ उपजै, गुहिजह भौ जु अनंतु ।
तारन तरन सहावह जिनियो, न्यान दिस्टि विलयंतु ॥
॥ हां जू ॥ ८ ॥

श्लोक का अर्थ –

जो परमात्मा ॐकार स्वरूप का अनुभव करते हैं, लोक और अलोक के प्रकाशक हैं। तीन लोक रूपी भुवन को प्रकाशित करने में जो ज्योति स्वरूप हैं, ऐसे देवों के देव को नमस्कार करता हूँ।

अज्ञानरूपी तिमिर से अंधे जीवों के चक्षुओं (नेत्रों) को जो ज्ञानांजन रूप शलाका के द्वारा खोल देते हैं इसलिये ऐसे श्री गुरू को नमस्कार है।

श्री परम गुरू अर्थात् केवलज्ञानी तीर्थंकर भगवंतों के लिये नमस्कार है और उनकी परम्परा में जो वीतरागी आचार्य भगवंत हुए हैं उन सबके लिये नमस्कार है।

विनती फूलना का अर्थ–

श्री विरउ ब्रह्मचारी कहते हैं कि जिन तारण तरण (पूज्य गुरू महाराज) आपका उदय हुआ है, धन्य अवसर है। मेरी एक प्रार्थना सुनिये– आपकी कृपा से यह भव्य जीव जाग रहे हैं इनके कल्याणार्थ उपदेश देने की कृपा कीजिये ॥ १ ॥

हाँ जू (अत्यंत विनय सूचक संबोधन) गुरूदेव तारण जिन ! मेरी विनती पर ध्यान दीजिये। नन्द आनन्द चिदानन्द मय जिन स्वरूप का उपदेश प्रदान कीजिये जिससे कर्मों का उत्पन्न होना ही विला जाये ॥ २ ॥

विरउ ब्रह्मचारी की भक्ति भावना–

चारों गतियों में भ्रमण करते हुए अपार दु:ख हुआ, कहीं भी सुख प्राप्त नहीं किया किन्तु ऐसे पंचम काल में जिन तारण गुरू महाराज का उदय हुआ है, जिन्होंने मुक्ति का मार्ग प्रगट किया है यथार्थ मोक्ष मार्ग दरसाया है ॥ ३ ॥

ब्र. विरउ ने निवेदन किया कि ''हे गुरूदेव ! यह दु:खमय विषम पंचम काल चंचल, अनिष्टकारी महा भयकंर है, इसमें हमें अपने इष्ट की दृष्टि उत्पन्न नहीं होती ? गुरूदेव ने कहा – ज्ञान के बल से अपने इष्ट को संजोओ, इससे भय क्षय हो जायेंगे और कर्म विला जायेंगे ॥ ४ ॥

विरउ ने कहा–संशय (भ्रम) के वश में होकर अनंत संसार में परिभ्रमण किया और अपार भय हुए तथा भयभीतपने की दृष्टि के कारण संसार में परिभ्रमण किया ? गुरु महाराज ने कहा – हे भव्य ! स्वानुभव उत्पन्न करो, सभी भय विनस जायेंगे और कर्मों का उत्पन्न होना भी विला जायेगा ॥ ५ ॥

विरउ की जिज्ञासा – यह ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्मों के आवरण उत्पन्न हो रहे हैं। इनके कारण हम शल्य, शंका और भय में संयुक्त हो जाते हैं ?

समाधान – अपने ज्ञान स्वभाव में लीन हो जाओ, सभी ज्ञानावरणादि कर्म विला जायेंगे,भय क्षय हो जायेंगे और सिद्धि की संपत्ति प्राप्त होगी ॥ ६ ॥

विरउ की जिज्ञासा– वज्र वृषभनाराच संहनन सहित यदि जीव हो, उत्कृष्ट संहनन प्राप्त हो तो मोक्ष के उपाय स्वरूप साधना तपश्चरण हो, भयों का विनाश हो और आत्मा शुद्ध प्रदेशी सिद्ध पद को प्राप्त करे सो ऐसा उत्कृष्ट संहनन इस काल में नहीं है ?

समाधान – इस पंचम काल में असंप्राप्तासृपाटिका सहंनन प्राप्त हुआ है, औदारिक शरीर है, अपने उपयोग को स्वभाव में लगाओ इससे भय क्षय हो जायेंगे और तुम देखो कि स्वभाव से आत्मा अभी शुद्ध प्रदेशी सिद्ध स्वरूपी है ॥ ७ ॥

विरउ की जिज्ञासा– जो चक्षु अचक्षु दर्शन हैं, इनसे संसार की उत्पत्ति हो रही है और अनन्त गुप्त भय लगे हुए है, ऐसे में क्या करें ?

समाधान– अपने तारण तरण स्वभाव को जान लो, जीत लो, प्रगट कर लो, ज्ञान स्वभाव की दृष्टि से भव और भय विला जायेंगे ॥ ८ ॥

तारन तरन सहावह विलियो, सल्य संक विलयंतु ।
न्यान विन्यानह ममल सरूवे,भय षिपनिक मुक्ति पहुंतु ।।
।। हां जू।। ९ ।।

(नोट :– फूलना की अंतिम गाथा छोड़कर पढ़ें जिसे अचरी सहित आशीर्वाद के पहले वांचन करें।)

या प्रकार आराध्य – आराध्य अनंते जीव सिद्ध सिद्धालय को प्राप्त हुए।आदि में श्री आदिनाथ देव जी भये, अन्त में श्री महावीर देव जी भये। बाईस तीर्थंकर मध्यानुगामी हुए। श्री चौबीसी जी को नाम लीजे तो पुण्य की प्राप्ति होय है।

वर्तमान चौबीसी

श्री ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पद्मप्रभु छठे जिनेश्वर ।
सप्तम तीर्थंकर भये हैं सुपारस, चन्द्रप्रभ आठम हैं निवारस ।।
पुष्पदंत शीतल श्रेयांस, वासुपूज्य अरू विमल अनंत ।
धर्मनाथ वंदत अविनीश्वर, सोलह कारण शांति जिनेश्वर ।।
कुन्थु अरह मल्लि मुनिसुव्रत वीसा, नमूं अष्टांग नमि इकवीसा ।
नेमिनाथ साहसि गिरि नेमि, सहनसील बाईस परीषह ।।
पारसनाथ तीर्थंकर तेईस, वर्द्धमान जिनवर चौबीस ।
चार जिनेन्द्र चहुँ दिशि गये, बीस सम्मेदशिखर पर गये ।।
आदिनाथ कैलाशहिं गये, वासुपूज्य चम्पापुर गये ।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, पावापुरी वीर जिनराज ।।
दो धवला दो श्यामला वीर, दो जिनवर आरक्त शरीर ।
हरे वरण दो ही कुलवन्त, हेमवरण सोला इकवंत ।।
चौबीस तीर्थंक र मोक्ष गये, दश कोड़ाकोड़ी काल विल भये ।
भये सिद्ध अरू होंय अनंत, जे वन्दौं चौबीस जिनेन्द्र ।।
वन्दौं तीर्थंकर चौबीस, वन्दौं सिद्ध बसें जग शीश ।
वन्दौं आचारज उवझाय, वन्दौं साधु गुरुन के पांय ।।

: दोहा :

देव धरम गुरू को नमो, नमो सिद्ध शिव क्षेत्र ।
विदेह क्षेत्र में जिन नमो, जिनके नाम विशेष ।।

विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर

सीमन्धर स्वामी जिन नमों, मन वच काय हिये में धरों ।
युगमन्धर स्वामी युग पाय, नाम लेत पातक क्षय जाय ।।
बाहु सुबाहु स्वामी धर धीर, श्री संजात स्वामी महावीर ।
स्वयं प्रभ स्वामी जी को ध्यान, ऋषभानन जी कहें बखान ।।

अपने तारण तरण स्वभाव में विलय अर्थात् लीन हो जाओ, डूब जाओ, इससे सभी शल्य शंकायें विला जायेंगी। ज्ञान विज्ञान पूर्वक ममल स्वरूप में लीन रहो तो सभी भय क्षय हो जायेंगे और तुम मुक्ति को प्राप्त करोगे ॥ ९ ॥

वर्तमान चौबीसी का अर्थ –

श्री ऋषभनाथ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, छटवें तीर्थंकर पद्मप्रभ भगवान हैं। सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ हैं, आठवें चन्द्रप्रभ संसार से पार लगाने वाले हैं।

पुष्पदंत, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य और विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ पृथ्वी पति हैं। सोलहवें शांतिनाथ जिनेश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

कुन्थुनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, बीसवें मुनिसुव्रत नाथ हैं, इक्कीसवें नमिनाथ भगवान को साष्टांग नमस्कार है। नेमिनाथ भगवान ने ऐसा पुरुषार्थ किया कि गिरनार पर्वत के शिखर पर चले गये और बाईस परीषह के विजेता हुए। तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और चौबीसवें जिनेन्द्र भगवान वर्द्धमान महावीर हैं। इन चौबीस तीर्थंकरों में से चार तीर्थंकर अलग–अलग चार दिशाओं से मोक्ष गये, शेष बीस तीर्थंकर श्री सम्मेद शिखरजी से मोक्ष पधारे।

आदिनाथ भगवान कैलाश पर्वत से, वासुपूज्य भगवान चंपापुर से, नेमिनाथ भगवान गिरनार से और महावीर जिनराज पावापुरी से मुक्ति को प्राप्त हुए।

इन तीर्थंकरों में दो तीर्थंकरों – चन्द्रप्रभ और पुष्पदंत के शरीर का वर्ण धवल (सफेद) था। दो तीर्थंकरों – सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ के शरीर का वर्ण हरित (हरा) था। दो तीर्थंकरों पद्मप्रभ और वासुपूज्य के शरीर का वर्ण रक्त (लाल) था। दो तीर्थंकरों – मुनि सुव्रतनाथ और नेमिनाथ के शरीर का नील वर्ण (श्यामल) रंग का था। शेष सोलह तीर्थंकरों के शरीर का वर्ण स्वर्ण की तरह पीले रंग का था।

अवसर्पिणी के दश कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण काल में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं जो निर्वाण को प्राप्त हो गए हैं। अनन्त सिद्ध हो चुके हैं, अनन्त सिद्ध आगे होवेंगे, मैं चौबीसों ही जिनेन्द्र परमात्माओं की वंदना करता हूँ।

चौबीस तीर्थंकर भगवंतों की वंदना करके उन सिद्ध भगवंतों को वंदन करता हूँ, जो लोक के शिखर, अग्रभाग में वास कर रहे हैं। आचार्य, उपाध्याय और साधु जो सच्चे गुरू हैं उनके चरण कमलों की वंदना करता हूँ ।

दोहा का अर्थ –

सच्चे देव, गुरू, धर्म को नमस्कार करके शिवक्षेत्र अर्थात् मोक्ष स्थान में विराजमान सिद्ध भगवंतों को नमन करता हूँ, विदेह क्षेत्र में सदा सर्वदा विराजमान बीस तीर्थंकर जिनेन्द्र भगवंतों को नमस्कार है, जिनके नाम विशेष इस प्रकार हैं –

विदेह क्षेत्र बीस तीर्थंकर स्तवन का अर्थ–

मन, वचन, काय की एकता हृदय में धारण करके श्री जिनेन्द्र सीमंधर स्वामी को नमस्कार करता हूँ, युगमंधर स्वामी के चरण युगल की वन्दना करता हूँ , जिनके नाम स्मरण करने से पाप क्षय हो जाते हैं।

बाहु सुबाहु स्वामी स्वभाव में लीनता रूप परम धैर्य धारण करने वाले हैं। श्री संजात स्वामी निज स्वभाव में लीन होने से महावीर हैं। स्वयं प्रभ स्वामी जी का ध्यान महान है, ऋषभाननजी का गुणानुवाद महिमा पूर्वक कह रहे हैं।

अनन्तवीर्य सूरिप्रभ सोय, विशालकीर्ति जग कीरत होय ।
वज्रधर स्वामी चन्द्रधर नेम, चन्द्रबाहु कहिये जिन बैन ।।
भुजंगम ईश्वर जग के ईश, नेमीश्वर जू की विनय करीश ।
वीर्यसेन वीरज बलवान, महाभद्र जी कहिये जान ।।
देवयश स्वामी श्री परमेश, अजित वीर्य सम्पूर्ण नरेश ।
विद्यमान बीसी पढ़ो चितलाय, बाढ़े धर्म पाप क्षय जाय ।।

बाढ़े धर्म पाप क्षय जाय, ऐसे चौबीस तीर्थंकर जिन्होंने आठ कर्म, आठ मद, अठारह दोषों को नष्ट कर निर्वाण पद प्राप्त किया,ऐसे जिनेन्द्र देव तिनको बारम्बार नमस्कार हो, ऐसे बीस तीर्थंकर विदेह क्षेत्र में सदा सर्वदा विराजमान तिनको नमस्कार कीजे तो पुण्य की प्राप्ति होय।

विनय – बैठक

अब कहा दर्शावत हैं आचार्य–

''शास्त्र सूत्र सिद्धांत नाम अर्थ जी''

शास्त्र नाम काहे सों कहिये – जिनमें सच्चे देव, सच्चे गुरू और सच्चे धर्म की महिमा चले – सो कैसे हैं सच्चे देव, गुरू, धर्म और शास्त्र ?

साँचो देव सोई जामें दोष को न लेश कोई ।
साँचो गुरू वही जाके उर कछु की न चाह है ।।
सही धर्म वही जहाँ करुणा प्रधान कही ।
सही ग्रन्थ वही जहाँ आदि अंत एक सो निर्वाह है ।।
यही जग रतन चार ज्ञान ही में परख यार ।
साँचे लेहु झूठे डार नरभव को लाह है ।।
मनुष्य विवेक बिना पशु के समान गिना ।
यातैं यह बात ठीक पारणी सलाह है ।।

ऐसे शाश्वते देव, गुरू, धर्म की महिमा सहित, जामें आचार, विचार, क्रियाओं का प्रतिपादन होय, ज्ञान की उत्पत्ति, कर्मों की खिपति, जीव की मुक्ति, दर्शन, ज्ञान, चरित्र, कलन, चरन, रमन, उवन दृढ़, ज्ञान दृढ़, मुक्ति दृढ़, ऐसी त्रिक स्वभाव रूप वार्ता चले, अरू समुच्चय वर्णन जामें होय, ताको नाम शास्त्र जी कहिये और जामें ताड़न मारन है, वध बंधन और विदारण है, या प्रकार कुवार्ता रूप कथन चले ताको नाम कुशास्त्र कहिये। सांचे शास्त्र तो उन्हें ही कहिये है – जाके सुने से जीव को बोध बीज की उत्पत्ति होय तथा आत्म स्वरूप को श्रद्धान और सम्यक्त्व को लाभ होय है। **।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।**

अब सूत्र नाम काहे सों कहिये – जामें संक्षेप में ही बहुत सारभूत कथन होय, जाके सुने से जीव के मन, वचन, काय एक रूप हो जायें, नहीं तो मन कहूँ को चले, वचन कछू कहे, काया जाकी स्थिर न होय, ताको एक सूत्र न होय। धन्य हैं – धन्य हैं श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य जी महाराज जिनके मन, वचन, काय, उत्पन्न, हित, शाह, नो, भाव, द्रव्य यह नौ सूत्र सुधरे तथा दसवें आत्मसूत्र अर्थात् आत्मज्ञान की प्राप्ति कर चौदह सिद्धान्त ग्रन्थों की रचना करी – **।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।**

।। श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की–जय ।।

अनन्त वीर्य, सूरिप्रभ और विशाल कीर्ति की जग में कीर्ति हो रही है। वज्रधर स्वामी, चन्द्रधर (चन्द्रानन) और चन्द्रबाहु का जिनवाणी में कथन किया गया है।
भुजंगम और ईश्वर जी जगत के ईश्वर हैं, नेमीश्वर प्रभु की मैं विनय करता हूँ। वीर्यसेन वीर्य बल से संपन्न हैं, महाभद्र जी को तीर्थंकर कहा गया ऐसा जानो।
श्री देवयश स्वामी परमेश्वर हैं, अजितवीर्य पूर्णत्व को प्राप्त मनुष्यों के ईश्वर हैं। विदेह क्षेत्र में बीस तीर्थंकर सदा विद्यमान रहते हैं, ऐसी विद्यमान बीसी को भाव सहित चित्त की एकाग्रता पूर्वक पढ़ो इससे धर्म की वृद्धि होगी और पाप क्षय हो जायेंगे।

विनय बैठक का अर्थ–

विनय पूर्वक बैठकर सत् – असत्, सच्चे – झूठे, हेय, ज्ञेय, उपादेय का विचार करके निर्णय करना, सत्य को स्वीकार करना, असत्य का त्याग करना, यही विनय बैठक का अर्थ है। जैसे अब क्या दर्शाते हैं आचार्य ? शास्त्र सूत्र सिद्धान्त का स्वरूप और अर्थ दर्शाते हैं।

सांचो देव सोई..... छंद का अर्थ–

सच्चे देव वही हैं, जिनमें जन्म जरा आदि लेश मात्र भी कोई दोष नहीं हैं। सच्चे गुरू वे हैं जिनके हृदय में सांसारिक कोई भी चाहना नहीं है। सच्चा धर्म वह है जहां करूणा दया की प्रधानता कही गई है। सच्चे शास्त्र वे हैं जिनमें प्रारंभ से अंत तक निर्विरोध एक रूप सिद्धांत का कथन है। इस प्रकार संसार में यह चार ही रत्न हैं। हे मित्र ! अपने ज्ञान में इन्हें परखो और सच्चे देव, गुरू,शास्त्र, धर्म की श्रध्दा करो, मिथ्या देव, गुरू, धर्म आदि को छोड़ दो इसी में मनुष्य जन्म का लाभ है और यदि सच्चे–झूठे का मनुष्य को विवेक नहीं है तो वह पशु के समान है ; इसलिये सत्य को ग्रहण करना और असत् मिथ्या को छोड़ना यही उचित बात है और यही पारणी अर्थात् ग्रहण करने, आचरण में लाने योग्य सलाह है।

त्रिक स्वभाव और शास्त्र का स्वरूप–

तीन के समूह को त्रिक कहते हैं। यहाँ छह त्रिक का उल्लेख है। सच्चे देव,गुरू,धर्म । आचार, विचार, क्रिया। ज्ञान की उत्पत्ति, कर्मों की खिपति,जीव की मुक्ति। दर्शन, ज्ञान, चारित्र। कलन (ध्यान), चरन (चारित्र), रमन (स्वरूप में लीनता)। उवन दृढ़ (सम्यक्श्रद्धान में दृढ़ता), ज्ञान दृढ़ (सम्यग्ज्ञान में दृढ़ता), मुक्ति दृढ़ (सम्यक्चारित्र में दृढ़ता) जिसमें एक त्रिक या समुच्चय वर्णन हो उसे शास्त्र कहते हैं।

सूत्र नाम..... का अर्थ – सूत्र नाम किसको कहते हैं अर्थात् सूत्र का स्वरूप क्या है ? विस्तार की बात को जिसके द्वारा संक्षेप में कह दिया जाय उसे सूत्र कहते हैं। जैसे – तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।
नौ सूत्र सुधरे – श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज के नौ सूत्र सुधरे, वे इस प्रकार हैं–
१. मन – मन के विचार पवित्र हो गये। **२. वचन –** वाणी से कोमल हित मित प्रिय वचन का व्यवहार होने लगा, कठोर कठिन वचन बोलना छूट गया। **३. काय –** शरीर संयम, तप, साधनामय हो गया। **४. उत्पन्न –** प्रयोजन भूत शुद्धात्मानूभूति की प्रगटता को उत्पन्न अर्थ कहते हैं यही सम्यग्दर्शन कहलाता है, जो उत्पन्न हो गया। **५. हित –** हितकार अर्थ अर्थात् सम्यग्ज्ञान प्रगट हो गया। **६. शाह –** परमात्म स्वरूप में लीनता रूप सहकार अर्थ अर्थात् सम्यक्चारित्र उत्पन्न हो गया। **७. नो –** नो कर्म रूप पुद्गल वर्गणायें साधना के प्रभाव से विगसित पुलकित हो गईं। **८. भाव –** भाव कर्म की धारा विशुध्द हो गई। **९. द्रव्य –** ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्मो में विशेष उपशम, क्षयोपशम और योग्यतानुरूप क्षय की स्थितियां बनीं; इस प्रकार नौ सूत्र सुधरे।

: गाथा : (ज्ञान समु.सार गा. ५६४)

सूत्रं जं जिन उक्तं, तं श्रुतं सुद्ध भाव संकलियं ।
असूत्रं नहु पिच्छदि, सूत्रं ससहाव सुद्धमप्पाणं ।।

अब **सिद्धान्त नाम काहे सों कहिये** – जामें पूर्वापर विरोध रहित सिद्धान्त रूप चर्चा हो, सप्त तत्व,नव पदार्थ, छह द्रव्य,पंचास्तिकाय ऐसे सत्ताईस तत्वों का यथार्थ निर्णय किया होय तथा आत्मोपलब्धि की वार्ता चले, ताको नाम सिद्धान्त ग्रन्थ कहिये।

आगे प्रथमानुयोग जामें २४ तीर्थंकर,१२ चक्रवर्ती,९ नारायण,९ प्रतिनारायण,९ बलभद्र, ऐसे ६३ शलाका के महापुरुषों की कथा का वर्णन होय ताको नाम प्रथमानुयोग ग्रन्थ कहिये। न जीव को आदि है न जीव को अंत है। चार गति चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते अनंत काल हो गया परन्तु अपने आदि अन्त की खबर नहीं करी । आदि कब जानिये जब यह जीव नि:शंकितादि गुण सहित सम्यक्त्व को प्राप्त हो और अंत कब जानिये, जब मोहनीय कर्म को नाशकर तेरह प्रकार का चारित्र धारण करे, बाईस परीषह जीतकर, पंच चेल, चौबीस प्रकार परिग्रह त्याग, अट्ठाईस मूलगुण धार, चार घातिया कर्मों की निर्जरा कर, केवलज्ञान प्राप्त कर सिद्धस्थान को प्राप्त हो, आवागमन कर रहित हो, तब अंत जानिये। धन्य है उन आचार्यों को जिनने आदि अन्त की महिमा कही।

यथा नाम तथा गुण, गुण शोभित नाम, नाम शोभित गुण। धन्य हैं वे भगवान जिनके नाम भी वन्दनीक हैं और गुण भी वन्दनीक हैं, जिनके नाम लिये अर्थ अर्थात् रत्नत्रय की प्राप्ति होय।

दोहा : जयमाल

नाम लेत पातक कटें, विघन विनासे जांय ।
तीन लोक जिन नाम की, महिमा वरणी न जाय ।। १ ।।
गुण अनंतमय परमपद, श्री जिनवर भगवान ।
ज्ञेय लक्ष है ज्ञान में, अचल महा शिवथान ।। २ ।।
अगम हती गुरू गम बिना, गुरूगम दई लखाय ।
लक्ष कोस की गैल है,पल में पहुँचे जांय ।। ३ ।।
विघन विनाशन भय हरन, भयभंजन गुरूतार ।
तिनके नाम जो लेत ही, संकट कटत अपार ।। ४ ।।
कठिन काल विकराल में, मिथ्या मत रहो छाय ।
सम्यक्भाव उद्योत कर, शिवमग दियो बताय ।। ५ ।।
परम्परा यह धर्म है, केवल भाषित सोय ।
ताकी नय वाणी कथित, मिथ्या मत को खोय ।। ६ ।।
धन्य धन्य जिनधर्म को, सब धर्मों में सार ।
ताको पंचम काल में, दरसायो गुरू तार ।। ७ ।।
धन्य धन्य गुरू तार जी, तारण तुमरो नाम ।
जो नर तुमको जपत हैं, सिद्ध होत सब काम ।। ८ ।।
जो कदापि गुरू तार को, नहिं होतो अवतार ।
मिथ्या भव सागर विषैं, कैसे लहते पार ।। ९ ।।

सूत्रं जं जिन.....श्लोकार्थ –

सूत्र वह है जो जिनेन्द्र भगवान द्वारा कहा गया है, उसको सुनकर शुद्ध भाव को ग्रहण करो, असूत्र को मत देखो अपना स्व स्वभाव शुद्धात्म स्वरूप ही सच्चा सूत्र है।

सिद्धांत नाम..... का अर्थ –

सिद्धांत नाम किसे कहते हैं अर्थात् सिद्धांत का क्या स्वरूप है ? जिसमें ''पूर्वापर विरोध रहित'' पूर्व अर्थात् पहले और अपर अर्थात् बाद में निरूपित किया गया वस्तु स्वरूप का कथन विरोध रहित हो उसे सिद्धांत ग्रंथ कहते हैं। अभिप्राय यह है कि ग्रंथ में पहले के और बाद के कथन में कोई विरोध न हो वह सिद्धांत ग्रंथ कहलाता है।

सम्यग्दर्शन के आठ अंग –

१. नि:शंकित, २. नि:कांक्षित, ३. निर्विचिकित्सा, ४. अमूढ़ दृष्टि, ५. उपगूहन, ६. स्थितिकरण ७. वात्सल्य, ८. प्रभावना।

यथा नाम तथा गुण ..... का अर्थ –

भगवान का जैसा नाम हो, वैसे उनमें गुण भी हों क्योंकि गुणों से नाम की शोभा है और नाम से गुणों की शोभा है अर्थात् गुणों से शोभित होता है नाम और नाम से शोभित होते हैं गुण; इसलिये वे भगवान धन्य हैं जिनके नाम भी वंदनीक हैं और गुण भी वंदनीक हैं। तारण पंथ में यथा नाम तथा गुण के धारी भगवान की आराधना वंदना की जाती है।

नाम लेत पातक ..... स्तवन का अर्थ –

जिनके नाम स्मरण करने से पाप कट जाते हैं, विघ्न बाधायें विनस जाती हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान के नाम की महिमा का तीन लोक में वर्णन नहीं किया जा सकता अर्थात् उनकी महिमा अवर्णनीय है॥ १॥ अनन्त गुणोंमय परम पद में स्थित श्री जिनवर भगवान–सिद्ध परमात्मा हैं, जिनके ज्ञान में आत्म स्वरूप ही ज्ञेय है, उसका ही निरंतर लक्ष्य है और जो महान मोक्ष स्थान में अचल रूप से विराजमान हैं॥ २॥

मोक्ष जाने की रास्ता गुरू के ज्ञान बोध के बिना अगम थी। सद्गुरू ने कृपा करके उस रास्ते का ज्ञान करा दिया यह ज्ञान इतना महान है कि मोक्ष जाने की लाखों कोस की गैल (रास्ता) है किन्तु सद्गुरू द्वारा दिये गये ज्ञान से एक पल में ही मोक्ष पहुंच जाते हैं॥ ३ ॥ श्री गुरू तारण तरण विघ्नों का विनाश करने वाले, भयों का हरण करने और भयों को नष्ट करने वाले हैं। जो भी जीव उनका नाम स्मरण करता है उसके कठिन से कठिन संकट भी दूर हो जाते हैं॥ ४॥ इस भयानक कठिन पंचम काल में मिथ्या मत छा रहे थे, ऐसे समय में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज ने सम्यक् वस्तु स्वरूप को प्रकाशित कर सच्चा मोक्षमार्ग बताया है॥ ५॥ तीर्थंकर भगवन्तों की परम्परा से चला आ रहा यह धर्म है। केवलज्ञानी भगवान ने जो वस्तु का स्वरूप कहा है, उनकी स्याद्वाद अनेकान्तमय कही गई वाणी मिथ्या मान्यता को दूर करनेवाली है॥ ६॥ धन्य है धन्य है जिन धर्म, जो सब धर्मो में सारभूत है जिसको इस पंचम काल में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज ने दर्शाया है॥ ७॥ श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज धन्य हैं, धन्य हैं। हे गुरूदेव ! तारण आपका नाम है अर्थात् स्वयं तिरना और जग के जीवों को तारना आपकी विशेषता है। जो भी मनुष्य आपका स्मरण करते हैं, उनके सभी काम सिद्ध होते हैं॥ ८॥ यदि कदाचित् श्री गुरू तारण तरण स्वामी जी महाराज का इस पंचम काल में अवतरण नहीं होता तो इस मिथ्या संसार सागर से हम पार कैसे पाते ? श्री जिन तारण स्वामी ने हमें समस्त रूढ़ियों और आडम्बरों से मुक्त कर संसार सागर से पार होने का सम्यक् मार्ग प्रशस्त किया है॥ ९॥

(शास्त्र जी की विनय सावधान होकर हाथ जोड़कर करें)

अब श्री शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं – (अस्थाप किये हुए ग्रंथ जी का नाम उच्चारण करें) श्री..... नाम ग्रंथ जी। श्री कहिये शोभनीक, मंगलीक, जय जयवन्त, कल्याणकारी, महासुखकारी श्री भगवान महावीर स्वामी के मुखारविन्द कण्ठ कमल की वाणी इस पंचमकाल में श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज ने प्रगटी, कथी, कही नाम दरसाई। तिनके मति, श्रुत ज्ञान परम शुद्ध हुए और अवधिज्ञान को अंकुर उत्पन्न भयो, ता विषैं पाँच मतें जगीं, जिनमें चौदह ग्रन्थों की रचना करी।

॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥ ॥ श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की – जय ॥

नोट–इसके पश्चात् अस्थाप किये हुए श्री ममलपाहुड़ जी ग्रंथ के फूलना की अचरी तक की दो गाथा और अंतिम गाथा अथवा अन्य ग्रन्थ का अस्थाप किया हो तो प्रथम और अंतिम गाथा का वांचन कर अर्थ सहित प्रवचन करना चाहिये। प्रवचनोपरांत आशीर्वाद सावधान अर्थात् विनय पूर्वक खड़े होकर पढ़ना चाहिये।

आशीर्वाद (अन्तिम)

उत्पन्न रंज प्रवेश गमनं, छद्मस्थ स्वभाव ।
सुक्खेन,सुक्खेन ये दु:खानि काल विलयंति ॥

॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥

अप्प समुच्चय जानिये, ऋषि यति मुनि अनगार ।
पद पस्सय कर्महिं खिपैं,सिद्ध होंय तिहिवार ॥

सिद्ध जाँय देवन के दाता, गुरू के उपदेशे, अपने धर्म के निश्चय, अपनी धारणा के परिचय केतेक जीव निश्चय – निश्चय ब्यासी हजार वर्ष पश्चात् दु:खम – दु:खम काल खिपाय चौथे काल के आदि में पद्मपुंग राजा के यहाँ महापद्म तीर्थंकर देव, अन्मोयं स्वयं स्वयं मुक्ति गामिनो, मुक्ति के विलास असंख्यं गुणं निर्भय बली समर्थ धर्म। श्री जिनेन्द्र देव के वचन सत्य हैं,ध्रुव हैं,प्रमाण हैं –

॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥

॥ चौबीस तीर्थंकर भगवान की–जय ॥ ॥ श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य महाराज की – जय ॥

: अबलबली :

जय गुरू अबलबली उवन कमल, वयन जिन ध्रुव तेरे ।
अन्मोय शुद्धं रंज रमण, चेत रे मण मेरे ॥
जय तार तरण समय तारण, न्यान ध्यान विवंदे ।
आयरण चरण शुद्धं, सर्वन्य देव गुरू पाये ॥
जय नन्द आनन्द चेयानन्द, सहज परमानन्दे ।
परमाण ध्यान स्वयं, विमल तीर्थंकर नाम वन्दे ॥
जय कलन कमल उवन रमण, रंज रमण राये ।
जय देव दीपति स्वयं दीपति,मुकति रमण राये ॥
गुरू तोहि ध्यावत सुख अनन्त स्वामी, तारण जिनदेवा ।
उत्पन्न रंज रमण नन्द जय, मुक्ति दायक देवा ॥

॥ आचार्य दाता, सहाई दाता, प्यारो दाता ॥

अब श्री शास्त्र जी ..... का अर्थ–श्री शास्त्र जी का नाम क्या दर्शाते हैं ? यहाँ हाथ जोड़कर अस्थाप किये हुए ग्रंथों का सस्वर भक्ति पूर्वक नामोल्लेख करना चाहिये। जैसे – 'श्री भय षिपनिक ममलपाहुड नाम ग्रंथ जी', इसी प्रकार जिन–जिन ग्रंथों का अस्थाप किया हो उन– उन ग्रंथों का नाम स्मरण करें।

श्री कहिये ..... का अर्थ – यहां श्री का अर्थ– ग्रंथ में समाहित वाणी से है। श्री अर्थात् वाणी कैसी है ? सुशोभित करने वाली, मंगल करने वाली,उमंग उत्साह बढ़ाकर स्वरूपस्थ करने वाली, कल्याण करने वाली और सुख प्रदान करने वाली है। इन पाँच विशेषणों से युक्त वाणी के लिये आगे पढ़ते हैं –'भगवान महावीर स्वामी के मुखार विन्द कण्ठ कमल की वाणी इस पंचम काल में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य महाराज ने प्रगटी कथी कही नाम दर्शाई ' इस प्रकार यहां श्री का अर्थ वाणी से है।

अंतिम आशीर्वाद ..... का अर्थ – उत्पन्न अर्थात् निज शुद्धात्मानुभूति रूप उत्पन्न अर्थ (सम्यग्दर्शन) को प्रगट करो, उसी में रंजायमान (हर्षित) रहो और सानन्द वीतराग निर्विकल्प समाधि में प्रवेश करो, लीन रहो, अभी छद्मस्थ स्वभाव है, फिर सुख स्वभाव के आश्रय से, सुख स्वभाव के बल से सभी दु:ख और दु:ख पूर्ण काल विला जायेगा।

अप्प समुच्चय ..... दोहा का अर्थ – वीतरागी भव्य आत्मा मुनिजनों के चार समूह जानो–ऋषि, यति, मुनि और अनगार। जो वीतरागी योगी अपने सिद्ध स्वरूप शुद्ध स्वभाव का स्पर्श अर्थात् अनुभव करते हैं, अपने पद की स्वानुभूति में ठहरते हैं, वे उसी समय शाश्वत सिद्ध पद प्राप्त कर लेते हैं।

दु:खम दु:खम काल ..... का अर्थ – यह हुण्डावसर्पिणी पंचम 'दु:खम' काल चल रहा है, छटवां काल 'दु:खम दु:खम' है। इसके पश्चात् आगामी उत्सर्पिणी का प्रारम्भ 'दु:खम दु:खम' काल से होगा, पश्चात् पुन: पंचम काल 'दु:खम' होगा। इस प्रकार इन चारों ही 'दु:खम दु:खम' काल को खिपाकर राजा श्रेणिक का जीव चौथे काल में पद्मपुंग राजा के यहां महापद्म तीर्थंकर पद को प्राप्त होगा अत: ''दु:खम दु:खम काल खिपाय'' ही पढ़ना चाहिये।

अबलबली ..... का अर्थ – हे परम गुरू जिनेन्द्र भगवान ! आपके मुख कमल से उत्पन्न हुए अबल जीवात्मा को –रत्नत्रय की शक्ति से पोषण कर, बलवान बनाने वाले ध्रुव वचन अर्थात् अटल वचन जयवंत हों। हे मेरे मन ! चेत, जाग, अपने शुध्द स्वभाव की अनुमोदना कर, उसी में रंजायमान होकर स्वभाव में ही रमण कर। तारण तरण जिनेन्द्र भगवान की जय हो, जो पूर्ण ज्ञान ध्यान में लीन रहते हुए भव्यात्माओं के लिये तारणहार हैं, उनकी अत्यंत भक्ति पूर्वक वंदना करता हूँ। शुद्ध सम्यक्चारित्र में आचरण करके अर्थात् निर्विकल्प स्वभाव में रमण करके मैंने सर्वज्ञ देव परम गुरू अपने परमात्म स्वरूप को प्राप्त कर लिया है। नन्द, आनन्द, चिदानन्द, सहजानन्द, परमानन्द मयी स्वभाव जयवन्त हो। ध्यान के प्रमाण अर्थात् जितना वीतराग भाव शुध्दोपयोग प्रगट हो रहा है उसमें उतने प्रमाण में स्वयं का विमल तीर्थंकर परमात्म स्वरूप ज्ञान में झलक रहा है, मैं ऐसे सत्स्वरूप की वंदना करता हूँ। अपने ज्ञायक स्वरूप के ध्यान की प्रगटता, रमणता और रंजायमानपना अर्थात् लीनता जिन्हें प्रगट हुई है, ऐसे निज स्वरूप में रमण करने वाले जिनराज की जय हो। परमात्म देव परम केवलज्ञान से परिपूर्ण दैदीप्यमान, स्वयं में प्रकाशमान मुक्ति रमणी के राजा हैं ऐसे जिनराज सदा जयवन्त हों। हे परम गुरू स्वामी तारण तरण जिनेन्द्र भगवान–निश्चय से निज शुद्धात्म स्वरूप ! आपके ध्यान करने से अनन्त सुख की प्राप्ति होती है। साधक से सिद्ध पद की प्राप्ति तक क्रमश: उत्पन्न अर्थ आदि पाँच अर्थ, उत्पन्न रंज आदि पाँच रंज, भय खिपक रमण आदि पाँच रमण, नन्द आदि पाँच नन्द प्रगट होते हैं, यह साधना परमात्म पद और मुक्ति को देने वाली है।

आचार्य दाता..... का अर्थ –आचार्य ज्ञान अर्थात् शिक्षा और दीक्षा के देने वाले हैं, वे मोक्षमार्ग में सहायक दाता हैं और पूज्य प्रिय दाता हैं। यह कहने का प्रयोजन गुरू के प्रति श्रद्धा भक्ति का भाव व्यक्त करना है।

: प्रमाण गाथा :

काऊ ण णमुक्कारं, जिणवर वसहस्स वड्ढमाणस्स ।
दंसण मग्गं वोच्छामि, जहाकम्मं समासेण ।।
सव्वण्हु सव्वदंसी, णिम्मोहा वीयराय परमेट्ठी ।
वन्दित्तु तिजगवन्दा, अरहंता भव्य जीवेहिं ।।
सपरा जंगम देहा, दंसण णाणेण सुद्ध चरणाणं ।
णिग्गंथ वीयराया, जिणमग्गे एरिसा पडिमा ।।
मणुयभवे पंचिन्दिय, जीवट्ठाणेसु होइ चउदसमे ।
एदे गुण गण जुत्तो, गुणमारूढो हवइ अरुहो ।।
णाणमयं अप्पाणं, उवलद्धं जेण झडियकम्मेण ।
चइऊण य परदव्वं, णमो णमो तस्स देवस्स ।।
जिणबिम्बं णाणमयं, संजमसुद्धं सु वीयरायं च ।
जं देइ दिक्खसिक्खा, कम्मक्खय कारणे सुद्धा ।।
संसग्ग कम्म खिवणं, सारं तिलोय न्यान विन्यानं ।
रुचियं ममल सहावं, संसारं तिरंति मुक्ति गमनं च ।।
गुण वय तव सम पडिमा, दाणं जलगालणं अणत्थमियं ।
दंसण णाण चरित्तं, किरिया तेवण्ण सावया भणिया ।।

।। श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की–जय ।।

इसके पश्चात् सावधान (खड़े) होकर श्री जिनवाणी जी को भक्ति भाव और विनय पूर्वक वेदी जी पर विराजमान करके आरती करना चाहिये। आरती के बाद तिलक, प्रसाद – प्रभावना तत्पश्चात् तत्त्वमंगल और अंत में स्तुति करके विनय करना चाहिये।

तिलक – चंदन की विधि –

आरती करने के पश्चात् सभी श्रावकजन अपने स्थान पर विनयपूर्वक बैठ जावें।
चंदन की कटोरी पंडित जी अपने हाथ में लेकर यह श्लोक पढ़ें –

चंदनं शांति दातारं, सर्व सौख्य प्रदायकम् ।
प्रतीकं रत्नत्रयं विन्दं, सिद्ध सिद्धं नमाम्यहम् ।।

यह मंत्र पढ़ने के बाद कोई सज्जन सिर पर टोपी लगाकर अनामिका अर्थात् छिंगुरी के पास वाली अंगुली से सबको माथे के भ्रूमध्य अर्थात् दोनों भौहों के बीच में चंदन लगावें। कोई बहिन माताओं बहिनों को चंदन लगावें।

चंदन लगाने की क्या विशेषता है ?

चंदन शांति स्वरूप है, माथे का चंदन सौभाग्य सूचक तथा हम किसके उपासक हैं इसका प्रतीक है। विंदी लगाना सिद्ध स्वरूप का प्रतीक है तथा खौर का चंदन लगाना अनन्त चतुष्टय, रत्नत्रय सहित सिद्ध स्वरूप का प्रतीक है।

प्रसाद – प्रभावना

आये हुए प्रसाद की थाली और व्रत भंडार की राशि पंडित जी अपने हाथ में लेकर खड़े होवें और धन्यवाद स्वरूप शुभकामना करें – श्री शुभ स्थान..... निवासी श्रीमान्..... की ओर से .....के उपलक्ष्य में प्रभावना निमित्त प्रसाद आया तथा ..... रुपया व्रत भण्डार में प्राप्त हुए। आपके शुभ भावों में निरन्तर वृद्धि हो।

काऊण णमुक्कारं आदि.....गाथाओं का अर्थ–

जिनवर वृषभ ऐसे जो प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव तथा अंतिम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान हैं, उन्हें नमस्कार करके दर्शन अर्थात् मत का जो मार्ग है उसे यथानुक्रम से संक्षेप में कहूंगा।

अरिहंत परमेष्ठी सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, निर्मोह, वीतरागी हैं, वे भगवान तीनों लोकों के भव्य जीवों के द्वारा वंदनीय हैं। जिनका चारित्र दर्शन ज्ञान से शुद्ध निर्मल है, उनकी स्व – परा अर्थात् अपनी और परकी (गुरू और शिष्य की अपेक्षा) चलती हुई देह है वह जिन मार्ग में ''जंगम प्रतिमा'' है। अथवा स्व–परा अर्थात् आत्मा से भिन्न है देह, वह कैसी है ? निर्ग्रंथ वीतराग है, जिन मार्ग में ऐसी 'प्रतिमा' कही गई है।

मनुष्य भव में पंचेन्द्रिय नामक चौदहवें जीवस्थान अर्थात् जीवसमास, उसमें इतने गुणों के समूह से युक्त तेरहवें गुणस्थान को प्राप्त अरिहंत होते हैं।

जिन्होंने पर द्रव्य को छोड़कर द्रव्य, भाव, नो कर्मो की निर्जरा कर ज्ञानमयी आत्मा को प्राप्त कर लिया है ऐसे देव को हमारा नमस्कार हो, नमस्कार हो।

जिनबिम्ब कैसा है ? ज्ञानमयी है, संयम से शुद्ध है, अतिशय वीतराग है, जो शिक्षा और दीक्षा देता है, कर्म के क्षय का कारण और शुद्ध है। जिनमें इतनी विशेषतायें हों ऐसे वीतरागी आचार्य परमेष्ठी ही सच्चे 'जिनबिम्ब' होते हैं।

ममल स्वभाव की रुचि पूर्वक स्वभाव का संसर्ग करने से कर्म क्षय हो जाते हैं, ज्ञान–विज्ञान ही तीन लोक में सार है इसी के बल से ज्ञानी संसार से तरते और मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

अष्ट मूलगुण, बारह व्रत, बारह तप, समता भाव, ग्यारह प्रतिमायें, चार दान, पानी छानकर पीना, रात्रि भोजन नहीं करना, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र की साधना यह श्रावक की त्रेपन क्रियाएं कही गई हैं।

आरती क्यों की जाती है ?

जब मंदिर विधि करने से भावों में विशुध्दता आती है, शुद्धता की अनुभूति होती है तब हृदय भाव विभोर हो जाता है, इन्हीं शुभभावों सहित ज्ञान की प्रकाशक जिनवाणी की भक्ति पूर्वक ज्ञान ज्योति से आरती प्रज्ज्वलित कर नृत्य करते हैं जिससे परिणामों में और अधिक विशुद्धता आती है।

दूसरी बात यह है कि तारण समाज में एक चेल और पाँच चेल की आरती बनाई जाती है। आरती ज्योति रूप है इस ज्योति स्वरूप को 'दीप्ति' कहा गया है। दीप्ति का अर्थ होता है – ज्ञान। इस प्रकार एक चेल की आरती केवलज्ञान की प्रतीक है और पाँच चेल की आरती पाँच ज्ञान की प्रतीक है, जो सत्ता अपेक्षा प्रत्येक जीव के पास हैं। ऐसे सम्यग्ज्ञान की दीप्ति अर्थात् ज्योति मेरे अंतर में प्रकाशित हो इसी अभिप्राय से आरती की जाती है।

प्रसाद – प्रभावना

प्रभावना हेतु आये हुए प्रसाद की जय बोलने के साथ ही यदि पात्रभावना हो, व्रत उद्यापन हो या अन्य संस्थाओं, तीर्थक्षेत्रों, पत्र पत्रिकाओं के लिये दान दिया गया हो या चैत्यालय आदि के लिये उपकरण, ग्रंथ आदि आये हों तो व्रत भंडार के साथ सबकी सूचना देवें और प्रभावना करें ।

(प्रसाद वितरण के समय माताओं बहनों को भक्ति भाव पूर्वक भजन पढ़ना चाहिये)

प्रसाद वितरण का क्या महत्त्व है ?

प्रसाद – दान की प्रभावना स्वरूप वितरण किया जाता है। किसी को चढ़ाया नहीं जाता या चढ़ाकर नहीं बांटा जाता। प्रसाद प्रभावना स्वरूप बांटने से भावों में निर्मलता आती है और पुण्य की वृद्धि होती है।

विशेष – प्रसाद प्रभावना के पश्चात् तत्त्वमंगल पढ़ना चाहिये तत्पश्चात् जिनवाणी स्तुति पढ़कर कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े होकर नौ बार णमोकार मंत्र का स्मरण करके पंचांग नमस्कार पूर्वक विनय करना चाहिये।

श्री बृहद् मंदिर विधि – धर्मोपदेश

प्रारंभ कैसे करें ?

❁ दशलक्षण पर्व के प्रारंभ में, मेला महोत्सव, वेदी प्रतिष्ठा तिलक महोत्सव तथा अन्य विशिष्ट अवसरों पर ध्वजगान पढ़कर ध्वज वंदन एवं ध्वजारोहण करना चाहिये।

❁ सर्व प्रथम तत्त्व मंगल पढ़कर श्री ममलपाहुड़ जी ग्रन्थ से कोई एक फूलना पढ़ें तत्पश्चात् झंझाभक्ति पूर्वक पाँच भजन आयरन फूलना सहित पढ़ना चाहिए। आयरन फूलना के प्रारंभ में आरती प्रज्वलित कर लेना चाहिये।

❁ भजनों के पश्चात् पंडित जी 'सावधान' कहें और सभी श्रावकजन विनय पूर्वक खड़े हो जावें। श्री अध्यात्मवाणीजी ग्रंथराज को उच्चासन पर विराजमान करके सामूहिक रूप से ''जिनवाणी के ज्ञान से सूझे लोकालोक, सो वाणी मस्तक धरूँ सदा देत पदधोक '' यह दोहा पढ़कर विनय सहित पंचांग नमस्कार करें एवं खड़े हो जावें।

❁ पंडित जी 'जय नमोऽस्तु' कहें और सभी भव्यजन मिलकर तत्त्व मंगल पढ़ें। पश्चात् पहले दिन तीनों बत्तीसी और धम्म आयरन फूलना क्र. ८७ का अस्थाप करें।

❁ **अस्थाप की विधि–**सभी श्रावकजन हाथ जोड़कर विनय पूर्वक खड़े होवें। पंडित जी ''ॐ परमात्मने नम:'' और ''ॐ नम:सिद्धं'' मंत्र ३–३ बार उच्चारण करवाकर ''अथ श्री भय षिपनिक ममलपाहुड जी – धम्म आयरन फूलना अस्थाप्यते'' कहें और प्रारंभ से लेकर उत्तम क्षमा धर्म तक की गाथायें पढ़ें। पश्चात् पुन: उपरोक्त मंत्र का उच्चारण करवाकर श्री मालारोहण जी, श्री पंडितपूजा जी और श्री कमल बत्तीसी जी ग्रंथ का अस्थाप करें। पहले दिन फूलना और तीनों बत्तीसी के नाम के साथ ''अस्थाप्यते'' शब्द का उच्चारण करें और शेष दिनों में मंत्रोच्चारण के बाद फूलना और तीनों बत्तीसी के नाम के साथ ''प्रारभ्यते''शब्द बोलें। जैसे – ''अथ श्री मालारोहण जी ग्रंथ प्रारभ्यते''इसी प्रकार अन्य ग्रंथों का भी उल्लेख करें।

❁ प्रथम दिन प्रात: काल के अस्थाप में श्री मालारोहण जी, श्री पंडितपूजा जी, श्री कमलबत्तीसी जी ग्रंथ की ३–३ गाथाओं का सावधान अर्थात् विनय पूर्वक खड़े होकर सस्वर वांचन करें।

❁ दूसरे दिन से प्रात:काल धम्म आयरन फूलना की प्रत्येक धर्म से संबंधित गाथा आचरी सहित पढ़ें तथा श्री पंडितपूजा जी और श्री कमल बत्तीसी जी की मंगलाचरण की गाथा पढ़कर ३–३ गाथाओं का प्रतिदिन क्रमश: वांचन करें। रात्रि में लघु मंदिर विधि करें, प्रतिदिन विनती फूलना या अन्य कोई भी फूलना पढ़कर श्री मालारोहण जी ग्रंथ की प्रतिदिन ३–३ गाथायें पढ़ें।

❁ अस्थाप के पश्चात् तथा अन्य दिनों में अस्थाप किये हुए ग्रन्थों की गाथायें पढ़ने के पश्चात् पंडितजन धर्मोपदेश का भक्ति पूर्वक वांचन करें तथा सभी श्रावक, श्रोतागण विनयपूर्वक एकाग्रचित्त से धर्मोपदेश श्रवण करें।

❁ मंदिर विधि में जो पद्यात्मक विषय, दोहा, श्लोक, चौबीसी आदि हैं, इनको सामूहिक रूप से शुभभाव पूर्वक पढ़ना चाहिये। बीच–बीच में जो ''जयन् जय बोलिए जय नमोऽस्तु'' कहा जाता है या जय बोली जाती है वह भी सबको एक साथ उत्साह पूर्वक बोलना चाहिये।

❁ सूत्र नाम काहे सों कहिये या शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं, पंडित जी के बोलने के बाद सभी श्रावकजनों को एक साथ – कहिये जी, दर्शाइये जी बोलकर वाणीजी का बहुमान करना चाहिये।

❁ अस्थाप किये हुए ग्रन्थों की गाथायें पढ़कर प्रवचन करने के पश्चात् सावधान होकर तीन आशीर्वाद पढ़ना चाहिये, अन्त में अंतिम आशीर्वाद अबलबली आदि का वांचन करना चाहिये।

❁ अस्थाप और तिलक प्रात:काल ही सम्पन्न किये जाते हैं।

धर्मोपदेश का क्रम

- तत्त्व मंगल
- ओंकार मंगल
- अस्थाप किये हुए ग्रंथों की गाथायें
- श्री धर्मोपदेश
- केवलज्ञानी भगवान की महिमा
- सम्यक्त्व की महिमा
- श्री अनंतवीर्य स्वामी जी का प्रसाद आदिनाथ जी लै उत्पन भये
- आदिनाथ जी का वैराग्य और केवलज्ञान
- देवांगली पूजा
- इन्द्रध्वज पूजा
- शास्त्र पूजा
- गुण पाठ पूजा
- भगवान आदिनाथ जी का निर्वाण
- वर्तमान चौबीसी
- विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर
- धर्म की महिमा
- जिनेन्द्रों का एक सा स्वरूप
- भगवान महावीर स्वामी की महिमा
- मंगल – चौथे काल के अन्त.....
- राजा श्रेणिक का समवशरण के लिये प्रस्थान और महावीर प्रभु की स्तुति भक्ति
- राजा श्रेणिक का मध्यनायक के रूप में उल्लेख
- राजा श्रेणिक के आगामी चौबीसी में प्रथम तीर्थंकर होने की सूचना
- भगवान महावीर स्वामी का निर्वाण
- आशा रूपी नदी की विशेषता
- धर्मोपदेश के लिपिबद्ध कर्ता
- वक्ता श्रोता की विशेषता
- शास्त्र सूत्र सिद्धांत की व्याख्या
- नाम लेत पातक कटें.....स्तवन
- श्री शास्त्र जी का नाम
- अस्थाप किये हुए ग्रंथों की गाथा का वांचन
- गाथाओं पर व्याख्या, प्रवचन
- तीन आशीर्वाद
- अंतिम आशीर्वाद
- अबलबली
- प्रमाण गाथायें
- आरती
- चंदन
- प्रसाद–प्रभावना
- तत्त्व मंगल
- स्तुति

साधारण (लघु) मंदिर विधि का क्रम

- तत्त्व मंगल
- ओंकार मंगल
- फूलना वांचन
- वर्तमान चौबीसी
- विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर
- शास्त्र सूत्र सिद्धांत की व्याख्या
- दोहा स्तवन – नाम लेत.....
- शास्त्र जी का नाम
- अस्थापित ग्रंथ की गाथा वांचन
- गाथाओं पर व्याख्या, प्रवचन
- अंतिम आशीर्वाद
- अबलबली
- प्रमाण गाथायें
- आरती
- चंदन
- प्रसाद– प्रभावना
- तत्त्व मंगल
- स्तुति

धम्म आयरन फूलना

गुन आयरन धम्म आयरनं, आयरन न्यान पय परम पयं ।
तव आयरन जिनय जिन उत्तं, आयरन तिअर्थ सु ममल पयं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ १ ॥

(गुन आयरन धम्म आयरनं) गुणों में आचरण करना ही धर्म का आचरण है **(आयरन न्यान)** ज्ञान पूर्वक इस आचरण से **(पय परम पयं)** परम पद की प्राप्ति होती है **(जिन उत्तं)** श्री जिनेन्द्र भगवान कहते हैं कि **(जिनय)** स्वभाव को जीतने अर्थात् स्वभाव में लीनता रूप **(तव आयरन)** तपश्चरण को धारण करो **(तिअर्थ सु ममल पयं)** रत्नत्रयमयी अपने ममल पद में लीन रहना **(आयरन)** सम्यक्चारित्र है **(उव)** परमात्म सत्ता स्वरूप **(सु ममल पयं)** अपने ममल पद में **(सम)** सम भाव [वीतराग भाव] पूर्वक **(रमन)** रमण करना **(षिम)** उत्तम क्षमा आदि धर्म है।

उव उवन पयं उव समय समं, तं विंद रमन उव सुन्न समं ।
उव उवन सरनि विष विषम रमनि,उत्पन्न षिपिय जिननाथ सुयं ॥
भवियन, भय षिपिय अमिय रस मुक्ति जयं ॥ २ ॥ आचरी ॥

(उव उवन पयं) ओंकारमयी परमात्म स्वरूप निज पद उदित हुआ है **(उव समय समं)** शुद्धात्मा ही परमात्म स्वरूप है **(उव सुन्न समं)** ओंकारमयी शून्य स्वभाव के आश्रय से **(तं विंद रमन)** निर्विकल्प स्वानुभूति में लीन रहो **(सुयं)** अपने **(उव)** परमात्म सत्ता स्वरूप **(जिननाथ)** जिनेन्द्र पद को **(उत्पन्न)** प्रकट करो, इससे **(उवन सरनि)** संसार में जन्म – मरण का होना और **(विष विषम रमनि)** दुःखदाई रागादि रूप विष में रमण करना **(षिपिय)** हमेशा के लिये छूट जायेगा **(भवियन)** हे भव्यात्मन् ! **(भय षिपिय)** भयों को क्षय करने वाले **(अमिय रस)** अमृत रस में रमण करके **(मुक्ति जयं)** मुक्ति को प्राप्त करो।

उत्तम षिम उवन उवन जिनु रमनं, उववन्न कम्मु विलयंतु सुयं ।
उत्पन्न षिपिय भय षिपक रमन जिनु, तं न्यान अमिय रस ममल पयं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ ३ ॥
॥ उव उवन ॥

(उवन उवन जिनु रमनं) अपने जिन स्वभाव के स्वानुभव में लीन रहना **(उत्तम षिम)** उत्तम क्षमा धर्म है, इससे **(उववन्न कम्मु)** कर्मों का उत्पन्न होना **(विलयंतु सुयं)** स्वयं विला जाता है **(उत्पन्न षिपिय)** अपने क्षायिक भाव को उत्पन्न करो **(रमन जिनु)** जिन स्वभाव में रमण करो, इससे **(भय षिपक)** भय क्षय हो जायेंगे **(तं न्यान अमिय रस)** ज्ञानमयी अमृत रस से परिपूर्ण **(ममल पयं)** ममल पद में लीन रहो यही उत्तम क्षमा धर्म है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से क्रोध कषाय का अभाव होना उत्तम क्षमा धर्म है।

मय मूर्ति तं अर्क रमन जिनु, दर्स दर्स उत्पन्न रसं ।
वारापार अपार रमन जिनु, दिस्टि सब्द उत्पन्न जिनं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ ४ ॥
॥ उव उवन ॥

(तं अर्क) परम दैदीप्यमान **(मय मूर्ति)** पूर्ण प्रकाशमयी चैतन्य मूर्ति **(जिनु रमन)** वीतराग जिन स्वभाव में रमण करो **(दर्स दर्स उत्पन्न रसं)** देखो देखो ! स्वानुभव में अतीन्द्रिय अमृत रस उत्पन्न हो रहा है **(वारापार अपार)** यह

अपरम्पार है, इसकी कोई सीमा नहीं है **(रमन जिनु)** ऐसे वीतराग स्वभाव में रमण करो **(दिस्टि सब्द)** दृष्टि में अर्थात् उपयोग में जिन वचनों के अनुसार **(उत्पन्न जिनं)** वीतराग जिन स्वरूप उत्पन्न हो गया है, यही उत्तम मार्दव धर्म है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से ज्ञान आदि आठ मदों का अभाव होना उत्तम मार्दव धर्म है।

आर्जव आयरन सु चरन रमन जिनु, उववन्न समय सम समय जिनं ।
न्यान विन्यान सु आर्जव ममलं, न्यान अन्मोय सु विष विलयं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। ५ ।।
।। उव उवन ।।

(आर्जव) आर्जव धर्म **(सु चरन)** सम्यक्चारित्र रूप **(आयरन)** आचरण **(रमन जिनु)** अपने जिन स्वभाव में रमण करना है **(समय सम)** शुद्धात्म स्वरूप के आश्रय पूर्वक **(न्यान विन्यान सु)** ज्ञान विज्ञानमयी अपने **(समय जिनं)** वीतराग शुद्धात्म स्वरूप **(ममलं)** ममल स्वभाव में रहने से **(आर्जव)** उत्तम आर्जव धर्म **(उववन्न)** प्रकट होता है **(न्यान अन्मोय सु)** अपने ज्ञान स्वभाव में लीन होने से **(विष विलयं)** रागादि का विष विलय अर्थात् क्षय हो जाता है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से माया कषाय रूप कुटिलता का अभाव होना उत्तम आर्जव धर्म है।

सत्यं तं सहजनन्द जिनु रमनं, रमन विंद रै उवन समं ।
भय सल्य संक विलयंतु जिनय जिनु,निसंक सब्द दिपि दिप्ति रमं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। ६ ।।
।। उव उवन ।।

(सहजनन्द जिनु रमनं) सहजानंदमयी जिन स्वभाव में रहना ही **(सत्यं तं)** उत्तम सत्य धर्म है **(रमन विंद रै)** सानंद निर्विकल्प स्वभाव में रति पूर्वक रमणता से **(उवन समं)** अपूर्व समभाव अर्थात् वीतरागता उदित होती है **(जिनय जिनु)** वीतराग स्वभाव को जीतने पर **(भय सल्य संक विलयंतु)** भय शल्य शंकायें विला जाती हैं **(निसंक)** नि:शंक होकर **(सब्द)** जिन वचनों के अनुसार **(दिपि दिप्ति रमं)** परम दैदीप्यमान ज्ञान स्वभाव में लीन रहो अर्थात् द्रव्य दृष्टि पूर्वक अपने द्रव्य स्वभाव को देखो यही उत्तम सत्य धर्म है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से झूठ पाप का अभाव होना और सत् स्वरूप में आचरण होना यही उत्तम सत्य धर्म है।

सौच्य सहकार सहज रै रमनं, हिययार उवन पय उवन रमं ।
उव उवन मिलन उव उवन विलन, तं भुक्त उवनु सुइ भुक्त विलं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। ७ ।।
।। उव उवन ।।

(सहज) सहज स्वभाव का **(सहकार)** सहकार कर **(रै रमनं)** रति पूर्वक रमण करो, यही **(सौच्य)** शुचिता अर्थात् उत्तम शौच धर्म है **(उवन रमं)** इस रमणता का उदय होना ही **(हिययार उवन पय)** हितकारी पद का प्रकट होना है **(उव उवन मिलन)** स्वानुभव में ओंकार स्वरूप से मिलो **(उव उवन)** परमात्म सत्ता स्वरूप के उदय होने पर **(विलन)** पर भाव विला जायेंगे **(तं भुक्त उवनु)** स्वानुभव में स्वभाव का भोग करने पर **(सुइ भुक्त विलं)** अशुद्ध पर्याय का भोग करना स्वयं ही विला जायेगा।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से लोभ कषाय का अभाव होना, निर्लोभता, शुचिता, पवित्रता का प्रगट होना उत्तम शौच धर्म है।

अन्मोय अबलबलि विषय विनन्द विली, सहयार उवन पय मुक्ति मिलं ।
संजम सुइ जयो जयो जय रमनं, जाता उववन्नु सु मुक्ति जयं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ ८ ॥
॥ उव उवन ॥

(अन्मोय अबलबलि) अबलबली स्वभाव की अनुमोदना करने से **(विषय विनन्द विली)** विषय जनित दुःख विला जाता है **(उवन पय)** निज पद की अनुभूति को **(सहयार)** सहकार करने रूप सम्यक्चारित्र से **(मुक्ति मिलं)** मुक्ति की प्राप्ति होती है **(सुइ जयो जयो)** शुद्धात्म स्वरूप की जय हो जय हो **(जय रमनं)** इसी जयवंत स्वरूप में रमण करना **(संजम)** उत्तम संयम धर्म है **(जाता उववन्नु सु)** अपने त्रिकाली ज्ञाता स्वभाव का उत्पन्न होना ही **(मुक्ति जयं)** मुक्ति को प्राप्त करना है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से हिंसा पाप का अभाव होना, पाँच स्थावर, एक त्रस इस प्रकार षट्काय के जीवों की रक्षा करना तथा पाँच इंद्रियों और मन को वश में करना उत्तम संयम धर्म है।

तप तत्काल उवन सुइ उवनं, उव उवन न्यान सुइ विषय विलयं ।
उववन्न परम पय परम उवन जय, तं कम्मु विलय सुई मुक्ति पयं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ ९ ॥
॥ उव उवन ॥

[रागादि भावों का त्याग करके] **(तत्काल उवन)** इसी समय स्वानुभव में ठहरना **(सुइ उवनं)** शुद्धात्म स्वरूप का उदित हो जाना **(तप)** उत्तम तप धर्म है **(उव उवन न्यान)** परमात्म सत्ता स्वरूप के स्वानुभव सम्पन्न ज्ञान के बल से **(सुइ विषय विलयं)** विषय विकार अथवा पर ज्ञेय सहज ही विला जायेंगे **(परम उवन जय)** परमात्म स्वरूप का अनुभव जयवंत हो, इससे ही **(उववन्न परम पय)** परम पद उत्पन्न होता है, और **(तं कम्मु विलय)** कर्मों की निर्जरा होने पर **(सुइ मुक्ति पयं)** सहज ही मुक्ति पद की प्राप्ति होती है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय पूर्वक इच्छाओं का निरोध करना, १२ प्रकार के तप का पालन करना और समस्त रागादि भावों का परिहार कर स्वरूप में लीन रहना उत्तम तप है।

त्यागं तिक्त तिक्त पर पर्जय, भय सल्य संक विलयंतु सुयं ।
दानं तं नन्त नन्त जिन रमनं, त्याग न्यान सुइ सिद्धि जयं ॥
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ॥ १० ॥
॥ उव उवन ॥

(पर पर्जय) पर पर्याय का **(तिक्त तिक्त)** देखना मानना छूट जाये **(त्यागं)** यही उत्तम त्याग धर्म है, इससे **(भय सल्य संक विलयंतु सुयं)** भय, शल्य, शंकायें स्वयं ही विला जाती हैं **(तं नन्त नन्त)** अपने अनंत चतुष्टयमयी **(जिन रमनं)** जिन स्वभाव में उपयोग लगाना अर्थात् वीतराग स्वभाव में रमण करना **(दानं)** दान है, ऐसे **(त्याग न्यान)** ज्ञान पूर्वक त्याग से **(सुइ सिद्धि जयं)** सहज ही सिद्धि मुक्ति की प्राप्ति होती है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से चोरी पाप का त्याग और अंतर में रागादि भावों का त्याग तथा व्यवहार में चार प्रकार के दान देना यही उत्तम त्याग धर्म है।

आकिंचन आयरन जिनय जिनु, अर्थति अर्थ सु ममल पयं ।
षट् कमलह तह अंगदि अंगह, आयरन धम्म तं मुक्ति पयं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। ११ ।।
।। उव उवन ।।

(जिनु जिनय) वीतरागी पद को जीतना अर्थात् निर्ग्रन्थ साधु पद धारण करके **(अर्थति)** प्रयोजनीय रत्नत्रयमयी **(सु ममल पयं)** अपने ममल पद में **(आयरन)** आचरण करना **(आकिंचन)** उत्तम आकिंचन्य धर्म है **(षट् कमलह तह)** तथा षट् कमल की साधना के द्वारा **(अंगदि अंगह)** सर्वांग शुद्ध स्वभाव रूप **(आयरन धम्म)** धर्म में आचरण **(तं मुक्ति पयं)** मुक्ति पद को देने वाला है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय से चौबीस प्रकार के परिग्रह का त्याग कर निःस्पृह आकिंचन्य निर्ग्रन्थ वीतरागी हो जाना उत्तम आकिंचन्य धर्म है।

बंभ चरन आयरन अरुह रुइ, षट् रमन रयन सुइ जिनय जिनं ।
अबंभ रमन सुइ विलय सहज जिनु, अन्मोय न्यान सुइ बंभ पयं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। १२ ।।
।। उव उवन ।।

(अरुह रु इ) अरिहंत अर्थात् परमात्म स्वरूप में रुचि पूर्वक **(आयरन)** आचरण करना **(बंभ चरन)** उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म है **(षट् रमन)** षट् रमन अर्थात् छह प्रकार से स्वरूप रमण की साधना के द्वारा **(सुइ रयन)** अपने रत्नत्रयमयी **(जिनं जिनय)** जिनेन्द्र स्वरूप को जीतो अर्थात् प्रकट करो **(सहज जिनु)** सहजानन्द जिन स्वभाव में रहो, इससे **(अबंभ रमन)** अब्रह्म रूप पर पर्याय में रमण करना **(सुइ विलय)** स्वयं विला जायेगा **(अन्मोय न्यान)** ज्ञान स्वभाव के आश्रय से **(सुइ पयं)** निज पद में रहना ही **(बंभ)** ब्रह्मचर्य धर्म है।

सार सिद्धांत – स्वभाव के आश्रय पूर्वक कुशील पाप का त्याग और पाँच इन्द्रियों के २७ विषयों पर विजय प्राप्त करना, ब्रह्म स्वरूप में चर्या करना उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म है।

दह विहि आयरन सुयं जिन रमनं, भय षिपनिकु सुइ अमिय रसं ।
तारन तरन सु विंद रमन जिनु, अन्मोय समय सिहु मुक्ति जयं ।।
उव सम षिम रमन सु ममल पयं ।। १३ ।।
।। उव उवन ।।

(सुयं जिन रमनं) अपने जिन स्वभाव में रमण करना **(दह विहि आयरन)** दशलक्षण धर्म का आचरण है **(सुइ अमिय रसं)** अतीन्द्रिय अमृत रस का पान करने से **(भय षिपनिकु)** समस्त पर्यायी भय क्षय हो जाते हैं **(तारन तरन सु)** अपने तारण तरण **(जिनु)** जिन स्वभाव की **(विंद)** निर्विकल्प स्वानुभूति में **(रमन)** रमण करो **(अन्मोय समय)** स्वसमय शुद्धात्म स्वरूप के आश्रय से **(सिहु)** शीघ्र ही अर्थात् अल्प समय में ही **(मुक्ति जयं)** मुक्ति की प्राप्ति होती है।

भावार्थ – धम्म आयरन फूलना, आचार्य प्रवर श्रीमद् जिन तारण तरण मंडलाचार्य जी महाराज द्वारा रचित श्री भय षिपनिक ममल पाहुड़ जी ग्रन्थ की सत्त्याशीवीं फूलना है। इस फूलना में धर्म के दश लक्षणों का उत्कृष्ट स्वरूप निरूपित किया गया है। धम्म आयरन फूलना को लोक भाषा में धर्माचरण फूलना भी कहा

जाता है। जिसका अर्थ है धर्म और धर्म के लक्षणों में आचरण का स्वरूप दर्शन कराने वाली फूलना।

आचार्य कहते हैं कि गुणों में आचरण करना ही धर्म का आचरण है। ज्ञानमयी पद में आचरण करना अनंत गुणों के निधान आत्म स्वरूप में चर्या का प्रतीक है। रागादि भावों का परिहार कर तिअर्थमयी आत्म पद में निमग्न रहना सच्चा तपश्चरण है। परमात्म स्वरूप के आश्रय से निर्विकल्प स्वानुभूति, शून्य स्वभाव में रमण करने से रागादि भावों की विषमता और संसार के परिभ्रमण का अंत हो जाता है।

ज्ञानी जानता है कि जगत पूज्य अरिहंत सिद्ध भगवंतों के समान परम शुद्ध निश्चय से मैं परमात्म स्वरूप शुद्धात्मा हूँ। इसी महिमामय स्वभाव का अनुभव करते हुए आत्मार्थी साधक सम्यग्दर्शन स्वरूप उत्तम संज्ञा को प्राप्त होता है। पुनश्च, इस उत्तम संज्ञा के साथ क्रोधादि विकारों के अभाव होने पर क्षमा आदि गुण प्रगट होते है इन्हें दशलक्षण धर्म कहा जाता है। दशलक्षण धर्म के नाम इस प्रकार हैं – उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम सत्य, उत्तम शौच, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य, उत्तम ब्रह्मचर्य।

धर्म को चार प्रकार से निरूपित किया गया है – १. वस्तु का स्वभाव धर्म है। २. उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्म है। ३. रत्नत्रय धर्म है। ४. जीवों की रक्षा रूप दया अहिंसा धर्म है। धर्म अनेक नहीं होते, धर्म तो एक ही होता है। रागादि विभाव रहित रत्नत्रयमयी चेतना लक्षण स्वरूप वस्तु स्वभाव एक अखंड धर्म है। इसके आश्रय पूर्वक क्रोधादि विकारों का अभाव होता है और उत्तम क्षमा आदि अनेक गुण प्रगट होते हैं। इन गुणों की भी धर्म संज्ञा है। दशलक्षण धर्म इसी के अंतर्गत आता है।

दशलक्षण धर्म का स्वरूप

१. उत्तम क्षमा धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – अपने प्रति अपराध करने वालों का शीघ्र ही प्रतिकार करने की सामर्थ्य होते हुए भी जो पुरुष अपने उन अपराधियों को क्षमा करता है वह उत्तम क्षमा का धारी विज्ञ पुरुष है। अथवा क्रोध के निमित्त उपस्थित होने पर भी जो क्रोध नहीं करता यही उत्तम क्षमा धर्म है।

निश्चय अपेक्षा – क्रोधादि समस्त आस्रव भाव हैं इनका त्याग कर ज्ञानमयी अमृतरस से परिपूर्ण ममल पद में ठहरना उत्तम क्षमा धर्म है।

२. उत्तम मार्दव धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – जो मनस्वी पुरुष कुल, जाति, रूप, तप, बुद्धि, शास्त्र और शील आदि में रंचमात्र भी घमंड अथवा अहंकार नहीं करता है उसको उत्तम मार्दव धर्म होता है। उत्कृष्ट ज्ञानी और उत्कृष्ट तपस्वी होते हुए भी जो मद् नहीं करता वह मार्दव धर्म रत्न का धारी है।

निश्चय अपेक्षा – विभाव परिणामों की गहलता से परे होकर परम दैदीप्यमान चैतन्य मूर्ति जिन स्वभाव के प्रति समर्पित होना, परोन्मुखी दृष्टि का त्याग करना उत्तम मार्दव धर्म है।

३. उत्तम आर्जव धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – जो विचार हृदय में स्थित है, वही वचन में रहता है तथा वही बाहर फलता है अर्थात् शरीर से भी तदनुसार ही कार्य किया जाता है यह आर्जव धर्म है। इसके विपरीत दूसरों को धोखा देना अधर्म है। योगों का वक्र न होना आर्जव धर्म है।

शुभ विचार वाला जो मनस्वी प्राणी कुटिल भाव व मायाचारी के परिणामों को छोड़कर शुद्ध हृदय से चारित्र का पालन करता है वह भव्य जीव आर्जव धर्म का धारी होता है।

निश्चय अपेक्षा – योग की वक्रता के साथ – साथ उपयोग की अस्थिरता को छोड़कर ज्ञान विज्ञानमयी सहज सरल ममल स्वभाव में रहना उत्तम आर्जव धर्म है।

४. उत्तम सत्य धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – श्री जिनेन्द्र भगवान के कहे अनुसार आचारों का पालन करने में असमर्थ होते हुए भी जिन वचनों का यथावत् कथन करना, सिद्धांत से विपरीत कथन नहीं करना यह उत्तम सत्य है। धर्म की वृद्धि के लिये धर्म सहित हितमित प्रिय वचन कहना उत्तम सत्य धर्म है। इस धर्म के व्यवहार की आवश्यकता शिष्य समुदाय के लिये ज्ञान चारित्र सिखाने के लिये होती है।

निश्चय अपेक्षा – शरीरादि अचैतन्य संयोग और रागादि असत् भावों को त्याग कर त्रिकाली शाश्वत सत्स्वरूप की अनुभूति करना एवं उसी में लीन होना उत्तम सत्य धर्म है।

५. उत्तम शौच धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – धन आदि संयोगी पदार्थों में यह मेरे हैं ऐसी अभिलाषा रूप बुद्धि ही मनुष्य को संकटों में डालती है, इस ममत्व को हृदय से दूर करना ही शौच धर्म है। जो जीव समभाव पूर्वक संतोष रूपी जल से मल समूह को धो देते हैं वह मनस्वी प्राणी शौच धर्म के धारी होते हैं।

निश्चय अपेक्षा – सम्यग्ज्ञान पूर्वक सहज स्वभाव में रमण करना, अतीन्द्रिय अमृत रस का भोग करना, इच्छा और रागादि का भोग विलय हो जाना उत्तम शौच धर्म है।

६. उत्तम संयम धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – बाह्य और आभ्यंतर परिग्रह का त्याग, मन वचन काय रूप व्यापार से निवृत्ति, इन्द्रिय विषयों से विरक्ति, कषायों पर विजय और व्रतादि का पालन करना संयम धर्म है।

निश्चय अपेक्षा – मन के समस्त संकल्प – विकल्पों से मुक्त होकर ज्ञाता स्वभाव में रमण करना, आत्मा का आत्मा में संयमन करना उत्तम संयम धर्म है।

७. उत्तम तप धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – अपनी शक्ति को न छिपाकर काय क्लेश आदि करना तप है। जो समभाव से युक्त मोक्षार्थी जीव इस लोक और परलोक के सुख की अपेक्षा न करके अनेक प्रकार का काय क्लेश करता है उसको निर्मल तप धर्म होता है।

निश्चय अपेक्षा – '' समस्त रागादि इच्छा परिहारेण स्व स्वरूपे प्रतपनं विजयनं इति तपः ''। समस्त रागादि भाव और इच्छा का परिहार कर स्व स्वरूप में लीन रहना, अपने आपमें प्रतपन करना उत्तम तप धर्म है।

८. उत्तम त्याग धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – जो मिष्ट भोजन को, राग – द्वेष को उत्पन्न करने वाले उपकरण को और ममत्व भाव के उत्पन्न होने में निमित्तभूत वसति को छोड़ देता है उस मुनि को उत्तम त्याग धर्म होता है।

निश्चय अपेक्षा – समस्त पर पर्यायों का त्याग कर, भय शल्य शंकाओं से रहित होकर अमृतमयी

आत्म स्वभाव में रमण करना उत्तम त्याग धर्म है। (धन आदि पर पदार्थों से ममत्व और राग को छोड़ना त्याग है। पर पदार्थों में मम भाव के अभाव पूर्वक योग्य आहार औषधि आदि पात्रों को देना दान है।

९. उत्तम आकिंचन्य धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – '' मेरा कुछ नहीं है '' ऐसे अभिप्राय पूर्वक संपूर्ण परिग्रह का त्याग करना आकिंचन्य धर्म है। जो मुनि तीन प्रकार के परिग्रह को अर्थात् १. चेतन परिग्रह (संयोगी जीव) २. अचेतन परिग्रह (धन, मकान आदि) ३. मिश्र परिग्रह (नगर, ग्राम आदि) का त्याग कर रागादि विभावों से परे होकर निश्चिंतता से आचरण करता है उसको आकिंचन्य धर्म होता है।

निश्चय अपेक्षा – संयोगी जीव और संयोगी पदार्थों में ममत्व भाव के त्याग पूर्वक प्रयोजनीय रत्नत्रयमयी ममल पद की आराधना करना। षट्कमल के माध्यम से सर्वांग ज्ञान से दैदीप्यमान परमात्म स्वरूप का ध्यान करना और वीतराग भाव में आचरण करना उत्तम आकिंचन्य धर्म है।

१०. उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म –

व्यवहार अपेक्षा – जो साधु अथवा साधक अपने शरीर से निर्ममत्व होता हुआ, विषयाभिलाषा का त्याग कर इन्द्रिय विजयी होता है तथा वृद्धा आदि स्त्रियों को क्रम से माता, बहिन और पुत्री के समान समझता है वह ब्रह्मचारी होता है। नौ बाड़ सहित ब्रह्मचर्य का पालन करना ब्रह्मचर्य कहलाता है।

निश्चय अपेक्षा – ब्रह्म शब्द का अर्थ निर्मल ज्ञान स्वरूप आत्मा है, इस आत्मा में चर्या करना, लीन रहना उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म है।

पर्यूषण शब्द की व्याख्या

पर्व का अर्थ गांठ ,अवसर या संधिकाल भी होता है। जो किसी आध्यात्मिक गहराई से हमें जोड़े वह पर्व कहलाता है।

पर्यूषण शब्द की व्याख्या – '' परिआसमन्तात् उष्यन्ते दह्यन्ते पाप कर्माणि यस्मिन् तत् पर्यूषणम् '' अर्थात् पाप और राग – द्वेष रूप आत्मा में रहने वाले कर्मों को जो सब तरफ से जलाये, तपाये, नष्ट करे वह है पर्यूषण। जैसे – बाहर की किसी अशुद्ध वस्तु को रसायन लगाकर शुद्ध बना लिया जाता है इसी प्रकार इन धर्म के दशलक्षणों के रसायनों से हम अपनी आत्मा को शुद्ध, विशुद्ध और परिमार्जित करते हैं। आत्मा को रागादि विभाव परिणामों और काषायिक विकारों से दूर करके समुज्ज्वल पवित्र और धर्ममय बनाने का अपूर्व अवसर है पर्यूषण।

श्री ज्ञानसमुच्चयसार जी में दश लक्षणधर्म

दहविहि धम्मं झायदि वर उत्तमषिमा न्यान संजुत्तं। मद्दव अज्जव सुद्धं सत्तं सउच्च संजम तप त्यागं॥ ३६७॥
आकिंचन बंभवयं, दहविहि धम्मं च सुद्ध चरनानि। झायंति सुद्ध झानं, न्यान सहावेन धम्म संजुत्तं॥ ३६८॥
उत्तम ऊर्ध सहावं षिम षिपनिक स्रेणिलय सभावं। मद्दव मग उवएसं अज्जव उवसमइ सरनि संसारे॥३६९॥
सत्तं सद्भाव रूवं, सौचं विमल निम्मलं भावं। संजम मन संजमनं, तव पुन अप्प सहाव निद्दिट्ठं॥ ३७०॥
त्यागं न्यान सहावं, आकिंचन धम्म धुरा वर धरनं। बंभं बंभ सरूवं, न्यानमयं दहविहि धम्मं॥ ३७१॥
दहविहि धम्म उवएसं, धरयति धम्मं च जान परमत्थं।परिनाम सुद्ध करनं, धरयंति धम्मं मुनेयव्वा॥ ३७२॥

[सम्यक्दृष्टि ज्ञानी] **(दहविहि धम्मं झायदि)** दशलक्षण धर्म को **(झायदि)** ध्याता है, साधना करता है **(वर)** श्रेष्ठ **(न्यान)** सम्यग्ज्ञान सहित **(उत्तम षिम)** उत्तम क्षमा धर्म को **(संजुत्तं)** धारण करता है **(मद्दव अज्जव सुद्धं)** उत्तम मार्दव, आर्जव **(सत्तं सउच्च संयम तप त्यागं)** सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग का आराधन करता है। (३६७)

[सम्यक्दृष्टि ज्ञानी] **(आकिंचन)** आकिंचन **(च)** और **(बंभवयं)** ब्रह्मचर्य व्रत सहित **(दहविहि धम्मं)** दशलक्षण धर्म को **(सुद्ध चरनानि)** शुद्ध चारित्र अर्थात् सम्यक्चारित्र का अंग जानते हुए **(न्यान सहावेन)** ज्ञान स्वभाव के आश्रय पूर्वक **(सुद्ध झानं)** शुद्ध ध्यान में **(धम्मं)** धर्म को **(झायंति)** ध्याते हैं [और] **(संजुत्तं)** साधना में लीन रहते हैं। (३६८)

(ऊर्ध सहावं) ऊर्ध्वगामी अथवा श्रेष्ठ स्वभाव में लीन होकर वीतरागी योगी **(षिपनिक श्रेणिलय)** क्षपक श्रेणी में आरोहण करते हैं **(सभावं)** स्वभाव के आश्रय पूर्वक [वैसी ही वीतरागता का अंश प्रगट होना] **(उत्तम)** उत्तम **(षिम)** क्षमा धर्म है **(उवएसं)** जिनेन्द्र भगवान के उपदेशानुसार **(मग)** मोक्षमार्ग पर चलना **(मद्दव)** उत्तम मार्दव है **(संसारे)** संसार में **(सरनि)** जन्म – मरण रूप परिभ्रमण का **(उवसमइ)** उपशमित हो जाना **(अज्जव)** उत्तम आर्जव धर्म है। (३६९)

(रूवं) आत्म स्वरूप का **(सद्भावं)** सद्भाव अर्थात् त्रिकाल एक रूप बने रहना यही **(सत्तं)** सत्य धर्म है **(विमल निम्मलं भावं)** विमल निर्मल भाव का प्रगट होना **(सौच)** शौच धर्म है **(संजम मन संजमनं)** मन का संयमन करना संयम धर्म है **(पुन)** और [पुनश्च] **(अप्प सहाव)** आत्म स्वभाव में लीनता को **(तव)** तप धर्म **(निद्दिट्ठं)** निर्दिष्ट किया अर्थात् कहा गया है। (३७०)

(त्यागं न्यान सहावं) ज्ञान स्वभाव में जाग्रत रहना त्याग धर्म है **(वर)** श्रेष्ठ **(धम्म)** वीतराग धर्म की **(धुरा)** धुरा को **(धरनं)** धारण करना अर्थात् निर्ग्रन्थ वीतरागी होना **(आकिंचन)** आकिंचन्य धर्म है **(बंभ सरूवं)** ब्रह्म स्वरूप में चर्या करना **(बंभं)** ब्रह्मचर्य धर्म है [इस प्रकार] **(दहविहि धम्मं)** दशलक्षण धर्म **(न्यान मयं)** ज्ञान मय हैं। (३७१)

(च) और [इस प्रकार] **(दहविहि धम्म उवएसं)** दशलक्षण धर्म का उपदेश दिया, सम्यक्दृष्टि ज्ञानी **(धम्मं)** धर्म को **(परमत्थं)** कल्याणकारी **(जान)** जानकर अर्थात् ज्ञानपूर्वक **(धरयति)** धारण करते हुए **(परिनाम सुद्ध करनं)** परिणामों की शुद्धि में वृद्धि करने के लिये **(धम्मं)** धर्ममय **(धरयंति)** जीवन जीते हैं, ऐसा **(मुनेयव्वा)** जानो। (३७२)

श्री तारण तरण
बृहद् मंदिर विधि- धर्मोपदेश

तत्त्व मंगल

देव को नमस्कार

तत्त्वं च नन्द आनन्द मउ , चेयननन्द सहाउ ।
परम तत्त्व पद विंद पउ, नमियो सिद्ध सुभाउ ।।

गुरू को नमस्कार

गुरु उवएसिउ गुपित रुइ, गुपित न्यान सहकार ।
तारन तरन समर्थ मुनि, गुरु संसार निवार ।।

धर्म को नमस्कार

धम्मु जु उत्तउ जिनवरहं, अर्थ तिअर्थह जोउ ।
भय विनासु भवु जु मुनहु, ममल न्यान परलोउ ।।
(देव को, गुरु को, धर्म को नमस्कार हो)

: दोहा :

ॐकार से सब भये, डार पत्र फल फूल ।
प्रथम ताहि को वंदिये, यही सबन को मूल ।।

: श्लोक :

ॐकारं विन्दु संयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिन: ।
कामदं मोक्षदं चैव, ॐकाराय नमो नम: ।।

: चौपाई :

ॐकार सब अक्षर सारा,पंच परमेष्ठी तीर्थ अपारा ।
ॐकार ध्यावे त्रैलोका, ब्रह्मा विष्णु महेसुर लोका ।।
ॐकार ध्वनि अगम अपारा, बावन अक्षर गर्भित सारा ।
चारों वेद शक्ति है जाकी, ताकी महिमा जगत प्रकाशी ।।
ॐकार घट घट परवेसा, ध्यावत ब्रह्मा विष्णु महेशा ।
नमस्कार ताको नित कीजे, निर्मल होय परम रस पीजे ।।

प्रारम्भ कैसे करें ?

तत्त्व मंगल, मंगल स्वरूप है। इसके स्मरण करने से मंगल होता है।''जय नमोऽस्तु'' कहकर तत्त्व मंगल प्रारम्भ करना चाहिये। जय नमोऽस्तु का अर्थ है– जय हो, नमस्कार हो। यह अपने इष्ट के प्रति बहुमान का सूचक है।

: तत्त्व मंगल का अर्थ :

देव वंदना –

शुद्धात्म तत्त्व नन्द आनन्दमयी चिदानन्द स्वभावी है। यही परमतत्त्व निर्विकल्पता युक्त विन्द पद है जिसे स्वानुभव में प्राप्त करते हुए सिद्ध स्वभाव को नमस्कार करता हूँ।

गुरूवंदना –

सच्चे गुरू गुप्त रुचि अर्थात् आत्म श्रद्धान, स्वानुभूति का उपदेश देते हैं और गुप्त ज्ञान (आत्मज्ञान) से सहकार कराते हैं। ऐसे स्वयं तरने और दूसरों को तारने में समर्थ वीतरागी मुनि सद्गुरू ही संसार से पार लगाने वाले हैं।

धर्म की महिमा –

धर्म वह है जो जिनवरेन्द्र अर्थात् तीर्थंकर भगवंतों ने कहा है। क्या कहा है ? कि अपने प्रयोजनीय रत्नत्रयमयी स्वभाव को संजोओ यही धर्म है। जो भव्य जीव रत्नत्रय स्वरूप का मनन करते हैं उनके भय विनस जाते हैं और परलोक अर्थात् आगामी काल में उन्हें ममल ज्ञान, पूर्ण ज्ञान अर्थात् केवलज्ञान की प्राप्ति होती है।

दोहा का अर्थ –

'ॐकार' सबके मूल में है अर्थात् जड़ (आधार) है, इसी से डालियां, पत्ते, फल, फूल सब प्रगट होते हैं इसलिये मैं सर्वप्रथम ॐकार की वंदना करता हूँ।

श्लोक का अर्थ –

योगीजन विन्दु संयुक्त ॐकार का नित्य ध्यान करते हैं। यह ॐकार सर्व इच्छाओं की पूर्ति करने वाला और मोक्ष भी देने वाला है। ऐसे ॐकार के लिये बारम्बार नमस्कार है।

चौपाई का अर्थ –

ॐकार समस्त अक्षरों का सार है, यही पंच परमेष्ठीमयी अपार तीर्थ स्वरूप है।

तीनों लोकों के समस्त जीव ॐकार का ध्यान करते हैं तथा इस लोक में ब्रह्मा विष्णु महेश भी ॐकार को ध्याते हैं।

ॐकार ध्वनि अरिहंत भगवान की निरक्षरी दिव्य वाणी अगम और अपार है। जिसका सार बावन अक्षरों में गर्भित है।

चारों वेद अर्थात् चारों अनुयोग इसी की शक्ति हैं। जिसकी महिमा जगत में प्रकाशमान हो रही है।

ॐकार स्वरूपी शुद्धात्मा जो घट – घट में निवास कर रही है। ऐसे शुद्धात्मा का ब्रह्मा विष्णु महेश भी ध्यान करते हैं। ऐसे ॐकार स्वरूप शुद्धात्मा व ॐकारमयी दिव्य वाणी को हमेशा नमस्कार करते हुए निर्मल होकर अमृत रस का पान करो।

: श्लोक :

देव देवं नमस्कृतं, लोकालोक प्रकासकं ।
त्रिलोकं भुवनार्थं जोति, उवंकारं च विन्दते ।।
अज्ञान तिमिरान्धानां, ज्ञानांजनश्लाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ।।
श्री परम गुरवे नमः, परम्पराचार्येभ्यो नमः ।।

विशेष : तत्त्व मंगल के पश्चात् प्रथम दिन श्री ममलपाहुड जी ग्रंथ का धम्म आयरन फूलना तथा श्री तीनों बत्तीसी का पृष्ठ क्रमांक ६४ पर निर्देशित अस्थाप की विधि के अनुसार अस्थाप करें तत्पश्चात् धर्मोपदेश का वांचन करें। शेष दिनों में प्रातः काल धम्म आयरन फूलना, श्री पंडितपूजा जी, श्री कमल बत्तीसी जी की गाथायें पढ़ें । रात्रि में लघु मंदिर विधि करें, तत्त्व मंगल और विनती फूलना या अन्य कोई भी फूलना का वांचन करने के पश्चात् श्री मालारोहण जी ग्रंथ की प्रतिदिन ३-३ गाथाओं का वांचन करें।

श्री धर्मोपदेश :

श्री धर्मोपदेश अतुल, अनिर्वचनीय और महादीर्घ कहें केवली पुरुष कहने सामर्थ्य, त्रैलोक्यनाथ, अचिन्त्य चिंतामणि चिन्ता कर रहित हैं। वे भगवान स्वयं ज्ञाता,सिद्ध के जावन हारे, तीन ज्ञान मय उत्पन्न होय हैं। परिहरैं लिंग-जो तीन लिंग को परिहार कर फिर जन्म नहीं धरैं हैं।

अचिन्त्य व्यक्त रूपाय, निर्गुणान् महात्मने ।
जगत सर्व आधार, मूर्ति ब्रह्मने नमः ।।

ऐसे ब्रह्म स्वरूप मूर्ति को मैं नमस्कार करता हूँ। फिर भगवान का उपदेश्या धर्म कैसा है ?

धर्मं च आत्म धर्मं च, रत्नत्रयं मयं सदा ।
चेतना लक्षणो जेन, ते धर्मं कर्म विमुक्तयं ।।

(श्री तारण तरण श्रावकाचार जी गाथा -१६९)

उन भगवान ने आत्म धर्म रूप धर्म की प्रवर्तना की, जिससे अनेकानेक भव्य प्राणी रागादिक विभाव परिणामों को शमन करके आत्म संयम द्वारा शुभ गति को प्राप्त भये हैं। वे भगवान तथा उनका कथित यह जिन धर्म अपने शरण में आये हुए प्राणी मात्र पर सहज स्वभाव ही से दयालु और अनेक सिद्धि का करनहारा है।

उल्टो जीव अनादि को, अब सुल्टन को दाव ।
जो अबके सुल्टे नहीं, तो गहरे गोता खाव ।।

पंचमज्ञान धर्तार, विवेक संपूर्ण, दया दृष्टि, दयाल मूर्ति, कृपानिधान,सौ इन्द्र कर वंदित, श्री परम गुरू तीर्थंकर भगवान आप तरैं औरन को तारैं हैं।

भवणालय चालीसा, व्यंतर देवाण होंति बत्तीसा ।
कम्पामर चौबीसा, चंदो सूरो णरो तिरियो ।।

ऐसे सौ इन्द्र कर वन्दित श्री परम गुरु, तिनको चलो सम्यक्त्व उपदेश, सो एक उपदेश - अनंत प्रवेश। सम्यक्त्व उपदेश कैसा है - जिस उपदेश की धारणा से अनंते जीव मुक्ति प्रवेश होते आये हैं और होवेंगे। सो कैसी है सम्यक्त्व की महिमा -

श्लोक का अर्थ –

जो परमात्मा ॐकार स्वरूप का अनुभव करते हैं, लोक और अलोक के प्रकाशक हैं। तीन लोक रूपी भुवन को प्रकाशित करने में जो ज्योति स्वरूप हैं, ऐसे देवों के देव को नमस्कार करता हूँ।

अज्ञानरूपी तिमिर से अंधे जीवों के चक्षुओं (नेत्रों) को जो ज्ञानांजन रूप शलाका के द्वारा खोल देते हैं इसलिये ऐसे श्री गुरू को नमस्कार है।

श्री परम गुरू अर्थात् केवलज्ञानी तीर्थंकर भगवंतों के लिये नमस्कार है और उनकी परम्परा में जो वीतरागी आचार्य भगवंत हुए हैं उन सबके लिये नमस्कार है।

श्री धर्मोपदेश अर्थात् धर्म का उपदेश –

धर्मोपदेश तुलना रहित, वचनों से नहीं कहा जाने योग्य, महा श्रेष्ठ है, श्री केवलज्ञानी भगवान ही धर्मोपदेश के अधिकारी हैं, जो सिद्धि को प्राप्त करने वाले हैं और तीन लिंग (पुरुष, स्त्री, नपुंसक) का परिहार कर फिर संसार में जन्म धारण नहीं करते हैं।

अचिंत्य व्यक्त..... श्लोकार्थ –

जिन्होंने अचिंत्य चिंतामणी स्वरूप को व्यक्त कर लिया है। ज्ञान पूर्ण केवलज्ञान है, दर्शन केवलदर्शन है, सभी गुण अपने में परिपूर्ण और अन्य गुणों से रहित हैं। ऐसे निर्गुण महान आत्मा संपूर्ण जगत के आधार अर्थात् संसार के प्राणी मात्र को कल्याण का मार्ग बताने वाले ब्रह्म मूर्ति केवलज्ञानी अरिहंत सर्वज्ञ परमात्मा को नमस्कार करता हूँ।

धर्मं च ..... श्लोकार्थ –

आत्म धर्म ही सच्चा धर्म है, जो हमेशा रत्नत्रयमयी और चैतन्य लक्षण से पूर्ण है वह धर्म अर्थात् चेतना लक्षणमयी शुद्ध स्वभाव समस्त कर्मो से रहित है।

उल्टा श्री पुलट या उलट श्री पुलट –

उपरोक्त वाक्य के भाव को स्पष्ट करने वाला यह दोहा है। जिसका अर्थ है कि–यह जीव अनादि काल से अज्ञान मिथ्यात्व वश उल्टा हो रहा है, विपरीत मार्ग में चल रहा है। मनुष्य भव में अब सुलटने का, मोक्षमार्ग में चलने का अवसर है और यदि इस जन्म में नहीं चेते, नहीं सुलटे तो अनंत संसार में गोते खाना पड़ेंगे। अत: सावधान ! उलट श्री पुलट।

पंचमज्ञान अर्थात् केवलज्ञान को धारण करने वाले भगवान सौ इन्द्रों से वंदनीय जिनेंद्र तारण तरण परम गुरू हैं।

भवणालय.....श्लोकार्थ –

भवनवासी देवों के ४० इन्द्र, व्यंतर देवों के ३२ इन्द्र, कल्पवासी देवों के २४ इन्द्र, ज्योतिषी देवों के दो इन्द्र–चंद्रमा और सूर्य। मनुष्यों में एक–चक्रवर्ती। तिर्यंचों में एक–अष्टापद, इस प्रकार सौ इन्द्र होते हैं।

सम्मत्त सलिल पवहो, णिच्चं हियए पवट्टए जस्स ।
कम्मं वालुयवरणं, बंधुच्चिय णासए तस्स ।।

(दर्शन पाहुड गाथा– ७)

चारित्र आदिकों के द्वारा शुद्ध हुए हृदय स्थल में सम्यक्त्व रूपी सरिता का प्रवाह कर्मरूपी रेत कणों के ढेर को हटाकर चारों गतियों के बंध की प्रतारणा के नाश का कारण है।

यह सम्यक्त्वरूपी जल शांत है, शांतिदायक है। कर्म आताप से व्याकुल हुए प्राणियों के दु:ख का हरनहारा है। अपने ज्ञान और चारित्रादि को साथ लिये हुए यह मोक्षमार्ग को निष्कंटक और सुलभ करनहारा जगदेक बन्धु है। याही को ग्रहण कर अनन्ते पुरुष सिद्ध सिद्धालय को प्राप्त हुए हैं और आगे होवेंगे। मुनीश्वरों के वचन सत्य हैं, ध्रुव हैं, प्रमाण हैं।

।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।

गतोत्सर्पिणी के चतुर्थ कालान्तर्गत चतुर्विंशति तीर्थंकरों में अंतिम तीर्थंकर ''श्री अनंतवीर्य स्वामी'' जी का प्रसाद अवसर्पिणी के चौथे कालान्तर्गत चौदहवें प्रजापति श्री नाभिराय जी के पुत्र प्रथम तीर्थंकर श्री आदिनाथ देव जी लै उत्पन्न भये। कहा प्रसाद लै उत्पन्न भये ? पंच परमेष्ठी के एक सौ तैतालीस गुण, छह यंत्र की पूजा, पचहत्तर गुण, सत्ताईस तत्वों का विचार, एक सौ आठ गुण की जाप, तीन पात्र, दान चार, त्रेपन क्रिया की विधि विचार।

अर्हन्ता छय्याला, सिद्धं अट्ठामि सूरि छत्तीसा ।
उवज्झाया पणवीसा, अठवीसा होंति साहूणं ।।
बारा पुज्ज विशेषं, सिद्धं अट्ठामि षोडसी करणं ।
दह धम्मं दंसण अट्ठा, णाणं अट्ठामि त्रयोदशी चरणं ।।
ये पचहत्तर गुण शुद्धं,वेदी वेदंति णाण सिरि सुद्धं ।
मुक्ति सुभावं दिढ़यं, ये गुण आराह सिद्धि संपत्तं ।।
उत्तमं जिन रूवी च, मध्यमं च मति श्रुतं ।
जघन्यं तत्त्व सार्धं च,अविरतं संमिक दिस्टितं ।।
गुण वय तव सम पडिमा, दाणं जलगालणं अणत्थमियं ।
दंसण णाण चरित्तं, किरिया तेवण्ण सावया भणिया ।।

श्री आदिनाथ स्वामी की पाँच सौ धनुष ऊँची वज्रमयी काया, सवा पाँच सौ धनुष ऊँचो वट वृक्ष, चौरासी लाख पूर्व की आयु होती भई। एक पूर्व की संख्या –

सत्तर लाख करोड़ मित, छप्पन सहस करोड़ ।
इतनी वर्ष मिलाय कर, पूर्व संख्या जोड़ ।।

स्वामी आदिनाथ देवजू ने प्रथम २० लाख पूर्व वर्ष बालक्रीड़ा करी और ६३ लाख पूर्व वर्ष राज्य शासन में व्यतीत कर शेष एक लाख पूर्व प्रमाण आयु रही, तब आदिनाथ स्वामी संसार, देह, भोगों से विरक्त होते भये, अनित्यादि बारह भावना भावते भये। तब पाँचवें स्वर्ग से ऋषीश्वर जाति के लौकांतिक देव आयकर भगवान के ज्ञान वैराग्य की स्तुति करके भगवान को वैराग्य भावनाओं में दृढ़ करते भये। तब वे आदिनाथ स्वामी –

सम्मत्त.....श्लोकार्थ –

जिस पुरुष के हृदय में सम्यक्त्व रूपी जल का प्रवाह निरंतर प्रवर्तमान है, उसके कर्मरूपी रज–धूल का आवरण नहीं लगता तथा पूर्व काल में जो कर्म बंध हुआ हो वह भी नाश को प्राप्त होता है।

गतोत्सर्पिणी के चतुर्थ कालान्तर्गत.... –

अतीत की चौबीसी के अंतिम तीर्थंकर श्री अनंतवीर्य स्वामी जी से श्रद्धा, ज्ञान, धर्म और वर्तमान चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर होने का प्रसाद अर्थात् धर्म संस्कार श्री आदिनाथ जी को प्राप्त हुआ। वे क्या प्रसाद लेकर उत्पन्न हुए ? उसका विवरण इस प्रकार है –

जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु का अर्थ –

जय जयकार करो, जय हो, नमस्कार हो, स्वीकार है, यह तो शाब्दिक अर्थ हुआ किन्तु जब हम श्रद्धा से यह बोलते हैं तब हृदय वीणा के तार झनझना उठते हैं सच्चा अर्थ तो वही है।

पंच परमेष्ठी के १४३ गुण, अर्हन्ता छय्याला..... श्लोकार्थ–

अरिहंत परमेष्ठी के ४६ गुण, सिद्ध के ८ गुण, आचार्य के ३६ गुण, उपाध्याय के २५ गुण और साधु के २८ गुण इस प्रकार पंच परमेष्ठी के १४३ गुण होते हैं।

छह यंत्र की पूजा –

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु यह पंच परमेष्ठी और एक जिनवाणी यह छह यंत्र कहलाते हैं।

पचहत्तर गुण, बारा पुंज..... श्लोकार्थ–

बारह पुंज अर्थात् ५ परमेष्ठी, ३ रत्नत्रय, ४ अनुयोग तथा सिद्ध के ८ गुण, सोलह कारण भावना (१६), दसलक्षण धर्म (१०), सम्यग्दर्शन के ८ अंग, सम्यग्ज्ञान के ८ अंग और १३ प्रकार का चारित्र यह ७५ गुण हैं।

ये पचहत्तर गुण ..... श्लोकार्थ–

जो जीव इन पचहत्तर शुद्ध गुणों के द्वारा ज्ञान लक्ष्मी से शुद्ध, जानने वाले ज्ञायक स्वभाव का वेदन करते हैं, मुक्ति स्वभाव में दृढ़ होते हैं, वे जीव इन गुणों की आराधना कर सिद्धि की सम्पत्ति प्राप्त करते हैं।

३ पात्र, उत्तमं जिन..... श्लोकार्थ–

जिनेन्द्र भगवान के रूप के समान वीतरागी भावलिंगी साधु उत्तम पात्र हैं। मति श्रुत ज्ञान जिनका शुद्ध हो गया वे देशव्रती श्रावक मध्यम पात्र हैं और तत्त्व के श्रद्धानी अविरत सम्यक्दृष्टि जघन्य पात्र हैं।

५३ क्रिया, गुण वय ..... श्लोकार्थ–

मूलगुण –८, व्रत–१२, तप–१२, समताभाव –१, दर्शन आदि प्रतिमा –११, दान–४, पानी छानकर पीना–१, रात्रि भोजन त्याग–१, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की साधना–३, इस प्रकार श्रावकों की ५३ क्रियायें कही गई हैं।

एक पूर्व की संख्या, सत्तर लाख..... दोहा का अर्थ–

सत्तर लाख करोड़ और छप्पन हजार करोड़ वर्ष को मिलाने पर जो योग आता है वह एक पूर्व की संख्या जानो। सत्तर लाख छप्पन हजार करोड़ (७०,५६,०००,००००००) वर्ष का एक पूर्व होता है।

ऋषीश्वर जाति के लौकांतिक देव–

यह देव पाँचवें ब्रह्म स्वर्ग में निवास करते हैं, बाल ब्रह्मचारी होते हैं, एक भवावतारी होते हैं। भगवान के मात्र दीक्षा कल्याणक के समय वैराग्य भावना की अनुमोदना करने के लिये आते हैं।

पुर पट्टन तज चले हैं निरास, ग्रन्थ छोड़ निर्ग्रंथ उदास ।
छांड़ै राज पाट परिवार, छांड़ै मंदिर ज्योति अपार ।।
सकल वस्तु मेरी कछु नाहीं, भये वैराग्य कैलासहिं जाहीं ।
वर्ष सहस्र घोर तप कीना, केवल लक्ष्मी को वर लीना ।।

तब, तप कल्याणक के निमित्त इन्द्र आयकर भगवान को विमला नामक पालकी में बैठाय उत्सव सहित आकाश मार्ग से सिद्धार्थ वन में ले गये। तहाँ चन्द्रकांत मणि की शिला ऊपर इन्द्राणी ने केसर को सांथिया रच्यो, तिस ऊपर भगवान विराजमान होय पंच चेल, चौबीस प्रकार के परिग्रह को त्याग कर पंच मुष्टि केशलौंच कर दिगम्बरी दीक्षा धार अट्ठाईस मूलगुण तथा चौरासी लाख उत्तर गुण पालते भये। कर्म निर्जरा के हेतु घोर तपश्चरण के द्वारा चार घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया।

जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु। श्री आदिनाथ भगवान की– जय।

तब, केवल कल्याणक के निमित्त इन्द्रों ने आयकर अड़तालीस कोस के गिरदाकार में समवशरण की रचना करी। साढ़े बारह करोड़ वाद्य बाजते भये। ऐसे महोत्सव पूर्ण समवशरण में भगवान अपनी दिव्यध्वनि द्वारा भव्य जीवों को धर्मोपदेश देते भये। भगवान के उपदेश से समवशरण के मध्य बारह कोठों में बैठे हुए असंख्य देव, मनुष्य तथा पशुओं तक ने अपने कल्याण का मार्ग ग्रहण किया। तब हर्षित आनंदित होते हुए इन्द्रों ने इन्द्रध्वज पूजा और चतुर्विध संघ ने देवांगली पूजा पढ़कर जय जयकार किया।

देवांगलीय पूजा

ॐ जय जय जय, नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु ।
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।
चत्तारि मंगलं–अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं ।।
चत्तारि लोगुत्तमा–अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ।।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि–अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,सिद्धे सरणं पव्वज्जामि,
साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।।
अपवित्र: पवित्रो वा सुस्थितो दु:स्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पञ्च नमस्कारं सर्वपापै: प्रमुच्यते ।। १ ।।
अपवित्र: पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
य: स्मरेत् परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचि: ।। २ ।।
अपराजित मंत्रोऽयं सर्व विघ्न विनाशन: ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मत: ।। ३ ।।
एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होई मंगलम् ।। ४ ।।

पुर पट्टन तज..... चौपाई का अर्थ –

श्री आदिनाथ स्वामी पुर पट्ट नगर ग्राम आदि त्याग कर विरक्त भाव से परिग्रह को छोड़कर निर्ग्रन्थ वीतरागी होने के लिये चल दिये। समस्त राज पाट, परिवार, महल मकान, अपार धनसंपदा आदि को छोड़ दिया। अंतर में यह निर्णय था कि इन समस्त वस्तुओं में मेरा कुछ भी नहीं है। प्रभु को वैराग्य हुआ और वे तपस्या करने के लिये अयोध्या से थोड़ी दूर सिद्धार्थ वन में पहुँच गये। एक हजार वर्ष तक घोर तपशरण करके केवलज्ञान को प्राप्त किया।

पंच चेल (वस्त्र) का स्वरूप –

१. अंडज – रेशम से बने हुए वस्त्र। २. वुण्डज – कपास से बने हुए वस्त्र। ३. वंकज – वृक्ष की छाल से बने हुए वस्त्र। ४. चर्मज – मृग आदि पशुओं के चर्म से बने हुए वस्त्र। ५. रोमज – ऊन से बने हुए वस्त्र।

चौबीस प्रकार का परिग्रह –

दस बाह्य परिग्रह – खेत, मकान, सोना, चांदी, धन, धान्य, दासी, दास, बर्तन और वस्त्र। चौदह आभ्यंतर परिग्रह – मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद।

अट्ठाईस मूल गुण –

पाँच महाव्रत – अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह। पाँच समिति – ईर्या, भाषा, ऐषणा, आदान निक्षेपण, प्रतिष्ठापना। पाँच इन्द्रिय निरोध – स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण इन्द्रिय पर विजय। छह आवश्यक – समता, स्तुति, वंदना, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग। सात अन्य गुण – भूमि शयन, अस्नान, वस्त्रत्याग, केशलोंच, एक बार भोजन, खड़े होकर भोजन करना, अदंत धावन।

देवांगली पूजा का अर्थ –

ॐकार मयी पंच परमेष्ठी भगवान की जय हो, जय हो, जय हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो। अरिहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो, लोक में सर्व साधुओं को नमस्कार हो।

लोक में चार मंगल हैं – अरिहंत भगवान मंगल हैं, सिद्ध भगवान मंगल हैं, साधु परमेष्ठी मंगल हैं, केवली प्रणीत धर्म मंगल है।

लोक में चार उत्तम हैं – अरिहंत भगवान उत्तम हैं, सिद्ध भगवान उत्तम हैं, साधु परमेष्ठी उत्तम हैं, केवली प्रणीत धर्म उत्तम है।

मैं चार की शरण में जाता हूँ – अरिहंत भगवान की शरण में जाता हूँ, सिद्ध भगवान की शरण में जाता हूँ, साधु परमेष्ठी की शरण में जाता हूँ, केवली प्रणीत धर्म की शरण में जाता हूँ।

अपवित्र हो या पवित्र हो सुख रूप हो या दु:ख रूप हो (अच्छी हालत हो या खराब हो, निरोग हो या रोगी हो, धनी हो या दरिद्र हो) पंच नमस्कार मंत्र का ध्यान करने से जीव सर्व पापों से छूट जाता है॥ १॥

अपवित्र हो पवित्र हो या सर्व अवस्थागत हो अर्थात् बैठा हो, खड़ा हो, लेटा हो, चलता हो, खाता पीता हो या अन्य किसी अवस्था को प्राप्त होकर भी जो परमात्मा का स्मरण करता है वह बाह्य और अंतरंग से शुद्ध हो जाता है॥ २॥

यह अपराजित (अ+पराजित) मंत्र सर्व विघ्नों का नाश करने वाला है और सर्व मंगलों में पहला मंगल माना गया है॥ ३॥

यह पंच नमस्कार मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है॥ ४॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकं परमेष्ठिन: ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वत: प्रणमाम्यहम् ।। ५ ।।
कर्माष्टक विनिर्मुक्तम् मोक्षलक्ष्मी निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।। ६ ।।
विघ्नौघा: प्रलयं यान्ति शाकिनी भूत पन्नगा: ।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।। ७ ।।

इन्द्रध्वज पूजा

श्री मज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं, स्याद्वादनायकमनंत चतुष्टयार्हम् ।
श्री मूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतु, जैनेन्द्रयज्ञ विधिरेष मयाभ्यधायि ।। १ ।।

स्वस्ति त्रिलोकगुरवे जिनपुंगवाय, स्वस्ति स्वभाव महिमोदय सुस्थिताय ।
स्वस्ति प्रकाश सहजोर्जित दृङ्मयाय,स्वस्ति प्रसन्न ललिताद्भुत वैभवाय ।। २ ।।

स्वस्त्युच्छलद्विमलबोध सुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभाव परभाव विभासकाय ।
स्वस्ति त्रिलोक वितितैकचिदुद्गमाय,स्वस्ति त्रिकाल सकलायत विस्तृताय ।। ३ ।।

अर्हत्पुराण पुरुषोत्तम पावनानि, वस्तून्य नूनमखिलान्ययमेक एव ।
अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवल बोधवन्हौ,पुण्यंसमग्रमहमेकमना जुहोमि ।। ४ ।।

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकाम: ।
आलंबनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,भूतार्थयज्ञ पुरुषस्य करोमि यज्ञम् ।। ५ ।।

शास्त्र पूजा (गाथा)

संपइ सुह कारण कम्मवियारण,भवसमुद्र तारण तरणम् ।
जिनवाणि नमस्यं सत्य पयस्यम्, सग्ग मोक्ख संगम करणम् ।। १ ।।

त्रैसट्ठ शालायभेयं सिद्धं पुराण ध्यान अवगहणं ।
वैचारित्रफलायणं प्रथमानुयोग एरस करणं ।। २ ।।

उवाइट्ठं लोयदिढयं दह विहि प्रमाणस्स भणियं ।
करणाणुयोग एरस करणं द्वीपसमुद्राय जिनवरगेहो ।। ३ ।।

वैचारित्रफलायणं क्रियाणपर्म ऋद्धि सहय्याणं ।
उवासुग्गे सहय्याणं चरणाणुयोग एरस भणियं ।। ४ ।।

मोक्खस्स करणं मोक्खं क्रिया मोक्खस्स कारणं मोक्खं ।
हेयं च हियसंती दिव्वाणुयोग एरस भणियं ।। ५ ।।

'अर्हं' यह शब्द 'ब्रह्म' अर्थात् अरिहंत परमेष्ठी का वाचक, सिद्ध चक्र का सद्बीज है, सब प्रकार से मैं उसे प्रणाम करता हूँ॥ ५ ॥ ज्ञानावरणादि आठों कर्मों से रहित तथा मोक्ष लक्ष्मी में निवास करने वाले सम्यक्त्वादि गुणों सहित ऐसे सिद्ध चक्र अर्थात् अनन्त सिद्ध भगवंतों को मैं नमस्कार करता हूँ॥ ६ ॥ हे जिनेश्वर ! आपके स्तवन करने से शाकिनी, भूत और सर्प आदि से उत्पन्न होने वाले विध्नों के समूह नाश को प्राप्त हो जाते हैं और विष भी निर्विष हो जाता है अर्थात् जहर भी उतर जाता है ॥ ७ ॥

इन्द्र ध्वज पूजा का अर्थ–

तीन लोक के ईश्वर त्रिलोकीनाथ, स्याद्वाद विद्या के नायक, अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य के धारी, केवलज्ञान लक्ष्मी के स्वामी श्रीमद् जिनेन्द्र भगवान को नमस्कार करके मेरे द्वारा यह जिनेन्द्र स्तवन की विधि प्रारम्भ की जा रही है। हे नाथ ! आपका स्तवन निर्दोष है और पुण्य प्राप्ति का अद्वितीय कारण है ॥ १ ॥ तीन लोक के प्रधान गुरू तीर्थंकर जिनेन्द्र भगवान आपका मंगल हो (अर्थात् आप मंगल स्वरूप हैं। आगे भी ऐसा ही अर्थ समझना) आत्मीक स्वभाव की महिमा के उदय अर्थात् केवलज्ञान के उदय में जो भले प्रकार स्थित हैं, ऐसे वीतराग भगवान आपका मंगल हो। स्वाभाविक प्रकाश अर्थात् केवलज्ञान से वृद्धि को प्राप्त और केवलदर्शन से युक्त भगवान के लिए मंगल हो । स्वच्छ सुंदर अलौकिक समवशरण आदि वैभव से युक्त भगवान आपका मंगल हो ॥ २ ॥ उछलते हुए निर्मल केवलज्ञान रूपी अमृत के प्रवाह वाले भगवान आपका मंगल हो। स्वभाव और परभाव का भेदज्ञान द्वारा बोध कराने वाले भगवान आपका मंगल हो। तीन लोक के समस्त पदार्थों का त्रिकालवर्ती ज्ञान होने से विस्तार को प्राप्त हुए ऐसे जिनेन्द्र भगवान का मंगल हो। तीन काल में जिनका यश विस्तृत हो रहा है ऐसे भगवान का मंगल हो ॥ ३ ॥ अरिहंत भगवान पुराण पुरुषोत्तम पावन हैं। उनमें निश्चय ही संपूर्ण गुण प्रकट हो गये हैं, किसी भी वस्तु अर्थात् गुण की कमी नहीं है। ऐसे प्रकाशित विमल केवलज्ञान रूपी अग्नि में एकाग्र मन से मैं समस्त पुण्य को होम करता हूँ॥ ४ ॥ आत्म यज्ञ में होम करने के लिये शुद्ध द्रव्य यथानुरूप दिगम्बर अवस्था में है। भाव की अधिक शुद्धि पाने का इच्छुक मैं ध्यान आदि अनेक साधनों का सहारा लेकर भूतार्थ पुरुष के यज्ञ को अर्थात् आत्म यज्ञ को करता हूँ॥ ५ ॥

शास्त्र पूजा गाथा का अर्थ–

सर्व संपत्ति और सुख की कारण, कर्मों का नाश करने वाली, संसार सागर से तारने के लिये नौका के समान है, ऐसी जिनवाणी को नमस्कार है। जो सत्य का प्रकाश करने वाली स्वर्ग और मोक्ष का संगम कराने वाली है ॥ १ ॥ जिसमें ६३ शलाका पुरुषों के भेदों का कथन हो (२४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ९ बलभद्र) सिद्ध पुरुषों की महिमा व पुराण पुरुषों के ध्यान तप आदि ग्रहण करने का वर्णन हो। निश्चय व्यवहार चारित्र के पालन और उसके फल आदि का कथन हो। इस प्रकार के वैराग्य प्रधान परिणामों का वर्णन करने वाला प्रथमानुयोग है ॥ २ ॥ लोक की आधार शिला अर्थात् तीन लोक और उनको घेरे हुए घन वातवलय, घनोदधि वातवलय, तनु वातवलय का स्वरूप जिसमें उपदिष्ट किया हो, दस प्रकार के प्रमाण का कथन तथा द्वीप, समुद्र और जीव के परिणाम आदि का जिनेन्द्र परमात्मा ने वर्णन किया है उसे करणानुयोग कहते हैं ऐसा ग्रहण करो अर्थात् जानो ॥ ३ ॥ निश्चय – व्यवहार रूप चारित्र का पालन और उनका फल, अनेक प्रकार क्रिया रूप आचरण, उत्कृष्ट ऋद्धि आदि सहित जिसमें उपसर्ग को सहन करने, उपसर्ग विजयी होने का वर्णन किया हो ऐसा चरणानुयोग है ॥ ४ ॥ मोक्ष के परिणाम अर्थात् शुद्ध भाव मोक्ष प्राप्त कराने वाले हैं, मोक्ष की क्रिया अर्थात् शुद्ध स्वभाव में लीनता रूप शुद्ध परिणति मोक्ष की कारण है, ऐसा जिसमें शुद्ध वर्णन हो तथा हेय अर्थात् छोड़ने योग्य और उपादेय अर्थात् हृदय में धारण करने योग्य क्या है, इसका विवेचन किया गया हो वह द्रव्यानुयोग कहा गया है ॥ ५ ॥

गुणपाठ पूजा

बारा पुंज विशेषं सिद्धं अट्ठामि षोडसीकरणं ।
दह धम्मं दंसण अट्ठा णाणं अट्ठामि त्रयोदशी चरणं ।। १ ।।

ए पचहत्तर गुण सुद्धं वेदी वेदंति णाण सिरि सुद्धं ।
मुक्ति सुभावं दिढयं ए गुण आराह सिद्धि संपत्तं ।। २ ।।

अरहंता छय्याला सिद्धं अट्ठामि सूरि छत्तीसा ।
उवझाया पणवीसा अठवीसा होंति साहूणं ।। ३ ।।

वर अतिशय चौंतीसा अष्ट महाप्रातिहार्य संजुत्तं ।
नंत चतुष्टय सहियं छय्याला अरहंत ज्ञानस्य ।। ४ ।।

मोहक्षय सम्यक्तं केवलज्ञानेन हने अज्ञानं ।
केवल दरसण दरसं अनंतवीर्य अन्तरायेन ।। ५ ।।

सुहवं च नाम कम्मं आयुकर्म निरजर अवगहनं ।
गोत्तं अगुरुलघुत्तं अव्वावाहं च वेद वेयणियं ।। ६ ।।

ए आइरिय अष्ट गुण दहविहि धर्मं च होय दिढ़ अप्पा ।
वारा तप छै अवासी छत्तीस गुण होंति सूरेना ।। ७ ।।

ग्यारह अंग जु सहियं चौदह पूर्वाय निरविशेषाणं ।
पणवीसा गुणजुक्तं णाणी णाणेण तस्य उवझाया ।। ८ ।।

दह दरसण संभेदा भेदा होंति पंच ज्ञानेया ।
तेराविधि सो चरितं अठवीसा होंति साहूणं ।। ९ ।।

इस प्रकार इन्द्र और चतुर्विध संघ वन्दना स्तुति करते भये। तत्पश्चात् भगवान आदिनाथ ने चौरासी गणधर और चतुर्विध संघ सहित देश–देशांतरों में विहार कर आयु के अन्त में ६ दिन का योग निरोध कर माघ वदी चतुर्दशी को कैलाशगिरि से निर्वाण पद प्राप्त किया।

।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।

जो उपदेश भगवान आदिनाथ ने दिया वही उपदेश भगवान महावीर स्वामी ने दिया।

आदि में श्री आदिनाथ देव जी भये, अन्त में श्री महावीर देव जी भये। बाईस तीर्थंकर मध्यानुगामी हुए। श्री चौबीसी जी को नाम लीजे तो पुण्य की प्राप्ति होय है।

गुण पाठ पूजा का अर्थ –

बारह पुंज अर्थात् ५ परमेष्ठी, ३ रत्नत्रय, ४ अनुयोग तथा सिद्ध के ८ गुण, सोलह कारण भावना, धर्म के १० लक्षण, सम्यग्दर्शन के ८ अंग, सम्यग्ज्ञान के ८ अंग, १३ प्रकार का चारित्र ॥ १ ॥

जो जीव इन पचहत्तर शुद्ध गुणों के द्वारा ज्ञान लक्ष्मी से शुद्ध, जानने वाले ज्ञायक स्वभाव का वेदन करते हैं, मुक्ति स्वभाव में दृढ़ होते हैं, वे जीव इन गुणों की आराधना कर सिद्धि की सम्पत्ति प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥

अरिहंत परमेष्ठी के ४६ गुण, सिद्ध के ८ गुण, आचार्य के ३६ गुण, उपाध्याय के २५ गुण और साधु के २८ मूलगुण होते हैं ॥ ३ ॥

श्रेष्ठ ३४ अतिशय (जन्म के – १०, केवलज्ञान के –१०, देवकृत – १४) ८ महा प्रातिहार्य से संयुक्त, अनन्त चतुष्टय सहित, इस प्रकार केवलज्ञानी अरिहंत भगवान के ४६ गुण होते हैं ॥ ४ ॥

सिद्ध परमेष्ठी को मोहनीय कर्म के क्षय से सम्यक्त्व प्रगटता है, केवलज्ञान की प्रगटता से अज्ञान (ज्ञानावरण कर्म) का नाश होता है। केवलदर्शन – दर्शनावरण कर्म के अभाव से और अनन्त वीर्य अन्तराय कर्म के अभाव से प्रगटता है ॥ ५ ॥

सूक्ष्मत्व गुण नाम कर्म के अभाव से प्रगट होता है, आयु कर्म के अभाव से अवगाहनत्व, गोत्र कर्म के अभाव से अगुरुलघुत्व और अव्याबाधत्व गुण वेदनीय कर्म के अभाव से प्रगट होता है ऐसा जानो। इस प्रकार सिद्ध परमेष्ठी के आठ गुण, आठ कर्मों के अभाव होने पर प्रगट होते हैं ॥ ६ ॥

अहो ! आचार्य परमेष्ठी संवेगादि आठ गुण, उत्तमक्षमा आदि दश लक्षण धर्म, अनशन आदि बारह तप, अस्तित्व आदि छह आवश्यक का पालन करते हुए अपने आत्म स्वरूप में दृढ़ होते हैं। इस प्रकार आचार्य परमेष्ठी के ३६ गुण होते हैं ॥ ७ ॥

भेद को विशेष कहते हैं और ग्यारह अंग सहित जो चौदह पूर्व को निर्विशेष अर्थात् भेद रहित सांगोपांग पूर्ण रूपेण जानते हैं, इस प्रकार जो ज्ञानी साधु ज्ञान के पच्चीस गुणों से युक्त होते हैं, उनको उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं। (उपाध्याय परमेष्ठी ११ अंग, १४ पूर्व के ज्ञाता होते हैं) ॥ ८ ॥

सम्यग्दर्शन के १० भेद, सम्यग्ज्ञान के ५ भेद और १३ प्रकार का चारित्र यह साधु के २८ मूलगुण होते हैं। (पं. भूधरदास जी ने भी चर्चा समाधान में साधु के इन्हीं २८ मूलगुणों की चर्चा की है।)

वर्तमान चौबीसी

श्री ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पद्मप्रभु छठे जिनेश्वर ।
सप्तम तीर्थंकर भये हैं सुपारस, चन्द्रप्रभ आठम हैं निवारस ।।
पुष्पदंत शीतल श्रेयांस, वासुपूज्य अरू विमल अनंत ।
धर्मनाथ वंदत अविनीश्वर, सोलह कारण शांति जिनेश्वर ।।
कुन्थु अरह मल्लि मुनिसुव्रत वीसा, नमूं अष्टांग नमि इकवीसा ।
नेमिनाथ साहसि गिरि नेमि, सहनसील बाईस परीषह ।।
पारसनाथ तीर्थंकर तेईस, वर्द्धमान जिनवर चौबीस ।
चार जिनेन्द्र चहुँ दिशि गये, बीस सम्मेदशिखर पर गये ।।
आदिनाथ कैलाशहिं गये, वासुपूज्य चम्पापुर गये ।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, पावापुरी वीर जिनराज ।।
दो धवला दो श्यामला वीर, दो जिनवर आरक्त शरीर ।
हरे वरण दो ही कुलवन्त, हेमवरण सोला इकवंत ।।
चौबीस तीर्थंकर मोक्ष गये, दश कोड़ाकोड़ी काल विल भये ।
भये सिद्ध अरू होंय अनंत, जे वन्दौं चौबीस जिनेन्द्र ।।
वन्दौं तीर्थंकर चौबीस, वन्दौं सिद्ध बसें जग शीश ।
वन्दौं आचारज उवझाय, वन्दौं साधु गुरुन के पांय ।।

: दोहा :

देव धरम गुरू को नमो, नमो सिद्ध शिव क्षेत्र ।
विदेह क्षेत्र में जिन नमो, जिनके नाम विशेष ।।

चौबीस तीर्थंकर भगवान की – जय

विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर

सीमन्धर स्वामी जिन नमों, मन वच काय हिये में धरों ।
युगमन्धर स्वामी युग पाय, नाम लेत पातक क्षय जाय ।।
बाहु सुबाहु स्वामी धर धीर, श्री संजात स्वामी महावीर ।
स्वयं प्रभ स्वामी जी को ध्यान, ऋषभानन जी कहें बखान ।।
अनन्तवीर्य सूरिप्रभ सोय, विशालकीर्ति जग कीरत होय ।
वज्रधर स्वामी चन्द्रधर नेम, चन्द्रबाहु कहिये जिन बैन ।।
भुजंगम ईश्वर जग के ईश, नेमीश्वर जू की विनय करीश ।
वीर्यसेन वीरज बलवान, महाभद्र जी कहिये जान ।।
देवयश स्वामी श्री परमेश, अजित वीर्य सम्पूर्ण नरेश ।
विद्यमान बीसी पढ़ो चितलाय, बाढ़े धर्म पाप क्षय जाय ।।

विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकर भगवान की – जय

वर्तमान चौबीसी का अर्थ –

श्री ऋषभनाथ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, छटवें तीर्थंकर पद्मप्रभ भगवान हैं। सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ हैं, आठवें चन्द्रप्रभ संसार से पार लगाने वाले हैं।

पुष्पदंत, शीतलनाथ, श्रेयांसनाथ, वासुपूज्य और विमलनाथ, अनंतनाथ, धर्मनाथ पृथ्वी पति हैं। सोलहवें शांतिनाथ जिनेश्वर की मैं वन्दना करता हूँ।

कुन्थुनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, बीसवें मुनिसुव्रत नाथ हैं, इक्कीसवें नमिनाथ भगवान को साष्टांग नमस्कार है। नेमिनाथ भगवान ने ऐसा पुरुषार्थ किया कि गिरनार पर्वत के शिखर पर चले गये और बाईस परीषह के विजेता हुए।

तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और चौबीसवें जिनेन्द्र भगवान वर्द्धमान महावीर हैं। इन चौबीस तीर्थंकरों में से चार तीर्थंकर अलग–अलग चार दिशाओं से मोक्ष गये, शेष बीस तीर्थंकर श्री सम्मेद शिखरजी से मोक्ष पधारे।

आदिनाथ भगवान कैलाश पर्वत से, वासुपूज्य भगवान चंपापुर से, नेमिनाथ भगवान गिरनार से और महावीर जिनराज पावापुरी से मुक्ति को प्राप्त हुए।

इन तीर्थंकरों में दो तीर्थंकरों – चन्द्रप्रभ और पुष्पदंत के शरीर का वर्ण धवल (सफेद) था। दो तीर्थंकरों – सुपार्श्वनाथ और पार्श्वनाथ के शरीर का वर्ण हरित (हरा) था। दो तीर्थंकरों – पद्मप्रभ और वासुपूज्य के शरीर का वर्ण रक्त (लाल) था। दो तीर्थंकरों – मुनिसुव्रतनाथ और नेमिनाथ के शरीर का नीलवर्ण (श्यामल) रंग का था। शेष सोलह तीर्थंकरों के शरीर का वर्ण स्वर्ण की तरह पीले रंग का था।

अवसर्पिणी के दश कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण काल में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, जो निर्वाण को प्राप्त हो गए हैं। अनन्त सिद्ध हो चुके हैं। अनन्त सिद्ध आगे होवेंगे। मैं चौबीसों ही जिनेन्द्र परमात्माओं की वंदना करता हूँ।

चौबीस तीर्थंकर भगवंतों की वंदना करके उन सिद्ध भगवंतों को वंदन करता हूँ जो लोक के शिखर, अग्रभाग में वास कर रहे हैं। आचार्य, उपाध्याय और साधु जो सच्चे गुरू हैं उनके चरण कमलों की वंदना करता हूँ ।

दोहा का अर्थ –

सच्चे देव, गुरू, धर्म को नमस्कार करके शिवक्षेत्र अर्थात् मोक्ष स्थान में विराजमान सिद्ध भगवंतों को नमन करता हूँ , विदेह क्षेत्र में सदा सर्वदा विराजमान बीस तीर्थंकर जिनेन्द्र भगवंतों को नमस्कार है, जिनके नाम विशेष इस प्रकार हैं –

विदेह क्षेत्र बीस तीर्थंकर स्तवन का अर्थ–

मन, वचन, काय की एकता हृदय में धारण करके श्री जिनेन्द्र सीमंधर स्वामी को नमस्कार करता हूँ, युगमंधर स्वामी के चरण युगल की वन्दना करता हूँ , जिनके नाम स्मरण करने से पाप क्षय हो जाते हैं।

बाहु सुबाहु स्वामी स्वभाव में लीनता रूप परम धैर्य धारण करने वाले हैं। श्री संजात स्वामी निज स्वभाव में लीन होने से महावीर हैं। स्वयंप्रभ स्वामी जी का ध्यान महान है, ऋषभाननजी का गुणानुवाद महिमा पूर्वक कह रहे हैं।

अनन्त वीर्य, सूरिप्रभ और विशाल कीर्ति की जग में कीर्ति हो रही है। वज्रधर स्वामी, चन्द्रधर (चन्द्रानन)और चन्द्रबाहु का जिनवाणी में कथन किया गया है।

भुजंगम और ईश्वर जी जगत के ईश्वर हैं, नेमीश्वर प्रभु की मैं विनय करता हूँ। वीर्यसेन वीर्य बल से संपन्न हैं, महाभद्र जी को तीर्थंकर कहा गया ऐसा जानो।

श्री देवयश स्वामी परमेश्वर हैं, अजितवीर्य पूर्णत्व को प्राप्त मनुष्यों के ईश्वर हैं। विदेह क्षेत्र में बीस तीर्थंकर सदा सर्वदा विद्यमान रहते हैं, ऐसी विद्यमान बीसी को भाव सहित चित्त की एकाग्रता पूर्वक पढ़ो इससे धर्म की वृद्धि होगी और पाप क्षय हो जायेंगे।

बाढ़े धर्म पाप क्षय जाय, ऐसे चौबीस तीर्थंकर जिन्होंने आठ कर्म, आठ मद, अठारह दोषों को नष्ट कर निर्वाण पद प्राप्त किया ऐसे जिनेन्द्र देव तिनको बारम्बार नमस्कार हो, ऐसे बीस तीर्थंकर विदेह क्षेत्र में सदा सर्वदा विराजमान तिनको नमस्कार कीजे तो पुण्य की प्राप्ति होय। धर्म आराध आराध्य जीव निर्वाण पद को प्राप्त होय हैं। जिनके खोटे भाव – क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार कषाय, अष्ट मद, शंकादि आठ दोष, छह अनायतन, तीन मूढ़ता, सप्त व्यसन इत्यादि प्रपंच रूप मिथ्यात्व भाव विलीयमान हुए उन्हीं को जिन संज्ञा प्राप्त होती भई।

'एकं जिनं स्वरूपं ' एक जिन को स्वरूप सोई चौबीस जिन को, सोई बहत्तर जिन को, सोई १४९ चौबीसी को होत भयो। जो स्वरूप श्री आदिनाथ देव जी को, सोई श्री महावीर देव जी को होत भयो। भेद विज्ञान प्रत्यक्ष – प्रत्यक्ष कर दर्शायो। केवल आयु, काय अरु समवशरण लघु दीरघ होंय। तप, तेज, गुण, लक्षण, बल, वीर्य सबके एक से ही होंय हैं।

''जिन श्रेणी मार्ग कलन वीर्य '' जिन श्रेणी सो मार्ग नाहीं, कलन कहिये ध्यान सो बल नाहीं , देव सी पदवी नाहीं, दाता सो स्वरूप नाहीं, जिनने कहा दान दियो–

ये ज्ञान दानं कुरूते मुनीनां,सदैव लोके सौख्यं प्रभोक्ता ।
राज्यं च सक्यं बल ज्ञान भूतै, लब्ध्वा स्वयं मुक्ति पदं ब्रजन्ति ।।

पय बारह (पंच परमेष्ठी, तीन रत्नत्रय, चार अनुयोग) उपयोग बारह (आठ ज्ञान, चार दर्शन) या प्रकार ज्ञान को ग्रहण कर मारीचिकुमार का जीव शुभ समय पाय स्थान कुण्डलपुर नगरी में श्री सिद्धार्थ राजा तथा माता श्री त्रिशला देवी के यहाँ अवतरित होता भया। महावीर भगवान का अवतार जान इन्द्रादिक देव जन्म कल्याणक महोत्सव के निमित्त भक्ति भाव सहित भगवान को गोद में लेय, पांडुक शिला पर ले जायकर, प्रभु का जन्म कल्याणक किया। तत्पश्चात् इन्द्र भगवान को माता की गोद में सौंप, स्व स्थान को प्रस्थान करता भया। श्री वीरदेव जी की ७२ वर्ष की आयु रही, जिसमें १२ वर्ष बालक्रीड़ा में और १८ वर्ष राज्य शासन में व्यतीत कर अपने समस्त राजपाट का परित्याग कर जिन दीक्षा धारण करके १२ वर्ष महान तपश्चरण कर ४२ वर्ष की अवस्था में केवलज्ञान प्राप्त किया।

।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।

।। भगवान महावीर स्वामी की–जय ।।

तब अनेकानेक देव देवियों सहित इन्द्र आयकर समवशरण की रचना करते भये। भगवान की वाणी के प्रकाशनार्थ श्री गौतम स्रोतम आदि ग्यारह गणधर आते भये। तब भगवान की दिव्य ध्वनि प्रकट होती भई।

जय हो, जय हो.....

।। भगवान महावीर स्वामी की–जय ।।

।। भगवान के समवशरण की –जय ।।

आठ कर्म – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय।
आठ मद – ज्ञानमद, पूजामद, कुलमद, जातिमद, बलमद, ऋद्धिमद, तपमद, रूपमद।
शंकादि आठ दोष – शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, मूढ़दृष्टि, अनुपगूहन, अस्थितिकरण, अवात्सल्य, अप्रभावना।
छह अनायतन – कुदेव, कुगुरू, कुधर्म, कुदेव को मानने वाले, कुगुरू को मानने वाले, कुधर्म को मानने वाले।
तीन मूढ़ता– देवमूढ़ता, पाखंडी (गुरू) मूढ़ता, लोक मूढ़ता।

एक सौ उनचास (१४९) चौबीसी –

१४९ चौबीसी होने के बाद हुण्डावसर्पिणी काल आता है। एक हुण्डावसर्पिणी से दूसरे हुण्डावसर्पिणी के मध्य १४९० कोड़ाकोड़ी सागर का समय होता है। इसमें १४९ चौबीसी होती हैं। एक अवसर्पिणी या उत्सर्पिणी १० कोड़ा कोड़ी सागर की होती है, इसलिये १४९ में १० का गुणा करने पर १४९० होते हैं। १४९ में २४ का गुणा करने पर ३५७६ होते हैं अर्थात् इतने तीर्थंकर होते हैं और १४९ में षट्काल के अनुसार ६ का गुणा करने पर ८९४ काल होते हैं।

ये ज्ञानदानं..... श्लोकार्थ –

जो मुनिजनों को ज्ञान का दान करते हैं वे सदैव लोक में सुख का उत्कृष्ट रूप से भोग करते हैं तथा राज्य, शक्ति, ज्ञान बल आदि को उपलब्ध करके स्वयं मुक्ति पद को प्राप्त कर लेते हैं।

पाँच **परमेष्ठी –**

अरिहंत परमेष्ठी, सिद्ध परमेष्ठी, आचार्य परमेष्ठी, उपाध्याय परमेष्ठी और साधु परमेष्ठी।

तीन रत्नत्रय – सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।
चार अनुयोग – प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग ।
आठ ज्ञान – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान,मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान,
कुमति ज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान।
चार दर्शनोपयोग – चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।

त्रिकाल की चौबीसी का अद्भुत योग –

श्री बृहद् मंदिर विधि – धर्मोपदेश में त्रिकाल की चौबीसी का अद्भुत योग है इसके अंतर्गत अतीत की चौबीसी के अंतिम तीर्थंकर श्री अनंतवीर्य स्वामी जी से धर्म संस्कार आदि का प्रसाद लेकर श्री आदिनाथ जी उत्पन्न हुए और वर्तमान चौबीसी के अन्तिम तीर्थंकर श्री भगवान महावीर स्वामी ने भविष्य काल की चौबीसी में प्रथम तीर्थंकर होने का प्रसाद महाराजाधिराज राजा श्रेणिक को दिया।

मंगल

(१) चौथे काल के अन्त सो वीर जिनंद भये ।
समवशरण के हेतु सो विपुलाचल गये ।।
उपवन आये देव सो मन आनन्द भये ।
षट् ऋतु फूले फूल सो अचरज मन भये ।।
उपवन लियो है विश्राम माली ने सुध लही ।
उकटे काठ फल फूल मालती खिल रही ।।
ऐसी मालती फल फूल रहियो, सरवर हंस मोती चुनें ।
गाय व्याघ्र जहां करत क्रीड़ा, और अचरज को गिनें ।।
सहर्ष फूल लै चलो है माली, नृपति जाय सुनाइयो ।
यह देख अचरज भूप मोहे, रानी चेलना तुरत बुलाइयो ।।
निज शत्रु जो घर माहिं आवै, मान बाको कीजिये ।
शुभ ऊँ ची आसन मधुर वाणी, बोल कै यश लीजिये ।।
भगवान सुगुण निधान मुनिवर, देखकर मन हर्षियो ।
पड़गाह लीजे दान दीजे, रत्न वर्षा बरसियो ।।
निज श्रेणि अन्तर हिय निरन्तर, जैन जुगति सुनाइयो ।
राज्य परिग्रह छांड़ चालो, प्रिय सिद्ध मंगल गाइयो ।।

इस प्रकार हजारों श्रावक नर, नारियों के बीच जन समूह के साथ राजा श्रेणिक मान सहित रथारूढ़ हुए समवशरण में जा रहे थे, इस समय तक श्रेणिक का श्रद्धान जैन धर्म के विपरीत था तथा उन्होंने विपरीत श्रद्धान से मुनिराज के गले में सर्प डालकर सातवें नरक की गति बाँध ली थी। जब आप समवशरण के पास पहुँचे तब मानस्तम्भ देखते ही आपके हृदय का मान दूर हो गया। तब वे राजा श्रेणिक –

(२) रथ से उतर पयादे भये, जय जय करत सभा में गये ।
जब जिनेन्द्र देखे चित लाय, जन्म जन्म के पाप नशाय ।।
जय जय स्वामी त्रिभुवन नाथ, कृपा करो मोहि जान अनाथ ।
हों अनाथ भटको संसार, भ्रमतन कबहूँ न पायो पार ।।
यासे शरण आयो मैं सेव, मुझ दु:ख दूर करो जिनदेव ।
कर्म निकंदन महिमा सार, अशरण शरण सुयश विस्तार ।।
नहिं सेऊँ प्रभु तुमरे पांय, तो मेरो जन्म अकारथ जाय ।
सुरगुरू वन्दौं दया निधान, जग तारण जगपति जग जान ।।
दु:ख सागर सों मोहि निकास, निर्भय थान देहु सुख वास ।
मैं तुव चरण कमल गुण गाय, बहु विधि भक्ति करूं मन लाय ।।
दोउ कर जोड़ प्रदक्षिणा दई, निर्मल मति राजा की भई ।
श्रेणिक वन्दे गौतम पांय, नर कोठा में बैठे जांय ।।

(१) मंगल का अर्थ –

चौथे काल के अन्त में तीर्थंकर जिनेन्द्र भगवान महावीर स्वामी हुए और वे प्रभु समवशरण के निमित्त विपुलाचल पर्वत (राजगृही) पधारे।

विपुलाचल पर्वत के उपवन में वीतरागी देव के चरण कमल पड़ने से मन आनंदित हो गया और भगवान के पधारते ही छहों ऋतुओं के फल फूल खिल उठे यह देखकर मन में आश्चर्य हुआ।

उपवन में परम शांति छाई है, माली ने सुध लही अर्थात् खबर ली उपवन की तरफ गया और देखा कि सारे ही वृक्ष हरे – भरे हो रहे हैं, फल फूल लग रहे हैं और मालती की छटा खिल रही है।

ऐसी सुंदर मालती फल फूल रही है, सरोवर में हंस मोती चुग रहे हैं, गाय और सिंह एक साथ विचरण कर रहे हैं और भी अनेकों आश्चर्य हो रहे हैं।

माली ने अत्यंत हर्ष पूर्वक फूल लिये और राजाधिराज महाराज श्रेणिक के पास जाकर सभी समाचार कह सुनाये। यह सब देखकर राजा श्रेणिक मोहित होते हुए आश्चर्य चकित हुए और उन्होंने उसी समय रानी चेलना को बुलाया। (रानी चेलना ने विनय पूर्वक राजा श्रेणिक से कहा कि)

अपना शत्रु भी यदि अपने घर आये तो उसका सम्मान कीजिये, बैठने के लिये शुभ उच्चासन प्रदान कर मधुर वाणी बोलकर यश को प्राप्त कीजिये। (यहाँ तो वीतरागी केवलज्ञानी भगवान ही पधारे हैं)

ऐसे अनंत गुणों के निधान भगवान और वीतरागी भावलिंगी मुनिवर को देखकर मन हर्ष से भर जाये, साधु को पड़गाह कर ऐसी भक्ति से दान दीजिये कि रत्नों की वर्षा हो जाये।

(इस प्रकार प्रेरणा देते हुए) रानी चेलना ने जैन धर्म के सिद्धांत युक्तिपूर्वक श्रेणिक महाराज को सुनाये। राजा श्रेणिक ने अपने अंतर हृदय में निरंतर चिंतन किया और रानी चेलना से कहा कि प्रिय ! राज्य परिग्रह सब छोड़कर चलो और सिद्ध प्रभु के मंगल गाओ।

(२) रथ से उतर..... चौपाइयों का अर्थ –

राजा श्रेणिक रथ से उतर कर पैदल चलने लगे और जय जयकार करते हुए समवशरण (धर्म सभा) में पहुंचे। जब प्रभु महावीर स्वामी के भाव पूर्वक दर्शन किये तब जन्म–जन्म के पाप नष्ट हो गये। राजा श्रेणिक भगवान की प्रार्थना स्तुति करते हुए कहते हैं – जय हो, जय हो, हे स्वामी ! आप तीन लोक के नाथ हैं, मुझे अनाथ जानकर मुझ पर कृपा करो। मैं अनाथ होकर संसार में भटक रहा हूँ और संसार में भ्रमण करते हुए मैंने कभी भी पार नहीं पाया।

इसलिए मैं आपकी चरण शरण में आया हूँ, हे जिनदेव ! मेरा दु:ख दूर करो। आपकी महिमा से मेरे कर्मों का क्षय हो जाये यही आपकी महिमा का सार है, अशरण को शरण देने में आपके सुयश का विस्तार है।

हे प्रभु ! आप जैसे वीतरागी परमात्मा के चरण कमलों में नहीं रहूँगा तो मेरा जन्म व्यर्थ ही चला जायेगा। आप इन्द्रों, देवताओं के भी गुरू हैं, संसार के तारण हार हैं, आपको तीन लोक का त्रिलोकी नाथ जानकर हे दया के निधान ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

दु:ख रूप संसार सागर से मुझे निकालकर हे प्रभु ! मुझे निर्भय सुखरूप स्थान में वास दीजिये। मैं आपके अनन्त चतुष्टय स्वरूप आत्म गुणों की स्तुति करता हूँ और आपके चरण कमलों में बहुत प्रकार से भाव पूर्वक भक्ति करता हूँ।

इस प्रकार स्तुति प्रार्थना करते हुए राजा श्रेणिक ने दोनों हाथ जोड़कर भक्ति पूर्वक प्रदक्षिणा दी। राजा की मति भी निर्मल हुई और राजा श्रेणिक श्री गौतम स्वामी के चरण कमलों की वंदना करके मनुष्यों के कोठा में जाकर बैठ गये।

: दोहा :

गुरू गौतम के पद कमल, हृदय सरोवर आन ।
नमो चरण युग भाव सों, करिहुं बहु विधि ध्यान ॥

तत्पश्चात् राजा श्रेणिक अनेकों प्रश्न पूछते भये और भगवान की दिव्यध्वनि खिरती भई, इनकी श्रद्धा सहित वन्दना भक्ति देख गणधरादि श्रुतकेवली सन्तुष्ट होय उपदेश करते भये।

(३) समवशरण चौसंघ सो अचरज मन भयो ।
जैन धर्म पहिचान महोत्सव उठ चल्यौ ॥
हरषत वीर जिनेन्द्र, श्रेणि सन्मुख भये ।
विश्वसेन दातार, शाह पद जिन दिये ॥
शाह पद त्रैलोक जानो, तीर्थंकर गोत्र सुनाइयो ।
वीर को प्रसाद प्रगटौ, तिलक जिन चौबीसियो ॥
सोई शाह सूरो ज्ञान पूरो, दया धर्म सुनाइयो ।
अगम गम प्रवेश पहुँचे, सिद्ध मंगल गाइयो ॥
मिथ्यात्व दलन सिद्धान्त साधक, मुकति मारग जानियो ।
करनी अकरनी सुगति दुर्गति, पुण्य पाप बखानियो ॥
संसार सागर तरण तारण, गुरू जहाज विशेषियो ।
जग माहिं गुरू सम कहें बनारसी, और काहू न लेखियो ॥

भावी तत्त्व प्रसाद कौन को दियो ? महाराजाधिराज राजा श्रेणिक को दियो। राजा उप श्रेणिक के १०० पुत्र, जिनमें ४९ से लहुरे, ५० से जेठे, मध्य नायक पूरा (पूर्व) क्षेत्री बारे को पुण्य प्रताप, राजा श्रेणिक ने प्रसाद पायो। जब ३९१९ आत्माओं सहित भगवान की वन्दना स्तुति करके जय जयकार किया।

: गाथा :

श्रेणीय कथ्य नायक संतुट्ठो वीर वड्ढमानस्य ।
आदं च महापद्मो, आद उववन्न तुरिय कालम्मि ॥

हे राजा श्रेणिक ! तुम कथा के नायक होओगे अर्थात् आगामी चौथे काल के आदि में पद्मपुंग राजा के यहाँ महापद्म तीर्थंकर होओगे। तब राजा श्रेणिक ने कहा – मुनीश्वरों के वचन सत्य हैं, ध्रुव हैं, प्रमाण हैं।

॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥

चलंति तारा प्रचलंति मंदिरं, चलंति मेरू रविचंद्र मंडलम् ।
कदापि काले पृथ्वी चलंति, सत्पुरूषस्य वाक्यं न चलंति धर्मम् ॥

अपनो पद परसत राजा श्रेणिक आनन्द पूर्ण भये । भगवान महावीर स्वामी ने केवलज्ञान होने पीछे ३० वर्ष पर्यन्त, संघ सहित विहार कर जग के जीवों का कल्याण किया। तत्पश्चात्–

आहूट महीना हीनो वर्ष चउकाल तुरिय कालम्मि ।

अर्थात् – चौथे काल के अन्त में ३ वर्ष साढ़े आठ माह शेष रहने पर भगवान महावीर ने अपनी ७२ वर्ष की आयु पूर्ण कर कार्तिक वदी चतुर्दशी की रात्रि के पिछले पहर स्थान पावापुरी से निर्वाण पद प्राप्त किया।

॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥

आशा एक दयालु की,जो पूरे सब आश ।
संसार आस सब छांड़ि के,प्रभु भये मुक्ति के वास ॥

गुरू गौतम ..... दोहा का अर्थ –

गुरू गौतम गणधर के चरण कमलों की भक्ति, हृदय रूपी सरोवर में धारण करके भावपूर्वक चरण युगल की वंदना करते हुए बहुत प्रकार के ध्यान धारणा को धारण करता हूँ।

(३) मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका चार संघ सहित समवशरण की महिमा देखकर सभी भव्य आत्माओं के मन में अचरज पूर्ण आनन्द हुआ। जैन धर्म की महिमा बढ़ाने वाला, पहिचान कराने वाला महोत्सव प्रारम्भ हो गया। यहां 'उठ चल्यौ'के दो अभिप्राय हैं १–प्रारम्भ हो गया। २–बिहार करने लगा। राजा श्रेणिक अत्यंत हर्ष पूर्वक वीतरागी जिनेन्द्र महावीर भगवान के सन्मुख हुए। (राजा श्रेणिक ने जिज्ञासा पूर्वक भगवान महावीर स्वामी से ६०,००० प्रश्न पूछे) और सम्पूर्ण जगत को जानने वाले परम दातार भगवान महावीर स्वामी ने राजा श्रेणिक को परमात्म स्वरूप जिनेन्द्र पद प्रदान किया अर्थात् (आगामी चौबीसी में प्रथम तीर्थंकर होने की घोषणा रूप) अकता प्रसाद दिया। शाह अर्थात् परमात्म पद त्रिलोकीनाथ स्वरूप जानो, भगवान महावीर स्वामी ने कहा कि तुम्हें उच्च गोत्र संबंधी तीर्थंकर नाम कर्म की प्रकृति का बंध हो गया है। इस प्रकार महावीर भगवान के द्वारा दिया गया प्रसाद प्रगट हुआ और इसके साथ ही जिन चौबीसी का तिलक हो गया अर्थात् एक षट्काल चक्र के चौथे काल में होने वाले चौबीस तीर्थंकर पूर्ण हुए। वही परमात्मा जो अपने स्वरूप लीनता में महा पराक्रमी पुरुषार्थी केवलज्ञान से परिपूर्ण थे जिन्होंने दया धर्म का संदेश सुनाया अर्थात् पावन दिव्य देशना प्रदान की। उन भगवान ने अगम स्वभाव को गम अर्थात् स्वानुभव प्रमाण जान लिया और अपने शुद्धात्म स्वरूप में प्रवेश कर सिद्ध स्थान को प्राप्त किया है, ऐसे सिद्ध प्रभु के मंगल गाओ।

मिथ्यात्व का दलन करके सिद्धांत के साधक बनना यही मुक्ति का मार्ग जानो। करनी–अकरनी सुगति–दुर्गति का कारण है, यही पुण्य – पाप कहा गया है। संसार सागर से स्वयं तिरने और दूसरे जीवों को तारने में गुरू को जहाज के समान विशेष जानो, बनारसीदास कहते हैं कि संसार में गुरू समान और कोई भी नहीं है।

भावी तत्त्व प्रसाद ....

राजा श्रेणिक १०० भाई थे, उनमें ४९ भाई राजा श्रेणिक से छोटे थे और ५० भाई बड़े थे; इसलिये राजा श्रेणिक को मध्यनायक कहा गया है। उन्होंने पूर्वोपार्जित पुण्य के प्रताप से आगामी चौबीसी में प्रथम तीर्थंकर होने के संस्कार रूप प्रसाद प्राप्त किया।

विशेष – ''४९ से लहुरे, ५० से जेठे '' इस वाक्य में 'से' का अर्थ से के रूप में नहीं लेना चाहिये बल्कि यह भाव पूर्ण वचन प्रवाह है कि राजा श्रेणिक से ४९ छोटे और ५० बड़े थे और तभी राजा श्रेणिक मध्य में आते हैं।

श्रेणीय कथ्य नायक..... श्लोकार्थ –

आत्म स्वरूप में संतुष्ट अर्थात् अपने शुद्ध स्वभाव में लीन वर्द्धमान महावीर भगवान ने कहा कि हे राजा श्रेणिक ! तुम कथा के नायक होओगे। चौथे काल के आदि में तुम पहले महान जगत पूज्य महापद्म तीर्थंकर होओगे।

चलंति तारा..... श्लोकार्थ–

तारागण चलायमान हो जायें, महल मंदिर चलायमान हो जायें, सूर्य चन्द्रमा सौर मंडल और अचल मेरू पर्वत चलायमान हो जाये, कदापि काले अर्थात् किसी समय पृथ्वी भी चलायमान हो जाये तो कोई आश्चर्य नहीं किन्तु सत्पुरुष के वाक्य और धर्म कभी भी चलायमान नहीं होता।

अपने पद परसत ..... वाक्य का अर्थ –

भगवान महावीर स्वामी ने राजा श्रेणिक को आगामी चौबीसी के पहले तीर्थंकर होने का अकता (आगामी) प्रसाद दिया अर्थात् उनके तीर्थंकर होने की घोषणा की। राजा श्रेणिक अपने पद का स्पर्श अर्थात् अनुभव करके आनन्द पूर्ण हुए ।

आशा एक ..... दोहा का अर्थ–

एक मात्र दयालु परमात्म स्वरूप की आशा करो, जो समस्त इच्छाओं को पूर्ण करने वाली है क्योंकि संसार की सम्पूर्ण आशाओं को छोड़कर परमात्मा भी स्वरूप की आस करके मुक्ति में वास कर रहे हैं।

धन्य हैं वे सत्पुरुष जिनने संसार के विषय भोगों की आशा त्यागी। कैसी है संसार की आशा ?

आशा नाम नदी मनोरथ जला तृष्णा तरंगा कुला ।
राग ग्राहवती वितर्क विहगा धैर्य द्रुमध्वंसिनी ।।
मोहावर्त सुदुस्तराऽतिगहना प्रोतुंग चिंतातटी ।
तस्या पारगता विशुद्ध मनसो धन्याऽस्तु योगीश्वरा: ।।

अर्थात् धन्य हैं वे योगीश्वर जिन्होंने ऐसी आशा रूपी नदी को पार किया । हे भव्य जीवो ! आशा कीजिये तो केवल एक धर्म की कीजे और हौंस कीजे तो चारित्र की, छन्द की, फूलना भजन की, दान की, तप की, शील संयम की, यह आस हौंस के किये यह जीव मुक्ति के सुख विलसै।

सर्वथा रंज, रमन, आनन्द वांछा पूर्ण होय, कहने प्रमाण जिनेश्वर देवजी के जिन कहें, जिनके अस्थाप रूप वाणी कहें, जिन ज्योति वाणी ज्ञान श्री, कंठ कमल मुखारविन्द वाणी श्री भैया रुइया रमन जी कहें। जिन गुरुन को कहनो सत्य है, ध्रुव है, प्रमाण है। **।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।**

इष्ट – इष्ट उत्पन्न गोष्ठी, चर्चा बैठक विलास, पढ़ैया पढ़े अपनी बुद्धि विशेष, सुनैया सुनत है अपनी बुद्धि विशेष, पढ़ता से और वक्ता से श्रोता को लक्षण दीर्घ है। कब दीर्घ है ? जब गुण – गुण को जाने, दोष – दोष को पहिचाने, गुण को ग्रहण करे, दोष को परित्याग करे तब श्रोता को लक्षण दीर्घ है।

इष्ट ही दर्शन, इष्ट ही ज्ञान,ऐसा जानकर, हे भाई ! आठ पहर की साठ घड़ी में एक घड़ी दो घड़ी स्थिर चित्त होय, देव गुरू धर्म को स्मरण करे तो इस आत्मा को धर्म लाभ होय, कर्मन की क्षय होय और धर्म आराध आराध्य जीव परम्परा से निर्वाण पद को प्राप्त होय है। **।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।**

।। वीतराग धर्म की – जय ।।

अब कहा दर्शावत हैं आचार्य–

शास्त्र सूत्र सिद्धान्त नाम अर्थ जी :

१. **शास्त्र नाम काहे सों कहिये** – जामें शाश्वते देव, गुरू, धर्म की महिमा सहित, आचार, विचार, क्रियाओं का प्रतिपादन होय, ज्ञान की उत्पत्ति, कर्मों की खिपति, जीव की मुक्ति, दर्शन, ज्ञान, चारित्र, कलन, चरन, रमन, उवन दृढ़, ज्ञान दृढ़, मुक्ति दृढ़, ऐसी त्रिक स्वभाव रूप वार्ता चले या समुच्चय वर्णन जामें होय ताको नाम शास्त्र जी कहिये। नहीं तो हे भाई ! जामें मारण ताड़न वध बंधन विदारण हिंसा रूपी वार्ता को पोषण चले, जाके श्रवण करे जीव को आर्त रौद्र ध्यान उत्पन्न होय सो कुशास्त्र कहिये। सच्चे शास्त्र वही हैं जाके सुने बोध होय तथा सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाय और कुशास्त्र रूपी वार्ता की प्रवृत्ति छूट जाय, कहा भी है ''व्यवहारे परमेष्ठी जाप,निश्चय शरण आपको आप।''

साँचो देव सोई जामें दोष को न लेश कोई ।
साँचो गुरू वही जाके उर कछु की न चाह है ।।
सही धर्म वही जहाँ करुणा प्रधान कही ।
सही ग्रन्थ वही जहाँ आदि अंत एक सो निर्वाह है ।।
यही जग रतन चार ज्ञान ही में परख यार ।
साँचे लेहु झूठे डार नरभव को लाह है ।।
मनुष्य तो विवेक बिना पशु के समान गिना ।
यातैं यह बात ठीक पारणी सलाह है ।।

२. **सूत्र नाम काहे सों कहिये**– जामें संक्षेप में ही बहुत सारभूत कथन होय, जाके सुने से जीव के मन,

आशा नाम नदी..... श्लोकार्थ –

आशा नाम की नदी है जिसमें मनोरथ अर्थात् इच्छा रूपी जल भरा हुआ है, उसमें तृष्णा की तरंगों के समूह उठ रहे हैं। इस नदी में राग के मगर और वितर्क के पक्षी धैर्य रूप आत्म शक्ति को नष्ट करने वाले हैं। इसमें मोह के छोटे–बड़े गहरे भंवर उठ रहे हैं, चिन्ताओं के ऊंचे–ऊंचे तट हैं। ऐसी आशारूपी नदी को जिन योगीश्वरों ने विशुद्ध भाव पूर्वक पार कर लिया वे योगीश्वर धन्य हैं।

मंदिर विधि–धर्मोपदेश किसने लिखा ?

आर्यिका ज्ञान श्री, कंठ कमल मुखारविंद वाणी श्री भैया रुइया रमन जी कहें। पूज्य आर्यिका कमल श्री माता जी के मार्गदर्शन में आर्यिका ज्ञान श्री और श्री रुइया रमन जी ने सबसे पहले यह मंदिर विधि धर्मोपदेश लिखा। आगे चलकर पूर्वज विद्वानों के द्वारा आवश्यकतानुसार संशोधन किए गए तथा पूर्व समय में पं.बनारसीदास जी, पं.भूधरदास जी के कुछ छंद मंदिर विधि में जोड़े गए हैं, जो अभी भी चल रहे हैं।

आठ पहर की साठ घड़ी –

एक पहर में ३ घंटा और ८ पहर में २४ घंटा होते हैं। १ घंटे में ६० मिनिट होते हैं। २४ घंटे के मिनिट बनाने के लिये २४ में ६० को गुणित करें तो १४४० मिनिट लब्ध आते हैं। २४ मिनिट की एक घड़ी होती है, अत: १४४० में १ घड़ी अर्थात् २४ मिनिट का भाग देने पर ६० लब्ध आते हैं, इस प्रकार ८ पहर में ६० घड़ी होती हैं।

अब कहा दर्शावत..... का अर्थ –

अब क्या दर्शाते हैं आचार्य ? शास्त्र सूत्र सिद्धांत का नाम अर्थात् स्वरूप और अर्थ। शास्त्र का स्वरूप क्या है ? जिसमें त्रिक स्वभाव अर्थात् तीन का समूह, जैसे सच्चे देव,गुरू,धर्म की महिमा। आचार, विचार, क्रिया। कलन (ध्यान), चरन (चारित्र), रमन (स्वरूप में लीनता)। उवन दृढ़ (सम्यक्श्रद्धान में दृढ़ता), ज्ञान दृढ़ (सम्यग्ज्ञान में दृढ़ता), मुक्ति दृढ़ (सम्यक्चारित्र में दृढ़ता) जिसमें एक त्रिक या समुच्चय वर्णन हो उसे शास्त्र कहते हैं।

व्यवहारे परमेष्ठी ..... का अर्थ –

व्यवहार में पंच परमेष्ठी शरण भूत हैं, निश्चय से आप ही आपको अर्थात् निज शुद्धात्मा ही स्वयं को शरणभूत है।

सांचो देव सोई..... छंद का अर्थ –

सच्चे देव वही हैं, जिनमें जन्म जरा आदि लेश मात्र भी कोई दोष नहीं हैं। सच्चे गुरू वे हैं जिनके हृदय में सांसारिक कोई भी चाहना नहीं है। सच्चा धर्म वह है जहां करुणा दया की प्रधानता कही गई है। सच्चे शास्त्र वे हैं जिनमें प्रारंभ से अंत तक निर्विरोध एक रूप सिद्धांत का कथन है। इस प्रकार संसार में यह चार ही रत्न हैं। हे मित्र ! अपने ज्ञान में इन्हें परखो और सच्चे देव, गुरू, शास्त्र, धर्म की श्रद्धा करो, मिथ्या देव, गुरू, धर्म आदि को छोड़ दो इसी में मनुष्य जन्म का लाभ है और यदि सच्चे – झूठे का मनुष्य को विवेक नहीं है तो वह पशु के समान है; इसलिये सत्य को ग्रहण करना और असत् मिथ्या को छोड़ना यही उचित बात है और यही पारणी अर्थात् ग्रहण करने, आचरण में लाने योग्य सलाह है।

सूत्र नाम..... का अर्थ –

सूत्र नाम किसको कहते हैं अर्थात् सूत्र का स्वरूप क्या है ? विस्तार की बात को जिसके द्वारा संक्षेप में कह दिया जाय उसे सूत्र कहते हैं। जैसे – तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।

वचन, काय एक रूप हो जायें, नहीं तो मन कहूँ को चले, वचन कछू कहे, काया जाकी स्थिर न होय, ताको एक सूत्र न होय। धन्य हैं – धन्य हैं श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्यजी महाराज जिनके मन, वचन, काय, उत्पन्न, हित, शाह, नो, भाव, द्रव्य यह नौ सूत्र सुधरे तथा दसवें आत्म सूत्र अर्थात् आत्मज्ञान की प्राप्ति कर चौदह सिध्दान्त ग्रन्थों की रचना करी – **॥ जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ॥**

॥ श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की–जय ॥

: गाथा :

सूत्रं जं जिन उत्तं, तं सूत्रं सुद्ध भाव संकलियं ।
असूत्रं नहु पिच्छदि, सूत्रं ससरूव सुद्धमप्पाणं ॥

(श्री ज्ञानसमुच्चयसार गाथा – ५६४)

३. **सिद्धान्त नाम काहे सों कहिये** – जामें पूर्वापर विरोध रहित सिद्धान्त रूप चर्चा हो, सप्त तत्व,नव पदार्थ, छह द्रव्य,पंचास्तिकाय ऐसे सत्ताईस तत्वों का यथार्थ निर्णय किया होय तथा आत्मोपलब्धि की वार्ता चले, ताको नाम सिद्धान्त ग्रन्थ कहिये।

आगे प्रथमानुयोग जामें २४ तीर्थंकर,१२ चक्रवर्ती,९ नारायण,९ प्रतिनारायण,९ बलभद्र, ऐसे ६३ शलाका के महापुरुषों की कथा का वर्णन होय ताको नाम प्रथमानुयोग ग्रन्थ कहिये। न जीव को आदि है न जीव को अंत है। चार गति चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते अनंत काल हो गया परन्तु अपने आदि अन्त की खबर नहीं करी । आदि कब जानिये जब यह जीव नि:शंकितादि गुण सहित सम्यक्त्व को प्राप्त हो और अंत कब जानिये, जब मोहनीय कर्म को नाशकर तेरह प्रकार का चारित्र धारण करे, बाईस परीषह जीतकर, पंच चेल, चौबीस प्रकार परिग्रह त्याग, अट्ठाईस मूलगुण धार, चार घातिया कर्मों की निर्जरा कर, केवलज्ञान प्राप्त कर सिद्धस्थान को प्राप्त हो, आवागमन कर रहित हो, तब अंत जानिये। धन्य है उन आचार्यों को जिनने आदि अन्त की महिमा कही।

यथा नाम तथा गुण, गुण शोभित नाम, नाम शोभित गुण। धन्य हैं वे भगवान जिनके नाम भी वन्दनीक हैं और गुण भी वन्दनीक हैं, जिनके नाम लिये अर्थ अर्थात् रत्नत्रय की प्राप्ति होय है।

दोहा : जयमाल

नाम लेत पातक कटें, विघन विनासे जांय ।
तीन लोक जिन नाम की, महिमा वरणी न जाय ॥ १ ॥
गुण अनंतमय परमपद, श्री जिनवर भगवान ।
ज्ञेय लक्ष है ज्ञान में, अचल महा शिवथान ॥ २ ॥
अगम हती गुरू गम बिना, गुरूगम दई लखाय ।
लक्ष कोस की गैल है,पल में पहुँचे जांय ॥ ३ ॥
विघन विनाशन भय हरन, भयभंजन गुरूतार ।
तिनके नाम जो लेत ही, संकट कटत अपार ॥ ४ ॥
कठिन काल विकराल में, मिथ्या मत रहो छाय ।
सम्यक्भाव उद्योत कर, शिवमग दियो बताय ॥ ५ ॥
परम्परा यह धर्म है, केवल भाषित सोय ।
ताकी नय वाणी कथित, मिथ्या मत को खोय ॥ ६ ॥

नौ सूत्र सुधरे –

श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज के नौ सूत्र सुधरे, वे इस प्रकार हैं –

१. मन – मन के विचार पवित्र हो गये। **२. वचन –** वाणी से कोमल हित मित प्रिय वचन का व्यवहार होने लगा, कठोर कठिन वचन बोलना छूट गया। **३. काय –** शरीर संयम, तप, साधनामय हो गया। **४. उत्पन्न –** प्रयोजनभूत शुद्धात्मानुभूति की प्रगटता को उत्पन्न अर्थ कहते हैं यही सम्यग्दर्शन कहलाता है, जो उत्पन्न हो गया। **५. हित –** हितकार अर्थ अर्थात् सम्यग्ज्ञान प्रगट हो गया। **६. शाह –** परमात्म स्वरूप में लीनता रूप सहकार अर्थ अर्थात् सम्यक्चारित्र उत्पन्न हो गया। **७. नो –** नो कर्म रूप पुद्गल वर्गणायें साधना के प्रभाव से विगसित पुलकित हो गईं। **८. भाव –** भाव कर्म की धारा विशुद्ध हो गई। **९. द्रव्य –** ज्ञानावरणादि द्रव्य कर्मों में विशेष उपशम, क्षयोपशम और योग्यतानुरूप क्षय की स्थितियां बनीं; इस प्रकार नौ सूत्र सुधरे।

सूत्रं जं जिन.....श्लोकार्थ –

सूत्र वह है जो जिनेन्द्र भगवान द्वारा कहा गया है। उसको सुनकर शुद्ध भाव को ग्रहण करो, असूत्र को मत देखो। अपना स्व स्वभाव शुद्धात्म स्वरूप ही सच्चा सूत्र है।

सिद्धांत नाम..... का अर्थ –

सिद्धांत नाम किसे कहते हैं अर्थात् सिद्धांत का क्या स्वरूप है ? जिसमें ''पूर्वापर विरोध रहित'' पूर्व अर्थात् पहले और अपर अर्थात् बाद में निरूपित किया गया वस्तु स्वरूप का कथन विरोध रहित हो उसे सिद्धांत ग्रंथ कहते हैं। ग्रंथ में पहले के और बाद के कथन में कोई विरोध न हो वह सिद्धांत ग्रंथ कहलाता है।

सम्यग्दर्शन के आठ अंग –

१. नि:शंकित, २. नि:कांक्षित, ३. निर्विचिकित्सा, ४. अमूढ़ दृष्टि, ५. उपगूहन, ६. स्थितिकरण ७. वात्सल्य, ८. प्रभावना।

यथा नाम तथा गुण ..... का अर्थ –

भगवान का जैसा नाम हो, वैसे उनमें गुण भी हों क्योंकि गुणों से नाम की शोभा है और नाम से गुणों की शोभा है। गुणों से शोभित होता है नाम, और नाम से शोभित होते हैं गुण। इसलिये वे भगवान धन्य हैं जिनके नाम भी वंदनीक हैं और गुण भी वंदनीक हैं। तारण पंथ में यथा नाम तथा गुण के धारी भगवान की आराधना वंदना की जाती है।

नाम लेत पातक ..... स्तवन का अर्थ –

जिनके नाम स्मरण करने से पाप कट जाते हैं, विघ्न बाधायें विनस जाती हैं, ऐसे जिनेन्द्र भगवान के नाम की महिमा का तीन लोक में वर्णन नहीं किया जा सकता अर्थात् उनकी महिमा अवर्णनीय है॥ १॥

अनन्त गुणोंमय परम पद में स्थित श्री जिनवर भगवान – सिद्ध परमात्मा हैं, जिनके ज्ञान में आत्म स्वरूप ही ज्ञेय है, उसका ही निरंतर लक्ष्य है और जो महान मोक्ष स्थान में अचल रूप से विराजमान हैं॥ २॥

मोक्ष जाने की रास्ता गुरू के ज्ञान बोध के बिना अगम थी। सद्गुरू ने कृपा करके उस रास्ते का ज्ञान करा दिया, यह ज्ञान इतना महान है कि मोक्ष जाने की लाखों कोस की गैल (रास्ता) है किन्तु सद्गुरू द्वारा दिये गये ज्ञान से एक पल में ही मोक्ष पहुंच जाते हैं॥ ३॥ (ब्रजंति मोष्यं षिनमेक एत्वं–मालारोहण –१६)

श्री गुरू तारण तरण विघ्नों का विनाश करने वाले,भयों का हरण करने और भयों को नष्ट करने वाले हैं। जो भी जीव उनका नाम स्मरण करता है उसके कठिन से कठिन संकट भी दूर हो जाते हैं॥ ४॥

इस भयानक कठिन पंचम काल में मिथ्या मत छा रहे थे। ऐसे समय में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज ने सम्यक् वस्तु स्वरूप को प्रकाशित कर सच्चा मोक्षमार्ग बताया है॥ ५॥

तीर्थंकर भगवन्तों की परम्परा से चला आ रहा यह धर्म है। केवलज्ञानी भगवान ने जो वस्तु का स्वरूप कहा है, उनकी स्याद्वाद अनेकान्तमय कही गई वाणी मिथ्या मान्यता को दूर करने वाली है॥ ६॥

धन्य धन्य जिनधर्म को, सब धर्मों में सार ।
ताको पंचमकाल में, दरसायो गुरू तार ।। ७ ।।
धन्य धन्य गुरू तार जी, तारण तुमरो नाम ।
जो नर तुमको जपत हैं, सिद्ध होत सब काम ।। ८ ।।
जो कदापि गुरू तार को, नहिं होतो अवतार ।
मिथ्या भव सागर विषैं, कैसे लहते पार ।। ९ ।।

(यहाँ शास्त्र जी की विनय के लिये ''सावधान'' हो जाना चाहिये)

अब श्री शास्त्र जी को नाम कहा दर्शावत हैं – (अस्थाप किये हुए ग्रंथ का नाम उच्चारण करें) **श्री..... नाम ग्रंथ जी ।** श्री कहिये शोभनीक, मंगलीक, जय जयवन्त, कल्याणकारी, महासुखकारी भगवान महावीर स्वामी के मुखारविन्द कण्ठ कमल की वाणी इस पंचमकाल में श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज ने प्रगटी, कथी, कही नाम दर्शाई । तिनके मति, श्रुत ज्ञान परम शुद्ध हुए, अवधि को वरन्दाजो भयो अर्थात् देशावधि ज्ञान उत्पन्न हुओ । मति श्रुत ज्ञान की विशेष निर्मलता में आपने विचारमत में – श्री मालारोहण जी, श्री पंडितपूजा जी, श्री कमल बत्तीसी जी । आचारमत में – श्री श्रावकाचार जी । सारमत में – श्री ज्ञानसमुच्चयसार जी, श्री उपदेशशुद्धसार जी, श्री त्रिभंगीसार जी । ममल मत में– श्री चौबीसठाणा जी और श्री ममलपाहुड़ जी । केवलमत में – श्री खातिका विशेष जी, श्री सिद्ध स्वभाव जी, श्री सुन्न स्वभाव जी, श्री छद्मस्थवाणी जी और श्री नाममाला जी ग्रंथ की रचना करी ।इस प्रकार पाँच मतों में चौदह ग्रन्थों की रचना करी । जहाँ जैसो शब्द होय सहाय श्री गुरू तारण तरण जी को ।

।। इति धर्मोपदेश ।।

नोट –यह धर्मोपदेश पूर्ण होने के पश्चात् अस्थाप किये हुए श्री ममल पाहुड़ जी ग्रन्थ के फूलना की अचरी तक की प्रथम दो गाथा और अंतिम गाथा अथवा अन्य ग्रन्थ का अस्थाप किया हो तो प्रथम और अंतिम गाथा का सस्वर वांचन कर अर्थ सहित व्याख्या करना चाहिये पश्चात् सावधान होकर आशीर्वाद पढ़ना चाहिये ।

: आशीर्वाद :

प्रथम आशीर्वाद –

ॐ उवन उववन्न उव सु रमनं, दिप्तं च दृष्टि मयं ।
हिययारं तं अर्क विन्द रमनं, शब्दं च प्रियो जुतं ।।
सहयारं सह नंत रमण ममलं, उववन्नं शाहं धुवं ।
सुयं देव उववन्न जय जयं च जयनं उववन्नं मुक्ते जयं ।।

(जयन् जय बोलिये–जय नमोऽस्तु – ३ बार)

द्वितीय आशीर्वाद –

जुगयं खण्ड सुधार रयन अनुवं, निमिषं सु समयं जयं ।
घटयं तुंज मुहूर्त पहर पहरं, द्वि – तिय पहरं ।।
चत्रु पहरं दिप्त रयनी, वर्षं सुभावं जिनं ।
वर्षं षिपति सु आयु काल कलनो, जिन दिप्ते मुक्ते जयं ।।

(जयन् जय बोलिये–जय नमोऽस्तु – ३ बार)

धन्य है धन्य है जिन धर्म अर्थात् वीतराग धर्म, जो सब धर्मो में सारभूत है जिसको इस पंचम काल में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज ने दर्शाया है ॥ ७ ॥ श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य जी महाराज धन्य हैं, धन्य हैं। हे गुरू देव ! तारण आपका नाम है अर्थात् स्वयं तिरना और जग के जीवों को तारना आपकी विशेषता है। जो भी मनुष्य आपका स्मरण करते हैं, उनके सभी काम सिद्ध होते हैं ॥ ८ ॥ यदि कदाचित् श्री गुरू तारण तरण स्वामी जी महाराज का इस पंचम काल में अवतरण नहीं होता तो इस मिथ्या संसार सागर से हम पार कैसे पाते ? श्री जिन तारण स्वामी ने हमें समस्त रूढ़ियों और आडम्बरों से मुक्त कर भव सागर से पार होने का सम्यक् मार्ग प्रशस्त किया है ॥ ९ ॥

अब श्री शास्त्र जी ..... का अर्थ–

श्री शास्त्र जी का नाम क्या दर्शाते हैं ? यहां हाथ जोड़कर अस्थाप किये हुए ग्रंथों का सस्वर भक्ति पूर्वक नामोल्लेख करना चाहिये। जैसे – 'श्री भय षिपनिक ममल पाहुड नाम ग्रंथ जी, इसी प्रकार जिन–जिन ग्रंथों का अस्थाप किया हो उन – उन ग्रंथों का नाम स्मरण करें।

श्री कहिये ..... का अर्थ–

यहाँ श्री का अर्थ – ग्रंथ में समाहित वाणी से है। श्री अर्थात् वाणी कैसी है ? सुशोभित करने वाली, मंगल करने वाली, उमंग उत्साह बढ़ाकर स्वरूपस्थ करने वाली, कल्याण करने वाली और सुख प्रदान करने वाली है। इन पाँच विशेषणों से युक्त वाणी के लिये आगे पढ़ते हैं –'भगवान महावीर स्वामी के मुखारविन्द कण्ठ कमल की वाणी इस पंचम काल में श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य महाराज ने प्रगटी कथी कही नाम दर्शाई ' इस प्रकार यहाँ श्री का अर्थ वाणी से है।

आशीर्वाद का अर्थ –

प्रथम आशीर्वाद :

ॐकार मयी शुद्धात्म स्वरूप की अनुभूति को उत्पन्न करो। ॐकार मयी स्वसमय शुद्धात्मा में रमण करो, जो ज्ञान और दर्शनमयी है। हितकारी सूर्य के समान दैदीप्यमान निर्विकल्प ज्ञान स्वभाव में रमण करो और प्रिय शब्द अर्थात् शुद्ध स्वभाव से संयुक्त रहो। अनंत ममल स्वभाव का सहकार कर उसी में रमण करो, उसी सहित रहो, देखो ध्रुव शाह पद अपना परमात्म स्वरूप प्रगट हो रहा है। इसी साधना से स्वयं का देव पद प्रगट हो जायेगा, स्वयं परमात्मा हो जाओगे। जय हो, जय हो, जीत लो, स्वानुभव से सम्पन्न होकर मुक्ति को प्राप्त करो।

द्वितीय आशीर्वाद :

आत्मा और शरीर के अनादिकालीन जुग अर्थात् जोड़े को भेदविज्ञान पूर्वक अलग–अलग जानो, इसी में सुधार है, कल्याण है। अपने अनुपम रत्न स्वसमय शुद्धात्मा को निमिष अर्थात् पलक झपकने प्रमाण समय के लिये जीतो, प्राप्त करो। घटयं अर्थात् घड़ी भर (२४ मिनिट), तुंज=तुम स्वभाव में रहो, अभ्यास में वृद्धि करो और मुहूर्त = ४८ मिनिट, पहर पहरं = ३–३ घंटे तक, द्वि–तिय पहरं = दो पहर ६ घंटा और तीन पहर = ९ घंटा, चत्रु पहरं = ४ पहर (१२ घंटा), दिप्त रयनी = दिन रात, वर्षं = वर्षभर (३६५ दिन) तुम स्वभाव को जीतो, स्वभाव की साधना करो। वर्षं षिपति = वर्ष भी क्षय हो जाते हैं (वर्ष भर), सु आयु काल = अपनी आयु का जितना समय है उतना पूरा समय, कलनो = आत्मा के ध्यान में लगाओ और जिन स्वभाव में प्रकाशित होकर अर्थात् वीतराग स्वरूप में रमण करके मुक्ति में जयवंत होओ अर्थात् मुक्ति को प्राप्त करो।

तृतीय आशीर्वाद –

वे दो छण्ड विरक्त चित्त दिढ़ियो, कायोत्सर्गामिनो ।
केवलिनो नृत लोय लोय पेख पिखणं, दलयं च पंचेन्द्रिनो ।।
धर्मो मार्ग प्रकाशिनो जिन तारण तरो, मुक्तेवरं स्वामिनो ।
सुयं देव जुग आदि तारण तरो, उववन्नं 'श्री संघं' जयं ।।

(जयन् जय बोलिये–जय नमोऽस्तु – ३ बार)

: श्लोक :

सर्व मंगल मांगल्यं, सर्व कल्याण कारकं ।
प्रधानं सर्व धर्माणां, जैनं जयतु शासनम् ।।

आशीर्वाद (अन्तिम)

उत्पन्न रंज प्रवेश गमनं, छद्मस्थ स्वभाव ।
सुक्खेन,सुक्खेन ये दु:खानि काल विलयंति ।।

।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।

अप्प समुच्चय जानिये, ऋषि यति मुनि अनगार ।
पद पस्सय कर्महिं खिपैं,सिद्ध होंय तिहिवार ।।

सिद्ध जाँय देवन के दाता, गुरू के उपदेशे, अपने धर्म के निश्चय, अपनी धारणा के परिचय केतेक जीव निश्चय – निश्चय ब्यासी हजार वर्ष पश्चात् दु:खम – दु:खम काल खिपाय चौथे काल के आदि में पद्मपुंग राजा के यहाँ महापद्म तीर्थंकर देव, अन्मोयं स्वयं स्वयं मुक्ति गामिनो, मुक्ति के विलास असंख्यं गुणं निर्भय बली समर्थ धर्म ।श्री जिनेन्द्र देव के वचन सत्य हैं, ध्रुव हैं, प्रमाण हैं –

।। जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु ।।
।। चौबीस तीर्थंकर भगवान की–जय ।।
।। श्री गुरू तारण तरण मण्डलाचार्य महाराज की– जय ।।

: अबलबली :

जय गुरू अबलबली उवन कमल, वयन जिन ध्रुव तेरे ।
अन्मोय शुद्धं रंज रमण, चेत रे मण मेरे ।।
जय तार तरण समय तारण, न्यान ध्यान विवंदे ।
आयरण चरण शुद्धं, सर्वन्य देव गुरू पाये ।।
जय नन्द आनन्द चेयानन्द, सहज परमानंदे ।
परमाण ध्यान स्वयं, विमल तीर्थंकर नाम वन्दे ।।
जय कलन कमल उवन रमण, रंज रमण राये ।
जय देव दीपति स्वयं दीपति, मुकति रमण राये ।।
गुरु तोहि ध्यावत सुख अनंत स्वामी, तारण जिन देवा ।
उत्पन्न रंज रमण नन्द जय, मुक्ति दायक देवा ।।

।। आचार्य दाता, सहाई दाता, प्यारो दाता ।।

तृतीय आशीर्वाद : उन दोनों अर्थात् राग–द्वेष को छोड़कर वैराग्य युक्त होकर चित्त में दृढ़ता धारण करके कायोत्सर्ग गामी बनो अर्थात् शरीर से ममत्व का त्याग करो। केवलज्ञानी भगवान अपने सत्य स्वरूप में लीन लोकालोक के ज्ञायक हैं, तुम भी सत्यार्थ उपदेश को अच्छी तरह से परीक्षण कर स्वानुभव से प्रमाण कर स्वीकार करो और पाँच इन्द्रियों के समूह को वश में करो। धर्म मार्ग का प्रकाशन करने वाले जिन तारण तरण मुक्ति का वरण करने वाले स्वामी हैं। युग अर्थात् चतुर्थ काल के प्रारंभ में हुए स्वयंभू आदिदेव ऋषभनाथ भगवान स्वयं तिरे और उन्होंने सबको तिरने का मार्ग बताया था, उनकी वीतराग परम्परा में 'श्री संघ' उत्पन्न हो गया – जयवंत हो।

सर्व मंगल ..... श्लोकार्थ – समस्त मंगलों में परम मंगल स्वरूप, सर्व प्रकार से कल्याण करने वाला, सब धर्मों में प्रधान यह जिन धर्म, वीतराग शासन सदा जयवंत हो।

अंतिम आशीर्वाद ..... का अर्थ – उत्पन्न अर्थात् निज शुद्धात्मानुभूति रूप उत्पन्न अर्थ (सम्यग्दर्शन) को प्रगट करो। उसी में रंजायमान (हर्षित) रहो और सानन्द वीतराग निर्विकल्प समाधि में प्रवेश करो, लीन रहो। अभी छद्मस्थ स्वभाव है। सुख स्वभाव के आश्रय से, सुख स्वभाव के बल से सभी दु:ख और दु:ख पूर्ण काल विला जायेगा।

अप्प समुच्चय ..... दोहा का अर्थ– वीतरागी भव्य आत्मा मुनिजनों के चार समूह जानो–ऋषि, यति, मुनि और अनगार। जो वीतरागी योगी अपने सिद्ध स्वरूप शुद्ध स्वभाव का स्पर्श अर्थात् अनुभव करते हैं, अपने पद की स्वानुभूति में ठहरते हैं, वे उसी समय शाश्वत सिद्ध पद प्राप्त कर लेते हैं।

दु:खम दु:खम काल ..... का अर्थ – यह हुण्डावसर्पिणी पंचम 'दु:खम' काल चल रहा है, छटवां काल 'दु:खम दु:खम' है। इसके पश्चात् आगामी उत्सर्पिणी का प्रारम्भ 'दु:खम दु:खम' काल से होगा, पश्चात् पुन: पंचम काल 'दु:खम' होगा। इस प्रकार इन चारों ही 'दु:खम दु:खम' काल को खिपाकर राजा श्रेणिक का जीव चौथे काल में पद्मपुंग राजा के यहां महापद्म तीर्थंकर पद को प्राप्त होगा अत: ''दु:खम दु:खम काल खिपाय'' ही पढ़ना चाहिये।

अबलबली ..... का अर्थ – (जय गुरु...) हे परम गुरू जिनेन्द्र भगवान ! आपके मुख कमल से उत्पन्न हुए अबल जीवात्मा को – रत्नत्रय की शक्ति से पोषण कर, बलवान बनाने वाले ध्रुव वचन अर्थात् अटल वचन जयवंत हों। हे मेरे मन ! चेत, जाग, अपने शुद्ध स्वभाव की अनुमोदना कर, उसी में रंजायमान होकर स्वभाव में ही रमण कर। (जय तार...) तारण तरण जिनेन्द्र भगवान की जय हो, जो पूर्ण ज्ञान ध्यान में लीन रहते हुए भव्यात्माओं के लिये तारणहार हैं, उनकी अत्यंत भक्ति पूर्वक वंदना करता हूँ। शुद्ध सम्यक्चारित्र में आचरण करके अर्थात् निर्विकल्प स्वभाव में रमण करके मैंने सर्वज्ञ देव परम गुरू अपने परमात्म स्वरूप को प्राप्त कर लिया है। (जय नंद...) नन्द, आनन्द, चिदानन्द, सहजानन्द, परमानन्द मयी स्वभाव जयवन्त हो। ध्यान प्रमाण अर्थात् जितना वीतराग भाव शुद्धोपयोग प्रगट हो रहा है उसमें उतने प्रमाण में स्वयं का विमल तीर्थंकर परमात्म स्वरूप ज्ञान में झलक रहा है, मैं ऐसे सत्स्वरूप की वंदना करता हूँ। (जय कलन...) अपने ज्ञायक स्वरूप के ध्यान की प्रगटता, रमणता और रंजायमानपना अर्थात् लीनता जिन्हें प्रगट हुई है, ऐसे निज स्वरूप में रमण करने वाले जिनराज की जय हो। परमात्म देव परम केवलज्ञान से परिपूर्ण दैदीप्यमान, स्वयं में प्रकाशमान मुक्ति रमणी के राजा हैं ऐसे जिनराज सदा जयवन्त हों। (गुरु तोहि...) हे परम गुरू स्वामी तारण तरण जिनेन्द्र भगवान (निश्चय से निज शुद्धात्म स्वरूप) ! आपके ध्यान करने से अनन्त सुख की प्राप्ति होती है। साधक से सिद्ध पद की प्राप्ति तक क्रमश: उत्पन्न अर्थ आदि पाँच अर्थ, उत्पन्न रंज आदि पाँच रंज,भय खिपक रमण आदि पाँच रमण, नन्द आदि पाँच नन्द प्रगट होते हैं, यह साधना परमात्म पद और मुक्ति को देने वाली है।

आचार्य दाता..... का अर्थ – आचार्य ज्ञान अर्थात् शिक्षा और दीक्षा के देने वाले हैं, वे मोक्षमार्ग में सहायक दाता हैं और पूज्य प्रिय दाता हैं। यह कहने का प्रयोजन गुरू के प्रति श्रद्धा भक्ति का भाव व्यक्त करना है।

: प्रमाण गाथा :

काऊण णमुक्कारं, जिणवर वसहस्स वड्ढमाणस्स ।
दंसण मग्गं वोच्छामि, जहाकम्मं समासेण ।।
सव्वण्हु सव्वदंसी, णिम्मोहा वीयराय परमेट्ठी ।
वन्दित्तु तिजगवन्दा, अरहंता भव्य जीवेहिं ।।
सपरा जंगम देहा, दंसण णाणेण सुद्ध चरणाणं ।
णिग्गंथ वीयराया, जिणमग्गे एरिसा पडिमा ।।
मणुयभवे पंचिन्दिय, जीवट्ठाणेसु होइ चउदसमे ।
एदे गुण गण जुत्तो, गुणमारूढ़ो हवइ अरुहो ।।
णाणमयं अप्पाणं, उवलद्धं जेण झडियकम्मेण ।
चइऊण य परदव्वं, णमो णमो तस्स देवस्स ।।
जिणबिम्बं णाणमयं, संजमसुद्धं सु वीयरायं च ।
जं देइ दिक्खसिक्खा, कम्मक्खय कारणे सुद्धा ।।
संसग्ग कम्म खिवणं, सारं तिलोय न्यान विन्यानं ।
रुचियं ममल सहावं, संसारं तिरंति मुक्ति गमनं च ।।
गुण वय तव सम पडिमा, दाणं जलगालणं अणत्थमियं ।
दंसण णाण चरित्तं, किरिया तेवण्ण सावया भणिया ।।

।। श्री गुरू तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की–जय ।।

इसके पश्चात् सावधान होकर श्री जिनवाणी जी को भक्ति भाव और विनय पूर्वक वेदी जी पर विराजमान करके आरती करना चाहिये। आरती के बाद तिलक, प्रसाद – प्रभावना तत्पश्चात् तत्त्वमंगल और अंत में स्तुति करके विनय करना चाहिये।

तिलक – चंदन की विधि –

आरती करने के पश्चात् सभी श्रावकजन अपने स्थान पर विनयपूर्वक बैठ जावें।
चंदन की कटोरी पंडित जी अपने हाथ में लेकर यह श्लोक पढ़ें –

चंदनं शांति दातारं, सर्व सौख्य प्रदायकम् ।
प्रतीकं रत्नत्रयं विंदं, सिद्ध सिद्धं नमाम्यहम् ।।

यह मंत्र पढ़ने के बाद कोई सज्जन सिर पर टोपी लगाकर अनामिका अर्थात् छिंगुरी के पास वाली अंगुली से सबको माथे के भ्रूमध्य अर्थात् दोनों भौहों के बीच में चंदन लगावें। कोई बहिन माताओं बहिनों को चंदन लगावें।

चंदन लगाने की क्या विशेषता है ?

चंदन शांति स्वरूप है, माथे का चंदन सौभाग्य सूचक तथा हम किसके उपासक हैं इसका प्रतीक है। विंदी लगाना सिद्ध स्वरूप का प्रतीक है तथा खौर का चंदन लगाना अनन्त चतुष्टय, रत्नत्रय सहित सिद्ध स्वरूप का प्रतीक है।

प्रसाद – प्रभावना

आये हुए प्रसाद की थाली और व्रत भंडार की राशि पंडित जी अपने हाथ में लेकर खड़े होवें और धन्यवाद स्वरूप शुभकामना करें – श्री शुभ स्थान..... निवासी श्रीमान्..... की ओर से .....के उपलक्ष्य में प्रभावना निमित्त प्रसाद आया तथा ..... रुपया व्रत भण्डार में आये। आपके शुभ भावों में निरन्तर वृद्धि हो।

काऊण णमुक्कारं आदि.....गाथाओं का अर्थ–

जिनवर वृषभ ऐसे जो प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव तथा अंतिम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान हैं, उन्हें नमस्कार करके दर्शन अर्थात् मत का जो मार्ग है उसे यथानुक्रम से संक्षेप में कहूंगा।

अरिहंत परमेष्ठी सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, निर्मोह, वीतरागी हैं, वे भगवान तीनों लोकों के भव्य जीवों के द्वारा वंदनीय हैं।

जिनका चारित्र दर्शन ज्ञान से शुद्ध निर्मल है, उनकी स्व – परा अर्थात् अपनी और पर की (गुरू और शिष्य की अपेक्षा) चलती हुई देह है वह जिन मार्ग में ''जंगम प्रतिमा'' है। अथवा स्व–परा अर्थात् आत्मा से भिन्न है देह, वह कैसी है ? निर्ग्रंथ वीतराग है, जिन मार्ग में ऐसी 'प्रतिमा' कही गई है।

मनुष्य भव में पंचेन्द्रिय नामक चौदहवें जीवस्थान अर्थात् जीवसमास, उसमें इतने गुणों के समूह से युक्त तेरहवें गुणस्थान को प्राप्त अरिहंत होते हैं।

जिन्होंने पर द्रव्य को छोड़कर द्रव्य, भाव, नो कर्मों की निर्जरा कर ज्ञानमयी आत्मा को प्राप्त कर लिया है ऐसे देव को हमारा नमस्कार हो, नमस्कार हो।

जिनबिम्ब कैसा है ? ज्ञानमयी है, संयम से शुद्ध है, अतिशय वीतराग है, जो शिक्षा और दीक्षा देता है, कर्म के क्षय का कारण और शुद्ध है। जिनमें इतनी विशेषतायें हों ऐसे वीतरागी आचार्य परमेष्ठी ही सच्चे 'जिनबिम्ब' होते हैं।

ममल स्वभाव की रुचि पूर्वक स्वभाव का संसर्ग करने से कर्म क्षय हो जाते हैं। ज्ञान – विज्ञान ही तीन लोक में सार है इसी के बल से ज्ञानी संसार से तिरते और मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

अष्ट मूलगुण, बारह व्रत, बारह तप, समता भाव, ग्यारह प्रतिमायें, चार दान, पानी छानकर पीना, रात्रि भोजन नहीं करना, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र की साधना यह श्रावक की त्रेपन क्रियाएं कही गई हैं।

आरती क्यों की जाती है ?

जब मंदिर विधि करने से भावों में विशुद्धता आती है, शुद्धता की अनुभूति होती है तब हृदय भाव विभोर हो जाता है, इन्हीं शुभभावों सहित ज्ञान की प्रकाशक जिनवाणी की भक्ति पूर्वक ज्ञान ज्योति से आरती प्रज्ज्वलित कर आरती करते हैं जिससे परिणामों में और अधिक विशुद्धता आती है।

दूसरी बात यह है कि तारण समाज में एक चेल और पाँच चेल की आरती बनाई जाती है। आरती ज्योति रूप है इस ज्योति स्वरूप को 'दीप्ति' कहा गया है। दीप्ति का अर्थ होता है – ज्ञान। इस प्रकार एक चेल की आरती केवलज्ञान की प्रतीक है और पाँच चेल की आरती पाँच ज्ञान की प्रतीक है, जो सत्ता अपेक्षा प्रत्येक जीव के पास हैं। ऐसे सम्यग्ज्ञान की दीप्ति अर्थात् ज्योति मेरे अंतर में प्रकाशित हो इसी अभिप्राय से आरती की जाती है।

प्रसाद – प्रभावना–

प्रभावना हेतु आये हुए प्रसाद की जय बोलने के साथ ही यदि पात्रभावना हो, व्रत उद्यापन हो या अन्य संस्थाओं, तीर्थक्षेत्रों, पत्र पत्रिकाओं के लिये दान दिया गया हो या चैत्यालय आदि के लिये उपकरण, ग्रंथ आदि आये हों तो व्रत भंडार के साथ सबकी सूचना देवें और प्रभावना करें ।

(प्रसाद वितरण के समय माताओं बहनों को भक्ति भाव पूर्वक भजन पढ़ना चाहिये)

प्रसाद वितरण का क्या महत्त्व है ?

प्रसाद – दान की प्रभावना स्वरूप वितरण किया जाता है। किसी को चढ़ाया नहीं जाता या चढ़ाकर नहीं बांटा जाता। प्रसाद प्रभावना स्वरूप बांटने से भावों में निर्मलता आती है और पुण्य की वृद्धि होती है।

विशेष – प्रसाद प्रभावना के पश्चात् तत्त्वमंगल पढ़ना चाहिये तत्पश्चात् जिनवाणी स्तुति पढ़कर कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े होकर नौ बार णमोकार मंत्र का स्मरण करके पंचांग अथवा अष्टांग नमस्कार पूर्वक विनय करना चाहिये।

मंदिर विधि में प्रयुक्त लक्षण संग्रह भेद – प्रभेद

श्री १०८ गुणों की जाप

परमेष्ठी ५ – अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु।

रत्नत्रय ३ – श्री सम्यग्दर्शन, श्री सम्यग्ज्ञान, श्री सम्यक्चारित्र।

अनुयोग ४ – प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग।

सिध्द पूजा यंत्र

सिद्ध के ८ गुण – १. सम्यक्त्व, २. दर्शन, ३. ज्ञान, ४. अगुरुलघुत्व, ५. अवगाहनत्व, ६.सूक्ष्मत्व, ७.वीर्यत्व, ८. निराबाधत्व।

अर्हन्त पूजा यंत्र

सोलह कारण भावना – १. दर्शन विशुद्धि, २. विनय सम्पन्नता, ३. शीलव्रतेष्वनतिचार, ४.अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग, ५. संवेग, ६. शक्तितस्त्याग, ७. शक्तितस्तप, ८. साधुसमाधि, ९.वैयावृत्यकरण, १०. अर्हत्भक्ति,११. आचार्य भक्ति,१२. बहुश्रुतभक्ति, १३. प्रवचन भक्ति, १४. आवश्यक अपरिहाणि, १५. मार्ग प्रभावना, १६. प्रवचन वत्सलत्व।

आचार्य एवं उपाध्याय पूजा का यंत्र–

दश विधि धर्म – १. उत्तम क्षमा, २. उत्तम मार्दव, ३. उत्तम आर्जव, ४. उत्तम सत्य, ५. उत्तम शौच, ६. उत्तम संयम, ७. उत्तम तप, ८. उत्तम त्याग, ९. उत्तम आकिंचन्य १०. उत्तम ब्रह्मचर्य।

साधु पूजा का यंत्र–

(अ) सम्यग्दर्शन के ८ अंग – १. नि:शंकित, २. नि:कांक्षित, ३. निर्विचिकित्सा, ४. अमूढ़ दृष्टि, ५. उपगूहन, ६. स्थितिकरण, ७. वात्सल्य, ८. प्रभावना।

(ब) सम्यग्ज्ञान के ८ अंग – १. व्यंजनोर्जिताय नम:, २. अर्थसमग्राय नम:, ३. शब्दार्थ भावपुण्याय नम:, ४. कालाध्ययनसमग्राय नम:, ५. बहुमानसमग्रायनम:, ६. उपधानसमग्रायनम:, ७. वीर्याध्ययनसमग्रायनम:, ८. विनयेन मुदिताय नम:।

(स) तेरह प्रकार चारित्र का यंत्र –

५ महाव्रत – १. अहिंसा महाव्रत, २. सत्य महाव्रत, ३. अचौर्य महाव्रत, ४. ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५. परिग्रह त्याग महाव्रत।

३ गुप्ति – १. मनोगुप्ति, २. वचनगुप्ति, ३. काय गुप्ति।

५ समिति – १. ईर्या समिति, २. भाषा समिति, ३. एषणा समिति, ४. आदान निक्षेपण समिति, ५. प्रतिष्ठापना समिति। (इस प्रकार ७५ गुण)

७ तत्व – १. जीव तत्त्व, २. अजीव तत्त्व, ३. आस्रव तत्त्व, ४. बन्ध तत्त्व, ५. संवर तत्त्व, ६. निर्जरा तत्त्व ७.मोक्ष तत्त्व।

९ पदार्थ – १. जीव पदार्थ, २. अजीव पदार्थ, ३. पुण्य पदार्थ, ४. पाप पदार्थ, ५. आस्रव पदार्थ, ६. बंध पदार्थ, ७. संवर पदार्थ, ८. निर्जरा पदार्थ, ९. मोक्ष पदार्थ।

६ द्रव्य – १ . जीव द्रव्य, २. पुद्गल द्रव्य, ३. धर्म द्रव्य, ४. अधर्म द्रव्य, ५. आकाश द्रव्य, ६. काल द्रव्य।

५ पंचास्तिकाय –१ . जीवास्तिकाय, २. अजीवास्तिकाय, ३. धर्मास्तिकाय, ४. अधर्मास्तिकाय, ५. आकाशास्तिकाय।

६ सम्यक्त्व –१. मूल सम्यक्त्व, २. आज्ञा सम्यक्त्व, ३. वेदक सम्यक्त्व,४. उपशम सम्यक्त्व, ५. क्षायिक सम्यक्त्व, ६. शुद्ध सम्यक्त्व।

८ ज्ञानोपयोग – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान, कुमतिज्ञान, कुश्रुतज्ञान, कुअवधिज्ञान।

४ दर्शनोपयोग– चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।

(८ ज्ञानोपयोग और ४ दर्शनोपयोग यही बारह उपयोग कहलाते हैं।)

३४ अतिशय –

जन्म के १० अतिशय – १. स्वेद (पसीना) का अभाव, २. मल का अभाव, ३. दूध समान रुधिर, ४. समचतुरस्र संस्थान, ५. वज्रवृषभनाराच संहनन, ६. सुंदर रूप, ७. अति सुंगधता, ८. १००८ लक्षण, ९. अपरिमित बल, १०. हित मित वचन।

केवलज्ञान के १० अतिशय – १. सौ योजन तक चहुं ओर सुभिक्ष, २. आकाश में गमन, ३. जीव वध का अभाव, ४. कवलाहार का अभाव, ५. उपसर्ग का अभाव, ६. चतुर्मुखपना, ७. सर्व विद्या ईश्वर पना, ८. छायारहित पना, ९. पलक नहीं झपकना, १०. नखकेश नहीं बढ़ना।

देवकृत १४ अतिशय – १. अर्धमागधीभाषा, २. सर्व जीव मैत्री, ३. सर्व ऋतु फलित वृक्ष, ४. दर्पण वत्भूमि, ५. सुगंधित वायु का बहना, ६. सर्व जीव आनन्द होना, ७. भूमि कंटक रहित होना, ८. सुगन्धित जल की वर्षा, ९. चरणों के नीचे कमलों की रचना होना, १०. धन धान्य संपन्न भूमि, ११. दशों दिशाओं का निर्मल होना, १२. जय जय शब्द होना, १३. धर्म चक्र आगे चलना, १४. अष्ट मंगल द्रव्यों का होना। (दर्पण, छत्र,ध्वजा, कलश, चँवर, घंटा, झारी,पंखा)

८ प्रातिहार्य –१. अशोकवृक्ष, २. देवों द्वारा पुष्प वर्षा, ३. दिव्य ध्वनि, ४.६४ चँवर ढुरना, ५. रत्न जड़ित सिंहासन, ६. भामण्डल, ७. दुन्दुभिशब्द, ८. तीन छत्र।

१२ तप – ६ अंतरंग तप – १. प्रायश्चित, २. विनय, ३. वैयावृत्य, ४. स्वाध्याय, ५. व्युत्सर्ग, ६. ध्यान।
६ बाह्यतप – १. अनशन, २. अवमौदर्य, ३. वृत्तिपरिसंख्यान , ४. रस परित्याग, ५. विविक्त शय्यासन, ६. कायक्लेश।

६ आवश्यक– १. अस्तित्व, २. वस्तुत्व, ३. अप्रमेयत्व, ४. अगुरूलघुत्व, ५. अरूपत्व, ६. चेतनत्त्व।

चौरासी लाख उत्तर गुण – ८४ लाख उत्तर गुण आत्मा के विभाव परिणामों के बाह्य कारणों की अपेक्षा भेद होते हैं।

८४ लाख दोषों के अभावरूप ८४ लाख उत्तर गुण जानना चाहिये।

८४ लाख भेद इस प्रकार हैं–

१. हिंसा,२.झूठ, ३. चोरी, ४. मैथुन, ५. परिग्रह, ६. क्रोध, ७. मान, ८. माया, ९. लोभ, १०. भय, ११. जुगुप्सा, १२. अरति, ३. शोक १४. मनोदुष्टत्त्व, १५. वचनदुष्टत्त्व, १६. कायदुष्टत्त्व, १७. मिथ्यात्व, १८. प्रमाद, १९. पैशून्य, २०. अज्ञान, २१. इन्द्रिय का अनुग्रह ऐसे २१ दोष हैं। इनको अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार इन चारों से गुणा करने पर ८४ होते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु प्रत्येक साधारण यह स्थावर एकेन्द्रिय जीव छह, विकलत्रय – ३, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पंचेन्द्रिय एक, इस प्रकार जीवों के दस भेद, इनका परस्पर आरंभ से घात होता है इसलिये इनको परस्पर गुणा करने से १०० होते हैं। इन १०० से उपरोक्त ८४ का गुणा करने पर ८४०० होते हैं। इनको शील विराधना के १० दोषों से गुणा करने पर ८४००० होते हैं।

शील विराधना के १० दोष –

१. स्त्री संसर्ग, २. पुष्ट रस भोजन, ३. गंध माल्य का ग्रहण, ४. सुन्दर शय्यासन का ग्रहण, ५. भूषण का मंडन, ६. गीत वादित्र का प्रसंग, ७. धन का संप्रयोजन, ८. कुशील का संसर्ग, ९. राज सेवा, १०. रात्रि

संचरण, इनके आलोचना के १० दोष हैं – गुरुओं के पास लगे हुए दोषों की आलोचना करे सो सरल होकर न करे, कुछ शल्य रखे, उसके १० भेद किये हैं, इन दस से उपरोक्त ८४००० का गुणा करने पर ८,४०,००० होते हैं। आलोचना को प्रथम करके प्रायश्चित के १० भेद हैं, इनसे गुणा करने पर ८४,००,००० होते हैं। यह सब दोषों के भेद हैं, इन दोषों के अभाव से ८४ लाख उत्तर गुण होते हैं।

चतुर्विधि संघ – मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका यह चार प्रकार का होने से चतुर्विधि संघ है।

११. अंग – १. आचारांग, २. सूत्र कृतांग, ३. स्थानांग, ४. समवायांग, ५. व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग, ६. ज्ञातृधर्म कथांग, ७. उपासकाध्ययनांग, ८. अंत:कृत दशांग, ९. अनुत्तरोपपादिकांग, १०. प्रश्नव्याकरणांग,११. विपाक सूत्रांग।

(बारहवां दृष्टिवाद नाम का अंग है,सभी मिलाकर द्वादशांग कहलाते हैं)

१४ पूर्व – १. उत्पाद पूर्व, २. अग्रायणी पूर्व, ३. वीर्यानुवाद पूर्व, ४. अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व, ५. ज्ञान प्रवाद पूर्व, ६. सत्य प्रवाद पूर्व, ७. आत्म प्रवाद पूर्व, ८. कर्म प्रवाद पूर्व, ९. प्रत्याख्यान पूर्व, १०. विद्यानुवाद पूर्व, ११. कल्याणवाद पूर्व, १२. प्राणवाद पूर्व, १३. क्रिया विशाल पूर्व,१४. त्रिलोक बिन्दु सार पूर्व।

सम्यक्त्व के १० भेद – १. ज्ञान, २. उपदेश, ३. अर्थ, ४. बीज, ५. संक्षेप, ६. सूत्र, ७. व्यवहार, ८. अवगाहन, ९. प्रवचन केवलि,१०. परम।

सम्यग्दर्शन के ८ गुण –

१.संवेग, २. निर्वेद, ३. निंदा, ४. गर्हा, ५. उपशम, ६. भक्ति, ७. वात्सल्य, ८. अनुकम्पा।

अरिहंत भगवान १८ दोष रहित होते हैं –

१. क्षुधा, (भूख) २. तृषा, (प्यास) ३. जन्म, ४. जरा, (बुढ़ापा) ५. मरण, ६. विस्मय, (आश्चर्य) ७. अरति, (पीड़ा) ८. खेद, ९. शोक, १०. रोग, ११. मद, (गर्व) १२. मोह, १३. राग १४. द्वेष,१५. भय, १६. निद्रा, १७. चिन्ता १८. स्वेद, (पसीना)।

समवशरण की १२ सभाओं का वर्णन –

१. समवशरण के मध्य भाग में बैठे हुए सर्वज्ञ वीतराग अरिहंत भगवान की दाहिनी बाजू में गणधर देव आदि सात प्रकार के मुनिराज बैठते हैं। २. दूसरे कोठे में कल्पवासिनी देवियां, ३. तीसरे में आर्यिकायें तथा मनुष्य स्त्रियां, ४. चौथे में ज्योतिषी देवों की देवियाँ, ५. पाँचवें में व्यंतरनी, ६. छटवें में भवनवासिनी देवियाँ, ७. सातवें में भवनवासी देव, ८. आठवें में व्यंतर देव, ९. नववें में ज्योतिषी देव, १०. दसवें में कल्पवासी देव, ११. ग्यारहवें में मनुष्य, चक्रवर्ती, मांडलीक आदि नरेश, विद्याधर आदि पुरुष बैठते हैं, १२ बारहवें कोठे में पशु – सिंह, मृग, हाथी, घोड़ा, मयूर, सर्प, बिल्ली, चूहा आदि तिर्यंच योनि के जीव परस्पर बैर का त्याग करके एक ही स्थान में बैठते हैं।

२२ परीषह –

१. क्षुधा, २. तृषा, ३. शीत, ४. उष्ण, ५. दंशमशक, ६. नाग्न्य, ७. अरति, ८. स्त्री, ९. चर्या, १०. निषद्या, ११. शय्या, १२. आक्रोश, १३. वध, १४. याचना, १५. अलाभ, १६.रोग,१७. तृणस्पर्श, १८. मल, १९. सत्कार पुरस्कार, २०. प्रज्ञा, २१. अज्ञान, २२. अदर्शन यह २२ परीषह हैं।

एक पूर्व की संख्या –

७० लाख करोड़ वर्ष +५६ हजार करोड़ वर्ष = १ पूर्व में ७० लाख ५६ हजार करोड़ वर्ष होते हैं। (७०,५६,०००,०००,००,०००)

८ पहर में ६० घड़ी – १ पहर = ३ घंटा, ८ पहर =२४ घंटा। १ घंटा = ६० मिनिट। २४ घंटा के मिनिट बनाओ। २४ गुणित ६० = १४४० मिनिट , १ घड़ी = २४ मिनिट, १४४० भागित २४ = ६० घड़ी ।

६३ शलाका पुरुष और नारद, रुद्र, कामदेव सम्बंधी युगपत् अस्तित्व काल सूचक पत्र

क्र.	२४ तीर्थंकर	१२ चक्रवर्ती	९ बलभद्र	९ नारायण	९ प्रतिनारा.	९ नारद	११ रुद्र	२४ कामदेव
०१	०१. ऋषभनाथ	१. भरत	*	*	*	*	१. भीम	०१. बाहुबलि
०२	०२. अजितनाथ	२. सगर	*	*	*	*	२. बलि	०२. प्रजापति
०३	०३. संभवनाथ	*	*	*	*	*	*	०३. श्रीधर
०४	०४. अभिनंदन	*	*	*	*	*	*	०४. दर्शनभद्र
०५	०५. सुमतिनाथ	*	*	*	*	*	*	०५. प्रसेनचन्द्र
०६	०६. पद्मप्रभ	*	*	*	*	*	*	०६. चन्द्रवर्ण
०७	०७. सुपार्श्वनाथ	*	*	*	*	*	*	०७. अग्नियुक्त
०८	०८. चन्द्रप्रभ	*	*	*	*	*	*	०८. सनत्कुमार
०९	०९. पुष्पदंत	*	*	*	*	*	३. शंभु	०९. वत्सराज
१०	१०. शीतलनाथ	*	*	*	*	*	४. विश्वानल	१०. कनकप्रभ
११	११. श्रेयांसनाथ	*	१. विचल	१.त्रिपिष्ट	१.अश्वग्रीव	१. भीम	५. सुप्रतिष्ठ	११. मेघप्रभ
१२	१२. वासुपूज्य	*	२. अचल	२. द्विपिष्ट	२. तारक	२. महाभीम	६. अचल	*
१३	१३. विमलनाथ	*	३. सुधर्म	३. स्वयंभू	३. मेरुक	३. रौद्र(इन्द्र)	७. पुंडरीक	*
१४	१४. अनन्तनाथ	*	४. सुप्रभ	४. पुरुषोत्तम	४. निशुंभ	४. महारुद्र	८. अजितंधर	*
१५	१५. धर्मनाथ		५. सुदर्शन	५. पुरुषसिंह	५. मधुकैटभ	५. काल	९. जितनाभि	*
१६	+	३. मघवा	*	*	*	*	*	*
१७	+	४. सनत्कुमार	*	*	*	*	*	*
१८	१६. शांतिनाथ	५. शान्तिनाथ	*	*	*	*	१०. पीठ	१२.शांतिनाथ
१९	१७. कुन्थुनाथ	६. कुन्थुनाथ	*	*	*	*	*	१३. कुन्थुनाथ
२०	१८. अरहनाथ	७. अरहनाथ	*	*	*	*	*	१४. अरहनाथ
२१	+	८. सुभौम	*	*	*	*	*	*
२२	+	*	६. नन्दी	६.पुंडरीक	६. प्रहलाद	६. महाकाल	*	१५.विजयराज
२३	१९. मल्लिनाथ	*	*	*	*	*	*	१६. श्रीचंद्र
२४	+	*	७. नन्दीमित्र	७. दत्त	७. बलि	७. दुर्मुख	*	१७. नलराज
२५	+	९. महापद्म	*	*	*	*	*	*
२६	२०. मुनिसुव्रत	*	*	*	*	*	*	*
२७	+	१०. हरिषेण	*	*	*	*	*	*
२८	+	*	८. रामचन्द्र	८. लक्ष्मण	८. रावण	८. नरमुख	*	१८. हनुमंत
२९	२१. नमिनाथ	*	*	*	*	*	*	१९. बलिराज
३०	+	११. जयसेन	*	*	*	*	*	*
३१	२२. नेमिनाथ	*	९. बलराम	९. कृष्ण	९. जरासंध	९. अधोमुख	*	२०. वसुदेव
३२	+	१२. ब्रह्मदत्त	*	*	*	*	*	२१. प्रद्युम्न
३३	२३. पार्श्वनाथ	*	*	*	*	*	११. महादेव	२२. नागकुमार
३४	२४. महावीर	*	*	*	*	*	*	२३. जीवंधर
३५	+	*	*	*	*	*	*	२४.जम्बूस्वामी

सूचना – इस सारणी में जो तीर्थंकरों के नामों के आगे चक्रवर्ती बलभद्र आदि के नाम लिखे हैं, वे उन – उन तीर्थंकरों के समय में हुए हैं ऐसा समझना चाहिये और तीर्थंकरों के नाम वाले खाने में जो + इस प्रकार का चिन्ह है और उसके आगे जिन चक्रवर्ती आदि के नाम लिखे है तो वे सब पहले और बाद के होने वाले तीर्थंकरों के अंतराल काल में हुये ऐसा समझना चाहिये। जिस कोष्टक में जहाँ – जहाँ * इस प्रकार का चिन्ह है वहाँ – वहाँ उनका अभाव समझना चाहिये।

१. आरती तारण स्वामी जी की

आरती तारण स्वामी की, कि जय जय जय जिनवाणी की ॥ टेक ॥
गले में समकित की माला, हृदय में भेद ज्ञान पाला ॥
धन्य वह मोक्षपंथ वाला, कि महिमामय शिवगामी की.....
निसई सूखा सेमरखेड़ी, बजावें देव मधुर भेरी ॥
सुनो प्रभु विनय आज मेरी, कि श्री गुरूदेव नमामी की.....
मुझे इन कर्मों ने घेरा असाता दूर करो मेरा ॥
लगाना अब न प्रभु बेरा, विनय सुन अपने प्राणी की .....
आरती चौदह ग्रन्थों की, कि जय जय जय निर्ग्रन्थों की ॥
कुंवर जय बोलो संतों की, बेतवा तीर नमामी की .....
आरती करहुं नाथ तुमरी, आतमा सफल होय हमरी ॥
आरती पंच परमेष्ठी की, आरती जय जिनवाणी की .....
सार निज आतम अनुभव का, सार जयकुंवर सो नरभव का ॥
यही परतीत धरुँ शुभरीत, चरण गुरुदेव नमामी की .....

२. आरती श्री गुरुदेव की

आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी, देव तुम्हारी श्री गुरुदेव तुम्हारी ॥ टेक ॥
तारण तरण विरद के धारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
जन्म नगर पुष्पावती प्यारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
सेमरखेड़ी में दीक्षा धारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
निसई साधु समाधि तुम्हारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
वेत्रवती सरिता के पारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
धन्य धन्य तुम अतिशय धारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
चौदह ग्रन्थ रचे सुखकारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
भविजन गण के तुम हितकारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
तुम गुरुदेव भवोदधि तारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
जय जय परम धर्म दातारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....
विनय करैं श्रावक पद धारी, आरती श्री गुरुदेव तुम्हारी.....

३. आरती ॐ जय आतम देवा

ॐ जय आतम देवा, प्रभु शुद्धातम देवा ॥
तुम्हरे मनन करे से निशदिन, मिटते दुःख छेवा ॥ टेक ॥
अगम अगोचर परम ब्रह्म तुम, शिवपुर के वासी ॥
शुद्ध बुद्ध हो नित्य निरंजन, शाश्वत अविनाशी ॥ ॐ जय.....

विष्णु बुद्ध महावीर प्रभु तुम, रत्नत्रय धारी ॥
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, जग के सुखकारी ॥ ॐ जय.....
ज्ञानानंद स्वभावी हो तुम, निर्विकल्प ज्ञाता ॥
तारण तरण जिनेश्वर, परमानंद दाता ॥ ॐ जय.....

४. आरती पंचपरमेष्ठी जी की

इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजै ॥ टेक ॥
पहली आरती श्री जिनराजा, भव दधि पार उतार जिहाजा....इह..... ॥
दूसरी आरती सिद्धनकेरी, सुमिरन करत मिटै भव फेरी.....इह..... ॥
तीसरी आरती सूर मुनिंदा, जनम मरन दुःख दूर करिंदा.....इह..... ॥
चौथी आरती श्री उवझाया, दर्शन देखत पाप पलाया.....इह..... ॥
पाँचवीं आरती साधु तिहारी, कुमति विनाशन शिव अधिकारी.....इह..... ॥
छट्टी ग्यारह प्रतिमाधारी, श्रावक वंदों आनन्दकारी.....इह.... ॥
सातवीं आरती श्री जिनवानी, 'द्यानत' सुरग मुकति सुखदानी...इह..... ॥
इह विधि मंगल आरती कीजै, पंच परम पद भज सुख लीजै...इह..... ॥

५. श्री मंगला आरती

ए ऐसो मंगल, ए ऐसो मंगल जो नित होय सदा नित होय ॥
आज देव जू को मंगल है ॥
मोरे स्वामी ध्रुव पद ध्याइये । आज देव जू को मंगल है ॥
ए ध्रुव अबल अहो ध्रुव अबलबली निर्वान ॥
मोहे प्यारो लागे स्वामी हो, आज देव जू को मंगल है ॥
ए जहाँ लेत अहो जहाँ लेत जिनेश्वर नाम ॥
मोहे प्यारो लागे स्वामी हो । आज देव जू को मंगल है ॥
ए ऐसे गुरु पर अहो ऐसे गुरु पर छत्र तनाव ॥
आज देव जू को मंगल है ॥
ए ऐसे गुरु पर अहो ऐसे गुरु पर चँवर ढुराव ॥
आज देव जू को मंगल है ॥
ए सब ''समय'' रही लौ लाय ॥
आज देव जू को मंगल है ॥
ए ऐसो समय अहो ऐसो समय न बारम्बार ॥
आज देव जू को मंगल है ॥
ए स्वामी देओ अहो स्वामी देओ मुकति परसाद ॥
आज देव जू को मंगल है ॥

जिनवाणी भक्ति स्तुति

१. आत्म वन्दना

आतम ही है देव निरंजन, आतम ही सद्गुरु भाई ।
आतम शास्त्र, धर्म आतम ही, तीर्थ आत्म ही सुखदाई ।।
आत्म मनन ही है रत्नत्रय, पूरित अवगाहन सुखधाम ।
ऐसे देव, शास्त्र सद्गुरुवर, धर्म तीर्थ को सतत् प्रणाम ।।

२. सवैया

मिथ्यातम नाशवे को ज्ञान के प्रकाशवे को, आपा पर भासवे को भानु सी बखानी है ।
छहों द्रव्य जानवे को बंध विधि हानवे को, स्व पर पिछानवे को परम प्रमानी है ।।
अनुभव बताएवे को जीव के जताएवे को, काहू न सतायवे को भव्य उर आनी है ।
जहाँ तहाँ तारवे को पार के उतारवे को, सुख विस्तारवे को यही जिनवाणी है ।।

३. शारदा स्तवन

वीर हिमाचल तैं निकसी, गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली, जग की जड़ता तप दूर करी है ।।
ज्ञान पयोनिधि मांहि रली, बहु भंग तरंगनिसों उछरी है ।
ता शुचि शारद गंगनदी प्रति, मैं अंजुलिकर शीश धरी है ।।
या जगमंदिर में अनिवार, अज्ञान अंधेर छयो अति भारी ।
श्री जिनकी धुनि दीप शिखा सम, जो नहिं होत प्रकाशन हारी ।।
तो किस भांति पदारथ पाँत, कहाँ लहते रहते अविचारी ।
या विधि संत कहैं धनि है, धनि हैं, जिन बैन बड़े उपकारी ।।

४. जिनवाणी वंदना

(लेखक – ब्र. बसन्त)

श्री जिनवाणी जिनवर वाणी, जग जीवों को सुखदानी ।
मोह विनाशक तत्व प्रकाशक, भविकजनों के मन आनी ।।
पूर्ण ज्ञान के महा सिंधु से, रत्नत्रय के रत्न मिले ।
ज्ञान भानु का उदय हुआ है, भव्यों के हिय कमल खिले ।।
मोह मान अज्ञान तिमिर को, ज्ञान किरण से दूर किया ।
सुनय जगाती कुनय भगाती, स्याद्वाद का मार्ग दिया ।।
वस्तु स्वरूप यथार्थ बताया, बतलाया निज आतमराम ।
धन्य धन्य जिनवाणी माता, शत् शत् वंदन सतत् प्रणाम् ।।

५. जिनवाणी स्तुति

तर्ज – माता तू दया करके..... (लेखक – ब्र. बसन्त)

हे जिनवाणी माता, तुम जग कल्याणी हो ।
सद्ज्ञान प्रदान करो, तुम शिव सुखदानी हो ।।

मिथ्यात्व मोह तम का, चहुँ ओर अंधेरा है ।
माँ तुम बिन इस जग में, कोई नहीं मेरा है ।।
भव पार करो नैया, तुम जिनवर वाणी हो....हे....
चहुँगति के दुःख भोगे, पल भर न सुख पाया ।
अति पुण्य उदय से माँ, तव चरणों में आया ।।
सुखमय कर दो मुझको, सुखमय हर प्राणी हो....हे....
आतम शुद्धातम है, तुमने ही बताया है ।
रत्नत्रय की महिमा सुन, मन हरषाया है ।।
मैं करुँ सदा वंदन, तुम सब गुणखानी हो....हे....

६. जिनवाणी मोक्ष नसैनी है

जिनवाणी मोक्ष नसैनी है, जिनवाणी ।।

यह भवदधि से पार उतारन, पर भव को सुखदानी है ।
मिथ्यातिन के मन ही न भावे, भविजन के मन आनी है ।।
धर्म कुधर्म की समझ पड़ी जब, जुदी जुदी कर मानी है ।
वाजूराय भजो जिनवाणी, यह दुःखहरता सुखदानी है ।।

७. श्री जिनवाणी महिमा

जिनवाणी माता दर्शन की बलिहारियाँ ।। टेक ।।
प्रथम देव अरिहंत मनाऊं , गणधर जी को ध्याऊँ ।।
कुन्द कुन्द आचार्य हमारे, तिनको शीश नवाऊँ ....जिनवाणी....
योनि लाख चौरासी माहीं, घोर महा दुःख पायो ।।
ऐसी महिमा सुनकर माता, शरण तिहारी आयो ....जिनवाणी....
जाने थारो शरणों लीनों, अष्ट कर्म क्षय कीनों ।।
जामन मरण मेटके माता, मोक्ष महाफल दीनों....जिनवाणी....
बार बार मैं विनऊँ माता, मिहर जो मोपे कीजे ।।
पारसदास की अरज यही है, चरण शरण में लीजे ....जिनवाणी....

८. जिनवाणी स्तुति

जिनवाणी को नमन करो, यह वाणी है भगवान की ।
वन्दे तारणम् जय जय वन्दे तारणम् ।।

स्याद्वाद की धारा बहती, अनेकांत की माता है ।
मद मिथ्यात्व कषायें गलतीं, राग द्वेष गल जाता है ।।
पढ़ने से है ज्ञान जागता, पालन से मुक्ति मिलती ।
जड़ चेतन का ज्ञान हो इससे, कर्मों की शक्ति हिलती ।।
इस वाणी का मनन करो, यह वाणी है कल्याण की ।।
वन्दे तारणम् जय जय वन्दे तारणम्.....

इसके पूत सपूत अनेकों, कुन्द कुन्द गुरु तारण हैं ।
खुद भी तरे अनेकों तारे, तरने वालों के कारण हैं ।।
महावीर की वाणी है, गुरु गौतम ने इसको धारी ।
सत्य धर्म का पाठ पढ़ाती, भव्यों की है हितकारी ।।
सब मिल करके नमन करो, यह वाणी केवलज्ञान की ।।
वन्दे तारणम् जय जय वन्दे तारणम्.....

९. जय करुणामय जिनवाणी

जय करुणामय जिनवाणी ! जय जय माँ ! मंगलपाणी ।।

स्याद्वाद नय के प्रांगण में, बहे तुम्हारी धारा ।
परम अहिंसा मार्ग तुम्हारा, निर्मल प्यारा प्यारा ।।
माँ तुम इस युग की वाणी, सब गुणखानी.....जय.....

अशरण शरणा प्रणत पालिका, माता नाम तुम्हारा ।
कोटि कोटि पतितों के दल को, तुमने पार उतारा ।।
क्या ज्ञानी क्या अज्ञानी, तिर्यग् प्राणी.....जय.....

मोह मान मिथ्यात्व मेरु को, तुमने भस्म बनाया ।
जिसने तुम्हें नयन भर देखा, जीवन का फल पाया ।।
तुम मुक्ति नगर की रानी, शिवा भवानी.....जय.....

कुन्द कुन्द योगीन्दु देव से, तुमने सुत उपजाये ।
तारण स्वामी उमा स्वामी से, तुमने सूर्य जगाये ।।
माँ ! कौन तुम्हारा शानी, तुम लाशानी.....जय.....

यह भव पारावार कठिन है, इसका दूर किनारा ।
इसके तरने को समर्थ है, आत्म जहाज हमारा ।।
यह माँ की सुन्दर वाणी ! शिव सुखदानी.....जय.....

माता ! ये पद पद्म तुम्हारे, हमसे कभी न छूटें ।
छूटें ही तो तब जब 'चंचल' जन्म मरण से छूटें ।।
माँ ! तुम चन्दन हम पानी, हृदय समानी.....जय.....

१०. वन्दना के स्वर

वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।
भावना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें भव भय हरण ।।
(तुम) वीतरागी धर्म मंदिर के हो उज्ज्वलतम शिखर ।
शांति समता और अहिंसा, धर्म की वाणी प्रखर ।।
दिग्भ्रांत मानवता के, पथदर्शक तुम्हीं अशरण शरण ।
वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।।
तुमने दिखाया, आत्मदर्शन का सही गन्तव्य है ।
चल पड़ा पहुँचा वही, जो चल रहा वो भव्य है ।।
आत्मदर्शन के सुपावन, शांतिदायी निर्झरण ।
वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।।
तुमने बताया रास्ता, इस जगत को सद्धर्म का ।
तुमने दिया इक ज्ञान को, सद्पुंज जीवन मर्म का ।।
तुमने हटाये धर्म से, आडम्बरों के आवरण ।
वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।।
तुम जो गाये गीत, वे चौदह ही ग्रंथों में भरे ।
जो कर सके अवगाह इनमें, आत्मा का सुख मिले ।
हर सूत्र 'वात्सल्य' दे रहे, संदेश आतम जागरण ।
वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।।
हे क्रांतदर्शी आत्मपर्शी, धर्म के दैदीप्यमान ।
प्रज्ञाश्रमण हे क्रांतिकारी, समन्वयवादी महान ।।
वीतरागी धर्म के हे, युगप्रवर्तक आभरण ।
वन्दना के स्वर समर्पित हैं, तुम्हें तारण तरण ।।

मनुष्य जन्म की दुर्लभता

मनुष्य सब जन्मों का अंतिम जन्म है। इस जन्म में संसार के जन्म मरण रूप अनन्त दुःखों से मुक्त होने के लिए मौका मिला है। विवेक यही है कि दुर्लभता से प्राप्त इस अवसर को हाथ से नहीं गवांना चाहिये।

प्रभाती

(१)

मोहनींद से जग जा रे चेतन, प्रभु सुमरण की बेरा रे ।
प्रभु सुमरण की बेरा रे चेतन, आत्म मनन की बेरा रे ॥
नरक निगोद के दुःख ही भुगतत, बीतो काल घनेरा रे....॥
एक श्वास में अठदस बारा, जन्मा मरा बहुतेरा रे....॥
पशुगति के बहु दुःख भी भुगते, रोता फिरा घनेरा रे....॥
कबहुं न मौका मिलियो ऐसो, देवगति भी देखा रे....॥
अब जो मौका ऐसो मिलो है, करले तू सुलझेरा रे....॥
अब के चूके दुःख बहु पावे, कोई नहीं है तेरा रे....॥
मानुष भव को पाया रे, 'मोही' तारण गुरु का चेरा रे....॥
जल्दी उठ के निज हित करले, कहा मान ले मेरा रे....॥

(२)

प्रातः काल नित उठके रे चेतन, आत्म मनन करना चहिए ॥
मैं हूँ कौन कहाँ से आया, मुझको क्या करना चहिए ॥
यह संसार अनादि निधन है, इससे अब तरना चहिए.....
चारों गति में दुःख ही दुःख हैं, कैसे के बचना चहिए ॥
मुश्किल से यह नरगति पाई, भूल रह्यो कछु सुध नहिं है.....
विषय भोग में पागल हो रहो, मोह में पड़ो सुनत नहिं है ॥
प्रभु को सुमरन आत्म मनन कर, सत्संगत करना चहिए ....
कछु नहिं धरो विषय भोगन में, अब तो नहिं फंसना चहिए ॥
अब तो संयम धर ले 'मोही', भव दधि से तरना चहिए....

(३)

जगो जगो अब जगो तुम चेतन, अब चलने की बेरा रे ॥
बहुत समय सोते ही बीत गओ, हो गओ अब तो उजेरा रे....॥
पर में काये भटकत फिर रहो, कोई नहिं है तेरा रे....॥
अलख निरंजन परमब्रह्म है कहा मान ले मेरा रे....॥
ज्ञान ध्यान श्रद्धान के द्वारा, करले तू सुलझेरा रे....॥
मोह राग विषयनि को छोड़ दे, तारण गुरु का चेरा रे....॥
ज्ञानानंद उठो अब जल्दी, हो गओ अब तो सबेरा रे....॥

(४)

अब तो संयम धार ले भैया, वृथा समय काहे खोवत रे ॥
सत्गुरु तोहे कब से जगा रहे, मोहनींद काहे सोवत रे ॥
देखले कोई काम न आवे, अपनी अपनी सोचत रे.....
जैसो करो थो वैसो ही मिल रहो, काहे दुःखी तू होवत रे ॥
जैसा करोगे वैसा भरोगे, पाप बीज काहे बोबत रे.....
संयम धर विषयनि को छोड़ दे, जन्म सफल तब होवत रे ॥
अब मत हिचके कर पुरुषार्थ, समय चूक सब रोवत रे.....
हिम्मत करले महाव्रत धर ले, मोही काहे मोहत रे ॥
तू है अकेला शुद्ध स्वरूपी, तारण गुरु संबोधत रे.....

(५)

जागो भाई भोर हो गया, प्रभु से नेह लगाओ रे ।
अपने आतम परमातम की, पल भर तो सुध लाओ रे ॥
दिन भर तो गोरख धंधे में, तुमने समय व्यतीत किया ॥
अब कुछ आगे की भी बंदे, अपनी राह बनाओ रे....
तुम हो परमब्रह्म परमेश्वर, पर अपने को भूल रहे ॥
होले होले अंतरतम से, कर्म कलंक मिटाओ रे....
उस भव में जो कुछ बोया था, आज कि चंचल काट रहे ॥
अब कुछ करनी ऐसी करलो, उस भव में सुख पाओ रे....

(६)

भोर हुआ अब तो राम, अपने नयन खोलिए ।
बोल रहे विहग बोल, आप भी कुछ बोलिए ॥
बीते कितने बसन्त, रीते पल छिन अनन्त ॥
कितना तुम चले कन्त, आज तक टटोलिये....
मानव का तन महान, कंचन घट के समान ॥
विषयों सा नाशवान, विष न इसमें घोलिये....
आतम के छोड़ गीत, पुद्गल से जोड़ प्रीत ॥
करते कैसी अनीत, मीत जरा तौलिये....
चंचल मन है मतंग, करिये न इसका संग ॥
अपनी ही ले पतंग, अपने में डोलिये....

पुराने भजन

१. आयरन फूलना

ए आयरन, अहो आयरन जिनुत्तं पाइयो ।
आलाप समय सुनाइयो ।।
आलाप जिन सन्मुख भये ।
तं पात्र कमल प्रवेस जिनवर, स्वल्प साह सम्हारिये ।
तं पात्र नन्त विचार जिनवर, स्वल्प साह सम्हारिये ।।
सुइ इन्द्र धर्महि श्रेणि पूरित, सुइ कलन कमल राये ।
तर तार कमल सु नंद नंदित, सह समय मुक्ति पाये ।।
ऐसे ध्रुव तीर्थंकर पाये, पाये पाये हो जिनाये ।
सोइ परमेष्ठी रमण राये,ऐसे केवल जिनाये ।।
मुक्ति के दाता पाये, मुक्ति के रमन पाये ।।
मैं पायो जिनवर आपनो, मैं पायो स्वामी आपनो ।
मैं पायो केवल आपनो, मैं पायो ध्रुव जिन आपनो ।।
समय मिलिये जिनवर अपनो, हरष मिलिये हुलस मिलिये जिनवर अपनो ।।
ऐसे स्वल्प शाह जिन पाये, मिलिये जिनवर आपनो ।।
केवल जिन पाये, गुरु आपनो ।।
बहुर मिलना हो स्वामी, मिलकर तारो जिना ।।
अब जिन जू के बोल मुकति रमना हो सांचे देव तारो जिना.....
ऐसो समय न बारम्बार, प्यारो स्वामिया हो ।। टेक ।।
अब चौ संघ विराजे म्हारा देव, प्यारो स्वामिया हो ।।
ऐसे ऋषि यति मुनि अनगार, प्यारो स्वामिया हो ।।
अब ऐसे गुरु पर चंवर ढुराय, प्यारो स्वामिया हो ।।
अब ऐसे गुरु पर छत्र तनाव, प्यारो स्वामिया हो ।।
अब ऐसो समय सदा नित होय, प्यारो स्वामिया हो ।।
ऐसी गोट चली निर्वाण, प्यारो स्वामिया हो ।।
जासे आवागमन न होय, प्यारो स्वामिया हो ।।
अब गुरु देत मुकति परसाद, प्यारो स्वामिया हो ।।

जैसा अरहन्त भगवान का द्रव्य, गुण, पर्याय है, वैसा मेरा द्रव्य – गुण है। मुझे पर्याय प्रगट नहीं हुई है। मेरे में शक्ति रूप है, भगवान में प्रगट हुई है। इस प्रकार अन्तर में जाकर अनन्त शक्ति से भरपूर अनुपम आत्म तत्त्व की ओर दृष्टि करें, तो चैतन्य तत्त्व प्रगट होता है।

२. आगौनी (नमस्कार)

जय जय परमानन्द परम ज्योति, जय जय चिदानंद जिन आत्मानं ।
जय जय आत्मानं परमात्मानं, जय जय सोऽहं रूप समय शुद्धं ।।
जय समय शुद्धं जय नमस्कृतं, जय नमस्कृतं जय महावीरं ।
विन्दस्थाने नमस्कृतं ।।

३. समवशरण फूलना

मैं तो आयो आयो आयो हो, अपने देव गुरु वन्दवे ।। टेक ।।
आकाश लोक से इन्द्र जो आये, ऐरावत सज लाये हो.....अपने.....
पाताल लोक से फणीन्द्र जो आये, फण पर नृत्य कराये हो.....अपने.....
दशों दिशा से दिक्पाल जो आये, आनन्द उमंग बढ़ाये हो.....अपने.....
मध्य लोक से चक्रवर्ती आये, चँवर सिंहासन लाये हो.....अपने.....
राजगृही से राजा श्रेणिक आये, जय जय शब्द कराये हो.....अपने.....

४. समवशरण महिमा

अहो जहाँ समव, अहो जहाँ समवशरण जिनवर जू की महिमा ।
पार न पावे कोय ।। टेक ।।
अहो जहाँ चार ज्ञान के धरता गणधर, पार न पावे कोय.....
अहो जहाँ पंच ज्ञान को मुकुट विराजे, केवल वन्दना होय.....
अहो जहाँ क्षुधा तृषा जिनको नहिं व्यापे, राग द्वेष नहिं होय.....
अहो जहाँ नन्त चतुष्टय जिन प्रति राजे, तीन रतनमय होय.....
अहो जहाँ सोऽहं शब्द अनक्षर वाणी, सुनत श्रवण सुख होय.....
अहो जहाँ प्रेम प्रीत से भज मन मेरे, आवागमन न होय.....

५. भजन (विलवारी चाल)

भलो भलो रे सहाई गुरु तार, लाल वेदी पर वाणी खिर रही ।।
सो तो काहे जड़त वेदी बनी, और काहे के सोलऊ खंभ....लाल.....
सो तो रतन जड़ित वेदी बनी और मलयागिर सोलऊ खँभ....लाल.....
सो तो काहे के कलशा धारे, और काहे के धुजा फहराय....लाल.....
सो तो सुवरन के कलशा धारे, और धर्म धुजा फहराय....लाल.....
सो तो चन्दन भरो है तलाव री, जहाँ मुनिवर करत स्नान....लाल.....
सो तो अष्ट कर्म मल धोय के, सो तो नियरो है पद निर्वाण....लाल.....
सो तो वीर जिनेन्द्र हैं ऊपजे, राजा श्रेणिक दियो है प्रसाद....लाल.....

६. तारण तरण

तारण तरण जिहाज, हमारे गुरु तारण तरण जिहाज ।।
डूबत हौं भव सागर मांहीं, पार लगा दीजो आज.....
क्रोध मान माया लोभ विवर्जित, करत आपनो काज.....
कामी क्रोधी पतित उबारे, सारे सबके काज.....
माखन की अरजी चित धरियो बांह गहे की लाज.....

७. मगन रहो रे

मगन रहो रे जिया ! ले जिन नाम मगन रहो रे ।। टेक ।।
कोई भयो राजा कोई भयो रंक, कोई भयो जोगीरा भ्रमें चारों खण्ड ।। १ ।।
तन भयो राजा मन भयो रंक, जीव भयो जोगीरा भ्रमे चारों खण्ड ।। २ ।।
समव शरण जहाँ रच्यो है कुबेर, द्वादस कोठा वेदी के फेर ।। ३ ।।
ता थैई ता थैई ता थैई तास, कमल की पंखुड़ी में नाचे देवीदास ।। ४ ।।

८. छांड़ दे अभिमान

छांड़ दे अभिमान जिया रे ! छांड़ दे अभिमान ।। टेक ।।
कहाँ को तू है कौन है तेरो, ये सब ही मेहमान....जिया....
तेरे देखत सब ही चले जै हैं, थिर नांहीं जा थान....जिया....
काम क्रोध हृदय से त्यागो, दूर करो अज्ञान....जिया....
त्याग करो जा लोभ माया, मोह मदिरा को पान....जिया....
राजा रंक सबई चल जैं हैं, देखत तेरे नैन....जिया....
कहें देवीदास आस जा पद की, आतम को पहिचान....जिया.....

१. चित चालो रे जिया

चित चालो रे जिया मन लागो रे भैया, गढ़ गिरनारी मन लागो रे भैया ।। टेक ।।
गढ़ गिरनारी के ऊंचे पहाड़, जहाँ विराजे श्री नेम जी कुमार ।।
मड़वा माड़न चले जादो राय, पशु जीवन मिल करी है पुकार ।।
मौर जो पटको मड़वा मांहिं, कंकण तोर चढ़े गिरनार ।।
राजुल सखियाँ लई हैं बुलाय, चलो सखी नेम जी को लाऐं मनाय ।।
मैं बारे की बालक अजान, कबहूं न लीना चन्दा प्रभु जी का नाम ।।
ठाड़ी राजुल दोइ कर जोड़, कर्म लिखंती मिटै नहीं कोई ।।
कहत विनोदी सुनो यदुराय, राज छोड़ वैराग्य सिधाय ।।

भजन – १०

पढ़ कर चौदह ग्रन्थ गुरु के रंग में हो जा मतवाला ।
फिर हो जा अलमस्त गुरु के रंग में हो जा मतवाला ।।
मस्त हुए दीवान गढ़ाशाह देश निकाला कर डाला ।
मस्त हुए गुरु तारण बाबा जहर का प्याला पी डाला ।।
मस्त हुए उस्ताद लोकमन मक्का मदीना तज डाला ।
मस्त हुए ब्रह्मचारी शीतल सब ग्रन्थों को मथ डाला ।।
वीर अनंते मोक्ष जायेंगे यही धर्म सबसे आला ।
पढ़ कर चौदह ग्रन्थ गुरु के रंग में हो जा मतवाला ।।

भजन – ११

अब नेम जी मिलत नइयां वन में, मिलत नइयां वन में ।
ढूंढ़न कहाँ जाऊँ नेम जी मिलत नइयां वन में ।
ढूंढ़त ढूंढ़त हम फिर आये,
ए अब कहूँ न मिले महाराज ।। नेम जी मिलत नइयां ।।
इत जूनागढ़ उत है द्वारका,
ए अब बीच में गढ़ गिरनार ।। नेम जी मिलत नइयां ।।
ढूंढ़त ढूंढ़त हमहूँ को मिल गये,
ए वे तो ठाढ़े हैं ध्यान लगाय ।। नेम जी मिलत नइयां ।।
ठांड़ी राजुल दोइ कर जोड़े,
ए अब दीक्षा देओ महाराज, नेम जी मिलत नइयां ।।

भजन – १२

लद जैहे बंजारो, एक दिन लद जैहे बंजारो ।।
को है जाको लाद लदैया, को है हांकन हारो.....
मन है जाको लाद लदैया, तन है हांकन हारो.....
झूठ कपट कर माया जोड़ी, कर कर के हित गाढ़ो.....
तू जानत है संग चलेगी, पैसा नहीं है तिहारो.....
देखत को परिवार घनेरो, साथी न संगी तिहारो.....
जा काया को करत भरोसो, वो ही करत किनारो.....
कहें जिनदास आस जा पद की, छोड़ो जग को सहारो.....

भजन – १३

खबर नहीं जा जग में पल की।
सुकरत करना होय सो कर लो, को जाने कल की॥
तारामंडल रवी चन्द्रमा सब ही चलाचल की।
विनस जात जाहे बार न लागे बीजुलिया चमकी...
आतम बस्ती है दिन दश की काया मन्दिर की।
स्वांस उस्वांस सुमरले चेतन आयु घटे तन की...
झूठ कपट कर माया जोड़ी कर बातें छल की।
पाप की मोंठ धरी सिर ऊपर क्यों होवे हलकी...
या देही तेरी भस्म होयगी क्यों चन्दन चरची।
सत्गुरु की तूने सीख न मानी विनती आत्मबल की...

भजन – १४

समझ समझ मन बावरे आतम देव हमारा हो॥
आतम साहब एक है, दुविधा कछु नाहीं हो॥ समझ...
झिलमिल झिलमिल होत है, चिंतामन रूप हो॥ समझ...
इंगला पिंगला सुष्मना इनकी सुरत जगा ले हो॥ समझ...
तारण गुरु उपदेश को अब दास खुशाला हो॥ समझ...

भजन – १५

मैं तो आयो आयो आयो हो, अपने देव जू को वंदवे॥
आकाश लोक से इन्द्र जो आये।
ऐरावत सज लाये हो, सज लाये हो॥ अपने देव जू को....
पाताल लोक से फणिन्द्र जु आये।
फण पर नृत्य कराये हो, कराये हो॥ अपने देव जू को....
मध्य लोक से चक्रवर्ती आये।
चँवर सिंहासन लाये हो, लाये हो॥ अपने देव जू को....
दसहुँ दिशा से दिग्पाल जो आये।
आनन्द उमंग बढ़ाये हो, बढ़ाये हो॥ अपने देव जू को....
राजगृही से राजा श्रेणिक आये।
मनवांछित फल पाये हो, पाये हो॥ अपने देव जू को....

भजन – १६

तारण तरण जिहाज हमारे गुरू, तारण तरण जिहाज ॥
डूबत हों भव सागर माहीं, पार लगा दीजो आज ॥ हमारे...
क्रोध मान माया लोभ विवर्जित, करत आपनो काज ॥ हमारे...
कामी क्रोधी पतित उबारे, सारे सबके काज ॥ हमारे...
माखन की अरजी चित धरिये, बांह गहे की लाज ॥ हमारे...

फूलना

अठ दह सागर कोड़ाकोड़ी चौथे काल प्रवेश भये ॥
प्रथम तीर्थंकर आद जिनेश्वर, धर्म हि धर्म प्रकाश भये ।
बीस लाख कुंवरा वय भुगते,त्रेसठ लाख राजाब लियो ॥
एक लाख वैराग्य सिधारे, तज संसार विराग लियो ।
राज पाठ सब भरतहिं दीनों, संजम तप कैलाश गये ॥
वट के वृक्ष जहाँ आसन दीन्हों, देवन आय महोछौ ठये ।
जब मोरे जिनवर वन को चाले, षट् महिना के जोग लिये ॥
सहस्र वर्ष को मौन जो रहियो, आहारे परिभाव किये ।
जब मोरे जिनवर वन से आये, निरख निरख पग धरत भये ॥
कोई गज तुरिय ले आये, कोई अम्बर पाठ धरे ।
कोई हीरा रतन पदारथ, कोई गज मोतिन थार भरे ॥
कोई कुमकुम चन्दन गालें, कोई ने माथे तिलक दये ।
कोई ने कलस वन्दना कीनी, कोई ने केशर तिलक दये ॥
भाव वन्दना काहू न कीनी, लौट जिनेश्वर वन को गये ।
आहार विधि काहू न जानी, जिनवर ने न अहार लये ॥
राजा श्रेयांस को सपनों दीनों, सोलह सपने प्रगट भये ।
सात सौ कोल्हू रस जो पिरायो, अहूट अंजुलि भरन गये ॥
आहार दान मुनिवर को दीनों, हीरा मोती बरस गये ।
पुण्य प्रभाव राजा को कहिये, होंगे मंगलाचार नये ॥

चेतावनी
बिना त्याग वैराग्य के, होय न निज का ज्ञान ।
अटके त्याग विराग में, तो भूले निज भान ॥

नये भजन

भजन – १

चेतो चेतन निज में आओ, अंतरात्मा बुला रही है ।।
जग में अपना कोई नहीं है, तू तो ज्ञानानन्दमयी है ।।
एक बार अपने में आ जा, अपनी खबर क्यों भुला दई है.....
तन धन जन यह कुछ नहीं तेरे, मोह में पड़कर कहता है मेरे ।।
जिनवाणी को उर में धर ले, समता में तुझे सुला रही है.....
निश्चय से तू सिद्ध प्रभु सम, कर्मोदय से धारे है तन ।।
स्याद्वाद के इस झूले में, माँ जिनवाणी झुला रही है.....
मोह राग और द्वेष को छोड़ो, निज स्वभाव से नाता जोड़ो ।।
ब्रह्मानन्द जल्दी तुम चेतो, मृत्यु पंखा डुला रही है.....

भजन – २

भगवान हो भगवान हो, तुम आत्मा भगवान हो ।
यह घर तुम्हारा है नहीं, यहाँ चार दिन मेहमान हो ।।
चक्कर लगाते फिर रहे, इस तन में तुम बंदी बने ।
अपने ही अज्ञान से, राग द्वेष में हो सने ।।
अपना नहीं है होश, बस इससे ही तुम हैरान हो.....
चेत जाओ जाग जाओ, धर्म की श्रद्धा करो ।
देख लो निज सत्ता शक्ति, मत मोह में अंधा बनो ।।
अनन्त चतुष्टमयधारी हो, इसका तुम्हें बहुमान हो.....
रत्नत्रय स्वरूप तुम्हारा, सुख शांति आनन्द धाम हो ।
पर में मरे तुम जा रहे, इससे ही तुम बदनाम हो ।।
करना धरना कुछ नहीं, अपना ही बस स्वाभिमान हो.....
माया तुमको पेरती, राग द्वेष से हैरान हो ।
अपना आतम बल नहीं, इससे ही तुम परेशान हो ।।
जाग्रत करो पुरुषार्थ अपना, तुम तो सिद्ध समान हो.....
ज्ञानानन्द स्वभावी हो, ब्रह्मानंद के धाम हो ।
निजानन्द में लीन रहो, सहजानन्द सुखधाम हो ।।
स्वरूपानन्द की करो साधना, इससे ही निर्वाण हो.....

भजन – ३

नरभव मिला है विचार करो रे, आतम का अपनी उद्धार करो रे ॥
काल अनादि निगोद गंवाया, पशु गति में कोई योग न पाया ॥
नरकों के दुःखों का ध्यान धरो रे.....आतम.....
मुश्किल से यह मनुष्य गति पाई, देवगति में भी सुख नाहीं ॥
वृथा न इसको बरबाद करो रे.....आतम.....
देख लो अपना क्या है जग में, भटक रहे हो, क्यों भव वन में ॥
मुक्ति का मार्ग स्वीकार करो रे.....आतम.....
मोह राग में मरे जा रहे धन शरीर के चक्कर खा रहे ॥
अपना भी कुछ तो श्रद्धान करो रे.....आतम.....
जीव अजीव का भेदज्ञान कर लो, संयम तप त्याग ब्रह्मचर्य धर लो ॥
ज्ञानानंद अपनी संभार करो रे.....आतम.....

भजन – ४

मोक्ष मार्ग बतलाया गुरु ने, शुद्धातम का ध्यान ॥
जय हो चौदह ग्रंथ महान ॥
मालारोहण अनुभव करना, पंडित पूजा ज्ञान साधना ॥
खिल जाये फिर कमलबत्तीसी करके भेद विज्ञान...जय हो...
शुद्ध श्रावकाचार पालना, ज्ञान समुच्चय सार जानना ॥
द्वादशांग का सार समझकर, चढ़ना है गुण स्थान...जय हो...
श्री उपदेश शुद्ध सार जी, सार त्रिभंगी में सम्हार की ॥
चौबीसठाणा में समझाया, छोड़ो सब अज्ञान...जय हो...
ममलपाहुड़ के छंद फूलना, गुरुवर के अनुभव के झूलना ॥
मोक्ष पुरी ले जाने को, आयेगा तरण विमान...जय हो...
खातिका विशेष चतुर्गति धारा, जीव फिर रहा मारा मारा ॥
जगा रही गुरु वाणी अब तो, जागो हे भगवान...जय हो...
सिद्ध स्वभाव स्वभाव शून्य है, वहाँ न कोई पाप पुण्य है ॥
छद्मस्थ वाणी आज बनी, तारण समाज का प्राण...जय हो...
ग्रंथ नाममाला मन भाई, चौदह ग्रंथ परम सुखदाई ॥
ब्रह्मानंद में डूब डूब कर, करते सब गुणगान...जय हो...

भजन – ५

सोचो समझो रे सयाने मेरे वीर, साथ में का जाने ।।

धन दौलत सब पड़ी रहेगी, यह शरीर जल जावे। स्त्री पुत्र और कुटुम्ब कबीला, कोई काम न आवे.....
हाय हाय में मरे जा रहे, इक पल चैन नहीं है। ऐसो करने ऐसो होने, जइ की फिकर लगी है.....
लोभ के कारण पाप कमा रहे, मोह राग में मर रहे। हिंसा झूठ कुशील परिग्रह, चोरी नित तुम कर रहे.....
कहाँ जायेंगे क्या होवेगा, अपनी खबर नहीं है। चेतो भैया अब भी चेतो, सद्गुरुओं ने कही.....
सत्संगत भगवान भजन कर, पाप परिग्रह छोड़ो। साधु बनकर करो साधना, मोह राग को तोड़ो.....

भजन – ६

तन पिंजरे से चेतन निकल जायेगा ।
फिर कौन किस काम क्या आयेगा ।।

इक दिन जाना है निश्चित यहाँ रहना नहीं, छोड़ धन धाम परिवार गहना यहीं ।।
करके पापों को दुर्गति में खुद जायेगा.....
साथ जाना नहीं काम आना नहीं, देखते जानते फिर भी माना नहीं ।।
मोह माया में कब तक यूं भरमायेगा.....
चेतो जागो निज को पहिचान लो, सीख सद्गुरु की देखो अभी मान लो ।।
कर ज्ञान स्व पर का तो तर जायेगा.....
मिला मानुष जनम इसमें करले धरम, त्याग तप दान संयम और अच्छे करम ।।
जल्दी चेतो ज्ञानानंद फिर पछतायेगा.....

भजन – ७

जिसको तू खोज रहा बंदे, वह मालिक तेरे अंदर है ।
बाहर के मंदिर कृत्रिम हैं, सच्चा मंदिर तो अंदर है ।।

ले पत्र पुष्प जल दीप धूप, तू किसकी पूजा करता है ।।
सचमुच जिसकी पूजा करना, वह दिव्य तेज तो अंदर है.....
धोने को अपना पाप मैल, तू तीर्थों बीच भटकता है ।।
जिसमें सब पाप मैल धुलते, वह विमल तीर्थ तो अंदर है.....
ग्रंथों ग्रंथों का गौरव तू, चिल्ला चिल्ला कर गाता है ।।
जिसमें सब ग्रंथ भेद होता, वह अलख पंथ तो अंदर है.....
बिना लक्ष्य की दौड़ धूप, कुछ भी परिणाम न लायेगी ।।
वह बाहर कैसे मिल सकती, जो चीज आपके अंदर है.....
बाहर की झंझट छोड़ छाड़कर, जोड़ स्वयं को अपने से ।।
जिसको वंदन है बार बार, वह चिदानंद तो अंदर है.....

भजन – ८

ज्ञानी की ज्ञान गुफा में, निज भगवान बैठे हैं ।
भगवान बैठे हैं, स्वयं भगवान बैठे हैं ।।
ज्ञानी ने अपने ज्ञान में निज आत्मा देखा ।
पर से ही भिन्न स्वयं का शुद्धात्मा देखा ।।
ज्ञानी की शांत दशा में, ज्ञायक राम बैठे हैं.....
ज्ञानी को अपने ज्ञान का बहुमान है आया ।
निज स्वानुभूति में निजातम राम को पाया ।।
ज्ञानी के अंतर ध्यान में, परमात्म बैठे हैं.....
ज्ञानी ने अपने ध्यान में ध्रुव सत्ता को पाया ।
अंतर से लगन लगी है सिद्धात्मा पाया ।।
ज्ञानी की गुप्त गुफा में, आतम राम बैठे हैं.....
सबसे ही सुंदर ज्ञान ही सुन्दरता को पाता ।
शुद्धात्मा की महिमा को निज ध्यान में ध्याता ।।
ज्ञानी के केवलज्ञान मे सर्वज्ञ बैठे हैं.....
सिद्धों की जाति का उसे निज अनुभव होता है ।
अपने ही शुद्ध स्वभाव का श्रद्धान होता है ।।
ज्ञानी के ॐ नमः सिद्धं में सिद्ध बैठे हैं.....

भजन – ९

कोई राज महल में रोये, कोई पर्ण कुटी में सोये ।
अलग अलग हैं जन्म के अंगना, मरण का मरघट एक है ।।
कोई हल्की कोई भारी, कोई गहरी कोई उथली ।
सब माटी की बनी गगरिया, न कोई असली न कोई नकली ।।
अलग अलग घट भरे गगरिया, पनघट सबका एक है.....
कहीं फिरोजी कहीं है पीले, लाल गुलाबी काले नीले ।
भाँति भाँति की तस्वीरों में, रंग भरे हैं सूखे गीले ।।
चेहरे सबके अलग अलग हैं, मोह का घूँघट एक है.....
खेल रहे सब आँख मिचौली, सबकी सूरत देख सलोनी ।
सोच समझ कर दांव लगाते, टाले नहीं टलती जो होनी ।।
अलग अलग सब खेल खिलाड़ी, मिट्टी तो सबकी एक है.....
सब जायेंगे आगे पीछे, हाथ पसारे आँखें मीचे ।
स्वर्ग नरक सब सांची बातें, पुण्य से ऊँचे पाप से नीचे ।।
आये तो सौ सौ अंगड़ाई, मौत की करवट एक है.....

भजन – १०

रंग सु तो रंग मिल जाय, गुणारी जोड़ी नाहिं मिले ॥
कागा कोयल एक ही रंगरा, बैठे एक ही डाल ॥
कागो तो कड़वो बोले है, कोयल रस बरसाय.....
हंसो बगुलो एक सरीखो, नहीं पड़े पहचान ॥
हंसो तो मोती चुगे, बगुलो तो मछली खाय.....
हल्दी एक ही रंग री, एक ही हाट बिकाय ॥
हल्दी केसर तो सागां रसीजे, केसर तिलक लगाय.....
संध्या भोर एक ही रंग री, एक सूरज री छांव ॥
संध्या तो नींदड़ली बुलावे, भोर तो जगत जगाय.....
डोली अर्थी एक ही बांस री, एक ही कांधे जाय ॥
डोली तो दुल्हन घर ल्यावे, अर्थी तो मरघट जाय.....
त्यागी भोगी एक ही घर में, एक ही खाणों खायं ॥
त्यागी तो करमाने काटे, भोगी तो करम बंधाय.....
रावण विभीषण एक ही कुणवो, एक ही मात पिता ॥
विभीषण तो राम भगत हो, रावण कुल को नसाय.....
मेंहदी भांग एक ही रंग री, एक ही हाथ पिसाय ॥
मेंहदी तो हाथ रचावे, भांग तो जगत नचाय.....
संत सद्गुरु कह गया सगला, करो गुणा री पहिचान ॥
रंग तो एक दिन फीको पड़सी, गुण ही तो संग में जाय.....

भजन – ११

जय जयकार मची है रे, गुरु तारण के द्वारे ।
तारण के द्वारे गुरु तारण के द्वारे....॥
आतम की महिमा जानी है, जड़ से न्यारी पहिचानी है ॥
मुक्ति से रास रची है रे, गुरु.....
अंतर में अब हुआ जागरण, सबके हृदय बसे जिन तारण ॥
आतम ही शेष बची है रे, गुरु.....
जय जयकार मची है घर घर, धर्म प्रभावना का है अवसर ॥
संयम की पालकी सजी है रे, गुरु.....
ब्रह्मानंद करो तैयारी, छोड़ो ये सब दुनियांदारी ॥
मंगल बधाई बजी है रे, गुरु.....

भजन – १२

चेतन के चैतन्य परिणति, जब अपने में रहती है ।
तब अंतर में ज्ञान की गंगा, स्वानुभूति मय बहती है ।।

राग भिन्न है कर्म भिन्न है, न्यारा है सब जड़ संसार ।
ज्ञेय भिन्न है ज्ञान भिन्न है, यह जिनवरवाणी का सार ।।
आत्म तत्त्व की कथा निराली, वह अनंत गुण का भंडार ।
अनुभूति उसकी कुंजी है, जो खोले चारों ही द्वार ।।
अनंत चतुष्टयमय की बगिया फिर, अपने आप महकती है.....तब.....
अविरत सम्यक्दृष्टि श्रावक, निज पर को जब लखता है ।
पलक झपकती है पल भर को, वह अमृत रस चखता है ।।
देश व्रती श्रावक भी यद्यपि, राग भूमिका वाला है ।
फिर भी ज्ञायक की मस्ती में, रहने को मतवाला है ।।
छटे सातवें गुणस्थान में, अद्भुत मस्ती रहती है.....तब.....
उपशम या क्षायिक श्रेणी पर, जो आरोहण करते है ।
वीतराग निर्ग्रन्थ साधु वे, मुक्ति श्री को वरते हैं ।।
केवल ज्ञानी और सिद्ध प्रभु, स्वानुभूति रत रहते हैं ।
सच्चे ज्ञानी वही जगत में, जो कुछ भी न कहते हैं ।।
निर्विकल्प होकर परिणति जब, ध्रुव स्वभाव को गहती है.....तब.....
ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता अभेद है, वहां भेद का काम नहीं ।
जब तक भेद पड़ा है तब तक, अपने में विश्राम नहीं ।।
मैं आतम हूँ यह विकल्प भी, स्वानुभूति में बाधा है ।
सब विकल्प तज कर ज्ञानी ने, निज अनुभव को साधा है ।।
इसी साधना से कर्मों की, सब दीवारें ढहती हैं.....तब.....
निज पर का श्रद्धान स्वानुभव, ज्ञान जगाओ निज पर का ।
रागादि तज स्वरूपस्थ हो, यही मार्ग है निज घर का ।।
पर का सब बहुमान मिटाओ, तुम तो हो खुद ही भगवान ।
ब्रह्मानंद स्वरूप तुम्हारा, अशरीरी है सिद्ध समान ।।
शुद्ध परिणति ध्यान अग्नि है, जो विकार को ढहती है.....तब.....

स्वाश्रय से मुक्ति और पराश्रय से बंध

मैं एक अखण्ड ज्ञायकमूर्ति हूँ, विकल्प का एक भी अंश मेरा नहीं है – ऐसा स्वाश्रयभाव रहे वह मुक्ति का कारण है, और विकल्प का एक अंश भी मुझे आश्रयरूप है – ऐसा पराश्रयभाव रहे वह बन्ध का कारण है ।

चैत्यालय, हम और हमारा कर्तव्य.....

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी किस प्रकार जाना चाहिये ?

उत्तर – घर में स्नान करके धुले हुए शुद्ध वस्त्र पहिनकर मंद कषाय पूर्वक हृदय में निर्मल परिणाम रखकर सच्चे देव गुरु धर्म शास्त्र के गुणानुराग के शुभ भाव सहित श्री चैत्यालय जी जाना चाहिये।

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी में किस प्रकार प्रवेश करना चाहिये ?

उत्तर – श्री चैत्यालय जी में अत्यंत भक्ति के भाव पूर्वक, धर्म की अत्यंत श्रद्धा और देव गुरु धर्म के प्रति समर्पण भाव पूर्वक प्रवेश करना चाहिये।

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी में प्रवेश करने के पूर्व क्या सावधानी रखना चाहिये ?

उत्तर – १. श्री चैत्यालय जी मे चमड़े के बटुआ, चमड़े के बेल्ट या घड़ी का पट्टा, फर के टोप आदि अपवित्र वस्तुएँ नहीं ले जाना चाहिये।

२. मोजा पहने हुए अथवा बिना पैर धोए श्री चैत्यालय जी में प्रवेश नहीं करना चाहिये।

३. जूठे मुँह पान, जर्दा, सुपाड़ी, गुटका, लोंग, इलायची, पान पराग आदि कोई भी वस्तु खाकर श्री चैत्यालय जी में प्रवेश नहीं करना चाहिये। घर से कुछ खाये पिये बिना ही श्री चैत्यालय जी जाना चाहिये।

४. श्री चैत्यालय जी में प्रवेश करने के पूर्व छने जल से पैर धोना चाहिये।

(**सारांश–** श्री चैत्यालय जी धर्म आराधना का केन्द्र है, उसकी मर्यादा पवित्रता बनाये रखकर शुद्ध और पवित्र अवस्था में ही श्री चैत्यालय जी जाना चाहिये।)

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी में प्रवेश करते समय घंटा क्यों बजाया जाता है ?

उत्तर – घंटा बजाने से एक गम्भीर ध्वनि होती है, घंटा में से जो गूँज उत्पन्न होती है, इससे हमारे मन में जो भी संकल्प–विकल्प होते हैं वे समाप्त हो जाते हैं । भावों मे निर्मलता आती है तथा धर्म का ऐसा नाद हमारे अंतर मे गूँजता रहे इस पवित्र अभिप्राय से घंटा बजाया जाता है।

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी प्रवेश करते समय क्या बोलना चाहिये?

उत्तर – श्री चैत्यालय जी में प्रवेश करने के पश्चात् वेदी की ओर जाते समय निःसही, निःसही, निःसही ऐसा तीन बार बोलना चाहिये।

प्रश्न – निःसही, निःसही तीन बार क्यों बोलना चाहिये ?

उत्तर – निःसही बोलने का अभिप्राय है कि मुझे अपना आत्म कल्याण करना है, संसार के दुःखों से मुक्त होकर निःश्रेयस अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करना है और दूसरा अभिप्राय यह है कि जब हम किसी विशेष स्थान पर जाते हैं तो पूछकर या कोई संकेत करके प्रवेश करते हैं। इसी प्रकार जब हम चैत्यालय जी में प्रवेश करते हैं तो निःसही बोलकर संकेत करते हैं जिससे वहाँ उपस्थित कोई सूक्ष्म जीवों या व्यंतर आदि देव जो धर्म स्थान में निवास करते हैं उन्हें हमारे निमित्त से कोई बाधा न हो, इसलिये निःसही तीन बार बोलना चाहिये।

प्रश्न – वेदी के समक्ष पहुँचकर क्या करना चाहिये ?

उत्तर – वेदी के समक्ष पहुँचकर दर्शन करना चाहिये।

प्रश्न – दर्शन करते समय क्या बोलना चाहिये और क्या स्मरण करना चाहिये ?

उत्तर – दर्शन करते समय निर्मल भाव सहित स्थिर चित्त पूर्वक खड़े होकर हाथ जोड़कर सबसे पहले णमोकार मंत्र, चत्तारि मंगल पाठ और नीचे लिखा दर्शन पाठ पढ़ना चाहिये – णमोकार मंत्र और चत्तारि मंगल पाठ सभी को याद है। दर्शन पाठ इस प्रकार है –

दर्शन पाठ

दर्शनं चित्स्वरूपस्य, दर्शनं ध्रुव शाश्वतं ।
दर्शनं शुद्ध तत्त्वस्य, मोक्षमार्गस्य साधनम् ॥

अर्थ – (दर्शनं चित्स्वरूपस्य) चैतन्य स्वरुप का दर्शन (दर्शनं ध्रुव शाश्वतं) शाश्वत ध्रुव स्वभाव का दर्शन (दर्शनं शुद्धतत्त्वस्य) शुद्धतत्त्व का दर्शन (मोक्षमार्गस्य साधनम्) मोक्षमार्ग का साधन है।

अरिहंतं सिद्धं नत्वा, भावयामि निरंतरं ।
यथा पदं त्वया लब्धं, तथा च मे भवे प्रभो ॥

अर्थ – (अरिहंतं सिद्धं नत्वा) श्री अरिहंतं सिद्ध भगवान को नमस्कार करके (भावयामि निरंतरं)निरंतर यह भावना भाता हूँ कि (यथा पदं त्वया लब्धं) जैसा वीतरागी जिनेन्द्र पद आपने प्राप्त कर लिया है (तथा च मे भवे प्रभो) हे प्रभो ! वैसा ही वीतरागी जिनेन्द्र पद मुझे प्राप्त हो।

रमते स्वानुभूतौ यः तारणं तरणं गुरुम् ।
आत्मनः दृष्टि संयुक्तं, भक्ति पूर्वं नमाम्यहम् ॥

अर्थ – (यः) जो (स्वानुभूतौ) स्वानुभूति में (रमते) रमण करते हैं (ऐसे) (तारणं तरणं गुरुम) तारण तरण गुरु को (आत्मनः दृष्टि से संयुक्त होकर (भक्ति पूर्वं) भक्ति पूर्वक (नमाम्यहम) मैं नमस्कार करता हूँ।

द्रव्य भावस्य द्विभेदं, श्रुतं जिनवचनमहो ।
मम कल्याणार्थं हृदये, नित्यमेव प्रकाशताम् ॥

अर्थ – द्रव्यश्रुत और मम श्रुत के भेद से दो भेदरूप श्रुतज्ञानमयी जिनवचन मेरे कल्याणार्थ हृदय में नित्य ही प्रकाशमान हों। (द्रव्य भावस्य) द्रव्यश्रुत और भाव श्रुत के भेद से (द्विभेदं) दो भेद रूप (श्रुतं) श्रुत ज्ञानमयी (जिनवचनम्) श्री जिनेन्द्र भगवान के वचन (अहो) अहो ! (ममकल्याणार्थ हृदये) मेरे कल्याणार्थ हृदय में (नित्यम् एव) नित्य ही (प्रकाशताम्) प्रकाशमान हों।

शुद्ध धर्माश्रयं कृत्वा, चेतना लक्षणं अहो ।
नन्दानन्द प्रदातारं, देवं गुरं श्रुतं नमः ॥

अर्थ – (चेतना लक्षणं अहो) ! चैतन्य लक्षणमयी (शुद्ध धर्माश्रयं कृत्वा) शुद्ध धर्म का आश्रय करके (नन्दानन्द प्रदातारं) नन्द, आनन्द, चिदानन्द, सहजानन्द और परमानन्द को प्रदान करने वाले सच्चे देव, गुरु, शास्त्र को नमस्कार (भाव पूर्वक वन्दना) करता हूँ।

प्रश्न – दर्शन करते समय नेत्र बंद क्यों हो जाते हैं ?

उत्तर – तारण पंथी श्रावक जब वेदी के सामने हाथ जोड़कर दर्शन करने के लिये तत्पर होता है, उस समय नेत्र अपने आप बंद हो जाते हैं क्योंकि वह अपने देह देवालय में विराजमान शुद्धात्म देव परमात्म स्वरूप के दर्शन करता है।

प्रश्न – जिनवाणी का दर्शन किस भावना से करना चाहिए ?

उत्तर – हे जिनवाणी माँ ! मेरे हृदय में सच्चे देव, गुरु, धर्म की भक्ति निरंतर बनी रहे। मेरे पाप कर्म शीघ्र ही क्षय हों। मेरे मन में निर्मल भावनायें रहें। मुझे शुद्धात्म स्वरुप की प्राप्ति हो। मैं अरिहंत, सिद्ध भगवान जैसा बनूँ। सम्यग्दर्शन प्राप्त करके मैं इस मनुष्य जीवन को सफल बनाऊँ ऐसी पवित्र भावना से जिनवाणी माँ का दर्शन करना चाहिये।

प्रश्न – दर्शन करते समय किन भावनाओं का त्याग करना चाहिए ?

उत्तर – धन, वैभव की प्राप्ति की भावना, पुत्रादि की प्राप्ति की भावना तथा राग – द्वेषात्मक समस्त अशुभ भावनाओं का त्याग करना चाहिए।

प्रश्न – यदि हम लोग जिनवाणी और सच्चे देव, गुरु, धर्म के सामने धन – वैभव पुत्रादिक की भावना या कामना नहीं करेंगे तो यह सांसारिक वस्तुएँ हमें कैसे प्राप्त होगी ?

उत्तर – सच्चे देव, गुरु, धर्म किसी को कुछ लेते – देते नहीं हैं, हम शुभ भावों से दान, पूजा, दया, परोपकार आदि पुण्य के कार्य करते हैं उससे हमें शुभास्रव पुण्यबंध होता है, इस पुण्य के उदय से ही हमें सांसारिक सुखों की प्राप्ति होती है। धन – वैभव आदि अनुकूल संयोग सब पुण्य के उदय से प्राप्त होते हैं इसलिये हमें सच्चे हृदय से भक्ति भाव पूर्वक पूजा आदि शुभ कार्य करना चाहिये।

प्रश्न – दर्शन करने के पश्चात् क्या करना चाहिये ?

उत्तर – दर्शन करने के पश्चात् कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े होकर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिये और फिर पञ्चांग या अष्टांग नमस्कार करना चाहिये।

प्रश्न – पञ्चांग या अष्टांग नमस्कार का क्या मतलब है ?

उत्तर – शरीर के पाँच या आठों अंगों से नमस्कार करना पञ्चांग या अष्टांग नमस्कार करना कहलाता है।

प्रश्न – शरीर में कितने अंग होते हैं ?

उत्तर – शरीर में आठ अंग होते हैं। जैसा कि श्री नेमिचंद्राचार्य जी ने गोम्मटसार जी ग्रंथ की २८ वीं कारिका में कहा है –

णलया बाहू य तहा, णियंब पुट्ठी उरो य सीसो य।
अट्ठेव दु अंगाइं, देहे सेसा उवंगाइं ॥

अर्थ – दो पैर, दो बाहु (भुजायें), नितम्ब, पीठ, हृदय और मस्तक इस प्रकार शरीर में आठ अंग होते हैं तथा शेष उपांग कहलाते हैं।

प्रश्न – पञ्चांग, अष्टांग या साष्टांग नमस्कार कैसे किया जाता है ?

उत्तर – हाथ जोड़कर दोनों घुटने जमीन पर टेककर, दोनों हाथ जमीन पर नीचे रखकर मस्तक हाथों पर रखना और भाव पूर्वक प्रणाम करना पञ्चांग नमस्कार करना कहलाता है।

छाती, घुटनों और सीने के बल लेटकर दोनों हाथ सीधे करके जो नमस्कार किया जाता है यह अष्टांग या साष्टांग नमस्कार कहलाता है।

प्रश्न – नमस्कार करने के पश्चात् क्या करना चाहिये ?

उत्तर – नमस्कार करने के पश्चात् हाथ जोड़कर वेदी जी की तीन प्रदक्षिणा देना चाहिये।

प्रश्न – वेदी जी की तीन प्रदक्षिणायें क्यों की जाती हैं ?

उत्तर – मंत्र स्मरण करते हुए वेदी जी की तीन प्रदक्षिणायें की जाती हैं, उस समय भाव यह रखना चाहिये कि हे जिनवाणी माँ ! मुझे सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की प्राप्ति हो। इस प्रकार रत्नत्रय की प्राप्ति के अभिप्राय से वेदी जी की तीन प्रदक्षिणायें की जाती हैं।

प्रश्न – प्रदक्षिणा देने के बाद क्या करना चाहिये ?

उत्तर – प्रदक्षिणा देने के बाद शांति पूर्वक बैठकर मंत्रजाप करना चाहिये।

प्रश्न – मंत्रजप करने की क्या विधि है ?

उत्तर – जाप हाथ में लेकर सबसे पहले सुमेरु के दाने को दोनों आँखों से और कंठ में लगाना पश्चात् मध्यमा (बीच की अंगुली) से जाप करना चाहिये।

प्रश्न – सुमेरु के दाने को आँख में और कंठ में लगाने का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – सुमेरु नामक मुनि के जिस प्रकार परिणाम परिवर्तित हुए और उन्होंने सद्गति को प्राप्त किया उसी प्रकार हमारी भावना रहती है कि उनके समान हमारे ज्ञान नेत्र खुल जावें और हम भी मुक्ति के पात्र बनें। कंठ में लगाने से आशय है कि जिनवाणी हमारे कंठ में विराजमान होवे।

प्रश्न – जाप करते समय क्या सावधानी रखना चाहिये ?

उत्तर – मन को एकाग्र करके जाप करना चाहिये, यदि जाप करते समय मन कहीं और भटक जाये तो बुद्धि पूर्वक मन को छोटे बच्चे की तरह समझाकर पुनः मंत्रजप में लगाना चाहिये। जाप करते समय इधर – उधर देखना या जैसे – तैसे जाप पूरी करना, या नियम है इस कारण जाप करना है ऐसी भावना से जाप नहीं करना चाहिये बल्कि मंत्रजप से मेरी आत्मा का जागरण होगा, परिणाम निर्मल होगें, सम्यक्त्व की प्राप्ति का मार्ग बनेगा ऐसी पवित्र भावना से मंत्र जप करना चाहिये।

प्रश्न – मंत्रजप के पश्चात् क्या करना चाहिये ?

उत्तर – मंत्रजप के पश्चात् नियमित पूजा – पाठ करना चाहिये। तीन बत्तीसी का पाठ करना, मंदिर विधि करना, अध्यात्म आराधना में से षट्कर्म रूप भाव पूजा पढ़ना, देव गुरु शास्त्र की भाव पूजा पढ़ना आदि शुभ भावपूर्वक पूजा – पाठ करना चाहिये।

प्रश्न – पूजा पाठ के पश्चात् स्वाध्याय किस प्रकार करना चाहिये ?

उत्तर – पूजा – पाठ के पश्चात् स्वाध्याय करने के लिये निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिये। किसी ग्रंथ का विस्तार करके आद्योपांत स्वाध्याय करना चाहिए। हर दिन अलग – अलग ग्रंथों का स्वाध्याय करने से कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकेगा। स्वाध्याय करने से पूर्व ग्रंथ का मंगलाचरण वांचन करना चाहिये। जो कोई सिद्धांत की विशेष बात रुचिकर लगे उसे डायरी में नोट करना चाहिये। स्वाध्यायी जीव अपने आत्म कल्याण के उद्देश्य से स्वाध्याय करता है। स्वाध्याय को परम तप कहा गया है। मुझे सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति हो, मेरा आत्म कल्याण हो इस पवित्र अभिप्राय से स्वाध्याय करना चाहिये।

प्रश्न – स्वाध्याय क्यों करना चाहिये ?

उत्तर – पुण्य – पाप के स्वरूप को, धर्म – कर्म के मर्म को और मोक्षमार्ग के सच्चे स्वरूप को समझने

के लिये तथा अपना आत्म कल्याण करने के अभिप्राय को पूर्ण करने के लिये स्वाध्याय करना अत्यंत आवश्यक है।

प्रश्न – स्वाध्याय करने का क्या फल है ?

उत्तर – स्वाध्याय करने से वस्तु स्वरुप की सच्ची समझ जाग्रत होती है। रत्नत्रय की प्राप्ति एवं परम्परा से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है।

प्रश्न – श्रावक का इसके अतिरिक्त और क्या कर्तव्य होना चाहिये ?

उत्तर – श्रावक को इसके अतिरिक्त अपने आत्म स्वरूप का चिंतन, धर्म कर्म के मर्म का विचार,संसार, शरीर, भोगों से वैराग्य आदि का चिंतन – मनन करना चाहिये। ज्ञान ध्यान का रुचिपूर्वक अभ्यास करना चाहिये। अपने जीवन को नियम, संयम तपमय बनाने का पुरुषार्थ करना चाहिये। गृहस्थ जीवन में दया, दान, परोपकार आदि शुभ कार्य करते हुए निरंतर भेदज्ञान तत्वनिर्णय का अभ्यास करना चाहिये और आत्म कल्याण की भावना से धर्म मार्ग में आगे बढ़ना चाहिये। यही श्रावक का परम कर्तव्य है।

प्रश्न – चैत्यालय जी में किस – किसको प्रणाम करना चाहिये ?

उत्तर – चैत्यालय जी में जिनवाणी के अतिरिक्त यदि कोई वीतरागी संत हों तो उन्हें प्रणाम करना चाहिये, इसके अलावा और किसी को प्रणाम नमस्कार आदि नहीं करना चाहिए। जिनवाणी से बढ़कर और कोई भी नहीं होता। चैत्यालय जी में जिनवाणी के अलावा और किसी को प्रणाम नमस्कार करने से जिनवाणी की अविनय होती है और ज्ञानावरण कर्म का बंध होता है। व्रती श्रावकों को वंदना करना चाहते हैं या अव्रती श्रावकों को जय तारण तरण, नमस्कार आदि करना चाहते हैं वह चैत्यालय जी से बाहर करना चाहिये।

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी से बाहर आने के पहले क्या करना चाहिये ?

उत्तर – श्री चैत्यालय जी से बाहर आने के पहले जिनवाणी को नमस्कार विनय वंदना करके दान स्वरूप कुछ राशि दान पात्र में डालना चाहिये। यह राशि चार दान के खाते में जाती है।

प्रश्न – श्री चैत्यालय जी से बाहर आते समय क्या कहना चाहिये ?

उत्तर – श्री चैत्यालय जी से बाहर आते समय अस्सही, अस्सही, अस्सही तीन बार बोलना चाहिये।

प्रश्न – अस्सही का क्या अर्थ होता है ?

उत्तर – अस्सही का अर्थ होता है कि जो मैंने धर्म की आराधना की है, वह मेरे जीवन में निरंतर बनी रहे, प्रति समय धर्म मेरे साथ रहे ऐसी भावना भाते हुए कर्तव्य कर्म की राह पर निकलना होता है। इसका दूसरा अभिप्राय है कि अब मैं बाहर जा रहा हूँ, आप अपना स्थान ग्रहण कर सकते हैं।

मंदिर विधि से षट् आवश्यक की पूर्ति का विधान –

प्रश्न – मंदिर विधि करने से श्रावक के षट् आवश्यक कर्म की पूर्ति किस प्रकार होती है ?

उत्तर – मंदिर विधि करने से श्रावक के षट् आवश्यक कर्म की पूर्ति सहज होती है, वह इस प्रकार है –

मंदिर विधि में देवपूजा –

मंदिर विधि में हम सच्चे देव के गुणों की आराधना करते हैं। तत्त्व मंगल में सबसे पहले देव की वंदना करके भाव पूजा का प्रारम्भ करते हैं। पश्चात् वर्तमान चौबीसी, विदेह क्षेत्र के बीस

तीर्थंकर, विनय बैठक, नाम लेत पातक कटें, प्रमाण गाथायें आदि अनेकों स्थलों पर सच्चे देव की आराधना और उनके गुणानुवाद करते हैं।

मंदिर विधि में गुरु उपासना –

मंदिर विधि में तत्त्व मंगल की दूसरी गाथा में हम गुरु की महिमा का गान करते हुए विनय बैठक, नाम लेत पातक कटें, अबलवली, प्रमाण गाथायें आदि अनेकों स्थलों पर गुरु की उपासना करते हैं। उनके रत्नत्रय आदि गुणों की आराधना करते हैं।

मंदिर विधि में शास्त्र स्वाध्याय –

मंदिर विधि में हम अत्यंत महत्वपूर्ण भाग शास्त्र सूत्र सिद्धांत की व्याख्या का वांचन करते हैं। जिसमें जिनेन्द्र भगवान की वाणी का सार, सूत्र की विवेचना और सिद्धांत की आराधना करते हैं। इस प्रकार मंदिर विधि से हम शास्त्र स्वाध्याय भी सम्पन्न करते हैं।

मंदिर विधि में संयम –

मंदिर विधि में संयम और संयमी साधुओं की महिमा का कथन है। तीर्थंकर भगवंतों के दीक्षा कल्याणकों की महिमा और संयम धर्म की प्रभावना का विवेचन है। श्रावकजन जितने समय तक मंदिर विधि में शुभ भावों पूर्वक बैठते हैं उतने समय तक मन और पाँच इन्द्रियों पर अंकुश रहता है यह इन्द्रिय संयम है। साथ ही किसी प्रकार भी जीव हिंसा का आचरण नहीं होता। पाँच स्थावर और एक त्रस इस प्रकार षट्कायिक जीवों पर दया भाव रहता है। किसी भी जीव की हिंसा नहीं होती यह प्राणी संयम है। इस प्रकार मंदिरविधि से संयम धर्म का पालन होता है।

मंदिर विधि तप –

मंदिर विधि करने से मन की इच्छाओं का निरोध होता है। उतने समय तक किसी भी प्रकार की इन्द्रिय विषयों की प्रवृत्ति नहीं होती और रागादि परिणामों का भी शमन होता है। आत्म स्वरूप के लक्ष्य से तथा धर्म की महिमा प्रभावना के शुभ भाव सहित मन पर विजय होती है यह तप है। यह तप श्रावक की भूमिका के अनुरूप है।

मंदिर विधि में दान –

मंदिर विधि करने के पश्चात् जब प्रभावना का अवसर आता है तब श्रावकजन बढ़ चढ़कर दान पुण्य और प्रभावना करते हैं। प्रसाद वितरण तथा व्रत भण्डार अर्थात् दान स्वरूप प्रदान की गई राशि दान की प्रतीक है। इसके साथ – साथ विशेष अवसरों पर पात्र भावना, चैत्यालयों के लिये सामग्री भेंट, चार दान की महिमा आदि यह मंदिर विधि के निमित्त से होने वाली दान की प्रभावना है।

आरती – चँवर

प्रश्न – आरती किसकी और क्यों की जाती है ?

उत्तर – श्रावक को सच्चे देव, गुरु, धर्म, शास्त्र के प्रति भक्ति होती है। भक्ति पूर्वक मंदिर विधि करने से भावों में विशुद्धता प्रगट होती है, हृदय आत्म विभोर हो जाता है, तब अत्यंत श्रद्धा के भावों सहित ज्ञान की प्रकाशक जिनवाणी की आरती करते हैं।

प्रश्न – आरती कैसे बनाई जाती है ?

उत्तर – रुई को भांजकर लम्बी बत्ती बनाकर आरती में नहीं रखना चाहिये। बल्कि गोल फूलबत्ती बनाकर आरती तैयार करना चाहिये। आरती में घी भी उतना ही डालना चाहिये जितने समय में आरती हो सके। आरती अनावश्यक जलती रहे इतना घी नहीं डालना चाहिये।

प्रश्न – आटे की आरती क्यों बनाई जाती है ?

उत्तर – १. आटा शुद्ध माना जाता है। उसकी आरती बनाकर ज्योति जलाई जाती है। उसका अभिप्राय यह है कि जहाँ शुद्धता होती है वहीं ज्ञान की ज्योति प्रज्ञवलित होती है।

२. आटे में पुनः – पुनः खेतों में उत्पन्न होने की शक्ति समाप्त हो जाती है, उसकी आरती बनाई जाती है। इसका अभिप्राय यह है कि जो जीव संसार में जन्म –मरण नहीं करना चाहता उसी जीव के अंतरंग में ज्ञान की ज्योति प्रगट होती है।

प्रश्न – एक चेल और पाँच चेल की आरती क्यों बनाई जाती है ?

उत्तर – श्री गुरु तारण स्वामी जी महाराज के ग्रंथों में दीप्ति शब्द का बहुलता से प्रयोग मिलता है। दिप्ति का अर्थ होता है ज्ञान से प्रकाशित ज्योति। सम्यग्ज्ञान के पाँच भेद हैं – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान और केवलज्ञान, इन्हें श्री गुरु महाराज ने पंच दीप्ति कहा है। सम्यग्ज्ञान के इन पाँच भेदों की प्रतीक रूप पाँच चेल की आरती और मात्र केवलज्ञान की प्रतीक रूप एक चेल की आरती बनाई जाती है। यह ज्ञान से प्रकाशित दिव्य ज्योति की प्रतीक होती है।

प्रश्न – वाणी जी के वांचन के समय आरती लेकर खड़े क्यों होते हैं ?

उत्तर – श्री वाणी जी का प्रारम्भ यहाँ से होता है – श्री धर्मोपदेश अतुल अनिर्वचनीय और महादीर्घ कहें केवली पुरुष कहने प्रमाण सामर्थ्य.....। इसका आशय है कि यह धर्मोपदेश केवलज्ञानी भगवान की वाणी है, इसलिये इसको वाणी जी कहते हैं। श्री केवलज्ञानी भगवान द्वारा कही गई है इस पवित्र अभिप्राय से केवलज्ञान के प्रतीक रूप में एक चेल की आरती लेकर खड़े होते हैं।

प्रश्न – आरती और आरतो में क्या अंतर है ?

उत्तर – १. आरती भक्ति पूर्वक की जाती है। आरतो विशेष बहुमान पूर्वक किये जाते हैं।

२. आरती एक चेल अथवा पाँच चेल की चाँदी, स्टील, पीतल या आटे की भी बनाई जाती है, किंतु आरतो केवल आटे के पंच चेल वाले ही कहलाते हैं।

३. आरती पढ़ने की लय सहज सरल होती है। आरतो विशेष लय में पढ़े जाते हैं।

प्रश्न – आरती लेकर नृत्य क्यों किया जाता है ?

उत्तर – सच्चे देव और गुरु के गुणानुराग, धर्म के श्रद्धान और जिनवाणी के प्रति बहुमान का भाव अंतर में उमड़ता है। यह भक्ति भाव जिन वचनों की महिमा करने के लिये नृत्य के रूप में व्यक्त होता है। यह भक्ति श्रद्धा और समर्पण का प्रतीक है इसलिये जिनवाणी के सामने आरती लेकर नृत्य करते हैं।

प्रश्न – आरती करने में क्या सावधानियाँ रखना चाहिये ?

उत्तर – आरती करने में निम्नलिखित सावधानियाँ अनिवार्य रूप से रखना चाहिये–

१. आरती विनय और भक्ति पूर्वक करना चाहिये।

२. आरती करते समय जिनवाणी और वेदी की तरफ पीठ नहीं होना चाहिये।
३. आरती करते समय आरती की ज्योति बुझना नहीं चाहिये।
४. आरती हाथ से गिरना नहीं चाहिये।
५. हाथ के नीचे से निकालकर की जाने वाली चक्र आरती में भी आरती हाथ से गिरना नहीं चाहिये।
६. आरती नृत्य, मर्यादा पूर्वक होना चाहिये। इसे आधुनिक डाँस का विषय न बनायें।
७. आरती पूर्ण होने पर हाथ जोड़कर नत मस्तक होकर बोलना चाहिये – ''देव की आरती, गुरु की आरती, शास्त्र की आरती, जयन् जय बोलिये जय नमोऽस्तु, बोलो श्री गुरु महाराज की जय.....। '' इसके बाद आरती टेबिल पर रखना चाहिये। इसके पहले आरती टेबिल या चौकी पर नहीं रखना चाहिये।

प्रश्न – यदि अकस्मात् अथवा किसी का धक्का या हाथ लगने से आरती हाथ से गिर जाये तो क्या करना चाहिये ?

उत्तर – आवश्यक यह है कि आरती करने में अत्यंत सावधानी बरतना चाहिये कि किसी भी परिस्थिति में आरती हाथ से न गिरे। अन्य सभी साधर्मीजनों को भी ध्यान रखना चाहिये कि कोई सज्जन आरती कर रहे हों तो उनके पास से न निकलें। उन्हें आरती करने में पूरा सहयोग करें। क्योंकि आरती का गिरना अच्छा नहीं माना जाता। यदि किसी कारण से आरती हाथ से गिर जाती है तो तत्काल प्रायश्चित स्वरूप इच्छानुसार दान राशि दे देना चाहिये और भविष्य में ऐसा न हो इसका ध्यान रखना चाहिये।

प्रश्न – समाज में कुछ स्थानों पर कुछ महानुभाव आरती नहीं करते हैं क्या यह उचित है ?

उत्तर – समाज के सभी महानुभावों को आरती करना चाहिये। हिंसा होती है ऐसा कहकर किसी क्रिया के प्रति विरोध पैदा नहीं करना चाहिये। घर – परिवार, खेती – किसानी, व्यापार – धंधे आदि में त्रस जीवों की हिंसा होती है। चैत्यालय में आरती सच्चे देव गुरू शास्त्र की महिमा और बहुमान के पवित्र अभिप्राय से की जाती है। अपनी भूमिका का विचार करके भक्ति पूर्वक आरती करना चाहिये। घर – व्यापार आदि की हिंसा का त्याग होने पर परिग्रह त्यागी, अनुमति त्यागी होने पर आरती आदि की क्रिया भी सहज छूट जाती है। अतः आरती चंदन प्रसाद प्रभावना को सहज स्वीकार कर अपनी सामाजिक निष्ठा का परिचय देना चाहिये।

प्रश्न – चँवर लेकर भी नृत्य करते हैं, इसमें क्या अभिप्राय होना चाहिये ?

उत्तर – वस्तुतः चँवर भगवान के अष्ट मंगल में से एक मंगल है। कटि सूत्र कुण्डलादि अलंकारों से युक्त अत्यंत विनम्र देवों द्वारा आजू – बाजू से भगवान के ऊपर चौंसठ चँवर ढुराये जाते हैं। हम जो चँवर करते हैं इसमें सहज भक्ति पूर्ण नृत्य के साथ जिनवाणी पर चँवर ढुराने का अभिप्राय होना चाहिये।

प्रश्न – चँवर करते समय क्या सावधानी रखना चाहिये ?

उत्तर – १. चँवर करते समय जिनवाणी के प्रति अतिशय भक्ति का भाव होना चाहिये।
२. चँवर करते समय जिनवाणी और वेदी जी की तरफ पीठ नहीं होना चाहिये।
३. चँवर घुटनों से नीचे नहीं जाना चाहिये और हाथ से गिरना नहीं चाहिये।

४. चँवर नृत्य वेदी जी के समक्ष करते हैं इसलिये मर्यादा पूर्वक करना चाहिये। इस भाव पूर्ण क्रिया को आधुनिक डांस का विषय न बनायें।

५. अपने चैत्यालय जी में चाँदी के मूठा वाले चँवर बनवाकर रखना चाहिये।

तिलक – चंदन

प्रश्न – चंदन घिसने अर्थात् गालने या गलाने की क्या प्रक्रिया है ?

उत्तर – धुले मंजे साफ किये हुए बर्तन में छना पानी रखें। छने जल से चंदन मूठा और जिस पत्थर पर चंदन घिसना है उसे अच्छी तरह धो लेवें। पश्चात् शुभ भाव पूर्वक चंदन घिसें। तारण समाज में चंदन घिसने को चंदन गालना या चंदन गलाना भी कहते हैं। जैसा कि श्री छद्मस्थवाणी जी ग्रंथ में आया है – चंदन गलावहु रे.. (छद्मस्थवाणी जी अध्याय – ०९)

प्रश्न – चंदन में और क्या मिलाना चाहिये ?

उत्तर – चंदन घिसते या गलाते समय दो – तीन दाने केशर के और एक – दो दाने कपूर के मिलाकर घिसना चाहिए। इससे चंदन की शीतलता में वृद्धि होती है।

प्रश्न – चंदन में पीला रंग आदि मिला सकते हैं क्या ?

उत्तर – नहीं, चंदन श्रद्धा का प्रतीक, भाव शुद्धि में निमित्त है इसलिये चंदन में पीला रंग, हल्दी, बाजार में मिलने वाली पैक डिब्बी का चंदन, पिपरमेंट आदि कुछ भी नहीं मिलाना चाहिये।

प्रश्न – केशर कपूर न हो तब तो रंग मिला सकते हैं ?

उत्तर – रंग तो किसी भी परिस्थिति में नहीं मिलाना चाहिये। केशर और कपूर न हो तो मात्र चंदन घिसकर उसमें कुछ भी मिलाये बिना शुद्ध चंदन माथे पर लगाना चाहिये।

प्रश्न – चंदन क्यों लगाया जाता है ?

उत्तर – चंदन शीतलता प्रदान करता है। माथे का चंदन सौभाग्य सूचक होता है। चंदन लगाने से '' हम किसके उपासक हैं '' इसका बोध होता है इसलिये चंदन लगाया जाता है।

प्रश्न – '' हम किसके उपासक हैं '' चंदन से इसका बोध किस प्रकार होता है ?

उत्तर – जिस प्रकार अन्य अनेक प्रकार से उपासना करने वाले लोग अपने – अपने इष्ट की श्रद्धानुसार तिलक लगाया जाता है।

प्रश्न – विन्दी और खौर के चंदन का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – ॐ कारं विन्दु संयुक्तं और विंद स्थानेन तिस्टंते के रूप में विन्दी का तिलक विन्द स्थान अर्थात् निर्विकल्प स्वानुभूति का प्रतीक है। जबकि खौर का चंदन अनन्त चतुष्टय, रत्नत्रय और सिद्ध स्वरूप का प्रतीक है।

प्रश्न – विन्दी और खौर का चंदन किस प्रकार लगाया जाता है ?

उत्तर – विन्दी का चंदन – दाहिने हाथ के अंगूठे से तीसरी अंगुली अनामिका से (दोनों भौंहों के मध्य आज्ञा चक्र) भ्रू मध्य पर लगाया जाता है।

खौर का चंदन – दाहिने हाथ की तीन अंगुलियों में कटोरी से चंदन लेकर माथे पर अंगुलियों को खींचते हुए अर्धचन्द्राकार आकृति बनाई जाती है। पश्चात् तर्जनी और मध्यमा से सीधी लाइन खींची जाती है और अंत में भ्रू मध्य पर विन्दी रखी जाती है।

प्रश्न – खौर का चंदन अनन्त चतुष्टय, रत्नत्रय और सिद्ध स्वरूप का प्रतीक किस प्रकार हुआ ?

उत्तर – तीन अंगुलियों से अर्धचन्द्राकार आकृति बनाने पर चार रेखायें बनती हैं जो अनन्त चतुष्टय की सूचक हैं। दो अंगुलियों से खड़ी रेखा खींचने पर तीन रेखायें बनती हैं जो रत्नत्रय की सूचक हैं और विन्दी सिद्ध स्वरूप का बोध कराने वाली है।

प्रसाद – प्रभावना

प्रश्न – प्रसाद वितरण क्यों किया जाता है ?

उत्तर – प्रसाद, दान की प्रभावना स्वरूप बांटा जाता है। प्रसाद बांटने से भावों में उसी प्रकार निर्मलता आती है जैसे किसी साधर्मी को आहार आदि कराने में निर्मलता आती है।

प्रश्न – प्रसाद किस प्रकार का होना चाहिये ?

उत्तर – प्रसाद शुद्ध होना चाहिये तभी प्रभावना की श्रेणी में आयेगा। शुद्ध प्रसाद इस प्रकार होना चाहिये –

१. समान्यतया सूखे भेला का या सूखे नारियल का प्रसाद।

२. घर में तैयार किये हुए अथवा किसी विश्वास पात्र जैन परिवार से छने हुए शुद्ध दूध से तैयार करवाये हुए मावा का बना हुआ प्रसाद।

३. सूखे नारियल का कीस तैयार करके शुद्ध चासनी में डालकर जमाया हुआ प्रसाद।

४. साफ किये हुए काजू, किसमिस, बादाम, चिरोंजी (चारोली)और खारक। इन पंच मेवा को पैकेट में पैक करके बांटा जाने वाला प्रसाद।

प्रश्न – प्रसाद प्रभावना लाकर चैत्यालय में कहाँ रखना चाहिये ?

उत्तर – प्रसाद वेदी जी पर या वेदी जी के सामने अथवा जमीन पर नीचे नहीं रखना चाहिये। किसी उचित स्थान पर प्रसाद रखने की व्यवस्था बनाना चाहिये।

प्रश्न – कौन – कौन सी वस्तुएँ प्रसाद में नहीं बांटना चाहिये ?

उत्तर – निम्नलिखित वस्तुएँ प्रसाद के रूप में नहीं बांटना चाहिये क्योंकि यह वस्तुएँ प्रसाद प्रभावना के योग्य नहीं है – बतासा, मिश्री, शकर की चिरोंजी, बाजार होटल की मिठाई, पेड़ा आदि प्रसाद में नहीं बांटना चाहिये।

प्रश्न – पानी वाले नारियल प्रसाद में वितरण करना चाहिये क्या ?

उत्तर – नहीं, पानी वाले नारियल सचित्त होते हैं इसलिये इनको प्रसाद प्रभावना में वितरण करना ही नहीं चाहिये। क्योंकि पानी वाले नारियल के पानी की मिठास से चींटी आदि जीव एकत्रित होते हैं जिससे हिंसा का दोष लगता है।

प्रश्न – कुछ लोग या बच्चे चैत्यालय जी में प्रसाद खा लेते हैं क्या यह उचित है ?

उत्तर – नहीं, चैत्यालय धर्म आराधना का पवित्र स्थल होता है। प्रसाद आदि खाने से धर्मायतन अपवित्र हो जाता है। इसलिये चैत्यालय जी में प्रसाद आदि कोई भी वस्तु नहीं खाना चाहिये। बच्चों को चैत्यालय में प्रसाद नहीं खाने की प्रेरणा देकर सुसंस्कार सिखाना चाहिये जिससे उनका भविष्य उज्ज्वल बने तथा बच्चों को खाने के लिये बिस्किट आदि मंदिर में नहीं लाना चाहिये।

प्रश्न – कुछ महानुभाव कहते हैं कि प्रसाद निर्माल्य हैं इसलिये नहीं खाना चाहिये ?

उत्तर – जो वस्तु देव पूजा आदि के अभिप्राय से चढ़ाई जाती है, भेंट की जाती है उसे निर्माल्य कहते हैं। तारण समाज में प्रसाद देव आराधना, गुरू उपासना या अन्य किसी भी भाव से किसी को चढ़ाया नहीं जाता, भेंट नहीं किया जाता। प्रसाद केवल प्रभावना स्वरूप वितरण किया जाता है इसलिये प्रसाद निर्माल्य नहीं है।

बोध – विवेक

प्रश्न – वेदी और जिनवाणी की मर्यादा किस प्रकार बनाना चाहिये ?

उत्तर – वेदी और जिनवाणी हमारी समग्र आस्था की केन्द्र है˙ इसकी मर्यादा इस प्रकार बनायें –

०१. वेदी जी पर केवल आचार्य श्रीमद् जिन तारण तरण मंडलाचार्य जी महाराज द्वारा विरचित ग्रंथ ही विराजमान करें।

०२. अन्य –अन्य आचार्यो द्वारा रचित चारों अनुयोंगों के ग्रंथ अलमारियों में विनय पूर्वक व्यवस्थित करके रखें।

०३. वेदी जी पर यहाँ – वहाँ जाप या अन्य कोई भी सामग्री न रखें। जाप या अन्य सामग्री अपने निर्धारित स्थान पर रखना ही योग्य है।

०४. प्रतिदिन वेदी जी की स्वच्छता बनाकर रखें। वेदी पर, ग्रंथों पर, अछारों पर, जमी हुई धूल आदि की प्रतिदिन सफाई करें।

०५. जिनवाणी को चार अनुयोगों के अनुसार अलग – अलग विभाग बनाकर विनय पूर्वक रखें।

०६. सभी ग्रंथों को वेष्ठन में लपेटकर उसके ऊपर ग्रंथ का नाम लिखकर रखें।

०७. समय – समय पर ग्रंथों के अछार धुलवा कर बदलते रहें। चैत्यालय में जो टोपियाँ रहती हैं वे भी साफ स्वच्छ रहना चाहिये।

०८. मूल वेदी हमारी समग्र श्रद्धा की प्रतीक है, इसलिये मूल वेदी से ग्रंथ बार–बार न उठायें।

०९. प्रवचन आदि के लिये अध्यात्मवाणी जी ग्रंथ तथा अन्य ग्रंथ अलग से अलमारी में व्यवस्थित करके रखें।

१०. मातायें बहिनें मूल वेदी जी को स्पर्श न करें। मूल वेदी जी से कोई भी ग्रंथ न उठायें। अपने स्वाध्याय पाठ आदि के लिये सभी ग्रंथों को अलमारियों में विनय पूर्वक विराजमान करके रखें।

प्रश्न – चैत्यालय जी आकर दर्शन जाप पाठ स्वाध्याय आदि करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर – चैत्यालय जी आकर शुभ भाव पूर्वक दर्शन जाप पाठ आदि करने से अनेकों लाभ होते हैं, जिनमें कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं –

१. असंख्यात कर्मो की निर्जरा होती है।

२. पाप कर्मों का स्थिति अनुभाग क्षीण होता है।

३. बहुत पुण्य की प्राप्ति होती है।

४. मन के विकारी भाव नष्ट हो जाते हैं।
५. अनेक उपवासों का फल प्राप्त होता है।
६. दर्शनार्थी का जीवन मंगलमय सुखकारी होता है।
७. आत्मशांति की प्राप्ति होती है।
८. सम्यग्दर्शन की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है।
९. मोक्षमार्ग सहज ही बन जाता है।
१०. मनुष्य जीवन की सार्थकता होती है।

प्रश्न – चैत्यालय के ऊपर शिखर क्यों बनाते हैं ?

उत्तर – चैत्यालय के ऊपर शिखर बनाने के कुछ महत्वपूर्ण कारण हैं :–
१. शिखर बनाने से चैत्यालय की शोभा पूर्ण होती है।
२. शिखर होने से चैत्यालय गरिमामय प्रतीत होता है।
३. शिखर दिखाई देने से धर्म भावनायें जाग्रत होती है।
४. शिखर होने से वीतराग जिन धर्म कि महिमा और बहुमान आता है।
५. मनुष्य, देव, विद्याधर इत्यादिक को शिखर दिखाई देने से चैत्यालय के निश्चित स्थान का बोध होता है।
६. शिखर में ओंकारादि मंगल ध्वनि गुंजायमान होती है।
७. चैत्यालय का उत्तुंग शिखर देखने से मनुष्य का मान खण्डित होता है।

प्रश्न – ऐसा माना जाता है कि ध्वज अथवा ध्वजा के बिना चैत्यालय के शिखर की शोभा नहीं होती , इसलिये श्रावकजन चैत्यालय के शिखर पर स्वास्तिक सहित त्रिकोण या चतुष्कोण वाली केशरिया ध्वजा लगाते हैं उससे क्या लाभ है ?

उत्तर – त्रिकोण को ध्वजा पताका और चतुष्कोण को ध्वज कहते हैं। इस प्रकार के ध्वजा अथवा ध्वज शिखर पर लगाने से निम्नलिखित लाभ हैं :–
१. चैत्यालय की दूर से ही पहिचान होती है।
२. स्वास्तिक सहित केशरिया ध्वज शुभ का प्रतीक है।
३. ध्वजा हवा में फहर – फहर कर मानव मात्र को शांति का संदेश प्रदान करती है।
४. स्वास्तिक सहित केशरिया ध्वज को अष्ट मंगल के अंतर्गत ग्रहण किया जाता है।
५. इस प्रकार की ध्वजा वीतराग धर्म की प्रभावना की प्रतीक है।

पाठशाला

प्रश्न – स्थानीय स्तर पर समाज में बालक – बालिकाओं में धार्मिक संस्कार के लिये पाठशाला में पढ़ने से क्या लाभ है ?

उत्तर – अपने नगर में धर्म संस्कार के लिये स्थापित पाठशाला में पढ़ने से बालक – बालिकाओं को अनेकों अपूर्व लाभ होते हैं, जिनमें से कुछ संक्षेप में इस प्रकार हैं –
०१. पाठशाला में पढ़ने से वीतराग धर्म का सच्चा ज्ञान होता है।
०२. रूढ़िवाद और प्रपंच से हम दूर होते हैं।

०३. चैत्यालय आने की विधि, दर्शन करने की विधि आदि का ज्ञान होता है।
०४. पंच परमेष्ठी के गुणों एवं उनके जीवन और साधना के बारें मे जानकारी होती है।
०५. मंदिर विधि कैसे करना चाहिए, मंदिर विधि का क्या स्वरुप है इसका ज्ञान होता है।
०६. पाप, तत्त्व, पदार्थ, कषाय, लोक, चौदह ग्रंथ, जैन सिद्धांत आदि की जानकारी होती है।
०७. सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से जिन धर्म का ज्ञान होता है।
०८. सप्त व्यसन और अनेकों बुराइयों से जीवन बच जाता है।
०९. धर्म, धर्मायतन और धर्मात्माओं की रक्षा करने की प्रेरणा प्राप्त होती है।
१०. पूर्वाचार्यों द्वारा रचित आगम और अध्यात्म का बोध होता है।
११. धार्मिक संस्कार प्राप्त होते हैं।
१२. हम और हमारा परिवार कषायों से बचने लगता है।
१३. पुण्य की प्राप्ति का मार्ग बन जाता है।
१४. सत्य – असत्य का बोध होने लगता है।
१५. पाठशाला से प्राप्त धर्म संस्कार जीवन पर्यन्त स्थायी रहते हुए आत्मोन्नति और सद्गति में कारण बनते हैं।

इसलिये हर नगर में स्थायी रुप से पाठशाला की स्थापना करें एवं नई पीढ़ी में धर्म और ज्ञान के संस्कार देने का प्रयास करें जिससे अपना और अपने परिवार के हित का पथ प्रशस्त हो सके।

पूजा – दीपावली

प्रश्न – पूजा किसे कहते हैं ?

उत्तर – '' पूजा पूज्य समाचरेत् '' श्री पंडित पूजा जी ग्रंथ में आचार्य प्रवर श्रीमद् जिन तारण स्वामी जी महाराज ने कहा – पूज्य के समान आचरण होने को पूजा कहते हैं।

प्रश्न – दीपावली कब और क्यों मनाई जाती है ?

उत्तर – कार्तिक वदी अमावस्या की सुबह भगवान महावीर स्वामी को मोक्ष प्राप्त हुआ था अर्थात् उन्हें मोक्ष (निर्वाण) लक्ष्मी प्राप्त हुई थी और अमावस्या के दिन ही सायंकाल महामुनि गौतम गणधर को केवलज्ञान प्रगट हुआ था अर्थात् अनन्त चतुष्टय (केवलज्ञान लक्ष्मी) की प्राप्ति हुई थी इस उपलक्ष्य में संपूर्ण भारत वर्ष में दीपावली मनाई जाती है।

प्रश्न – दीपावली पर्व पर किस लक्ष्मी की पूजा करना चाहिये ?

उत्तर – दीपावली पर्व के अवसर पर मोक्षलक्ष्मी और केवलज्ञान लक्ष्मी (शास्त्र) की पूजा करना चाहिये।

प्रश्न – दीपावली पर्व पर भगवान महावीर स्वामी के निर्वाण के समय प्रातः काल किस प्रकार पूजा करना चाहिये?

उत्तर – अमावस्या के दिन प्रातः ५.०० बजे से ७.०० बजे तक श्री चैत्यालय जी में श्री छद्मस्थवाणी जी ग्रंथराज का अस्थाप करके अद्योपांत वांचन करें। पश्चात् लघु या समयानुसार बृहद मंदिरविधि करें। आशीर्वाद के बाद आरती के पहले महावीराष्टक एवं निर्वाण कांड का सामूहिक रूप से वांचन करें। तत्पश्चात् आरती, आनन्द उत्सव संपन्न करें।

प्रश्न – दीपावली पर्व पर रात्रिकालीन पूजा किस प्रकार करना चाहिये ?

उत्तर – किसी सुविधाजनक साइज में प्लाई अथवा धातु पर सुंदर डिजाइन में णमोकार मंत्र लिखवा लें या किरण युक्त ॐ बनवा लेवें, ॐ भी पंच परमेष्ठी का प्रतीक होता है। इसे पूजा वाले स्थान पर ऊँचाई पर रखें।

आगे चौकी पर श्री तारण तरण अध्यात्मवाणी जी ग्रंथ और जिनवाणी विराजमान करें। उसके आगे चौक बनाकर या रांगोली डालकर उसके ऊपर दीपक रखें।

मंगलं भगवान वीरो..... श्लोक पढ़ते हुए कलश स्थापित करें। सर्व मंगल मांगल्यं..... श्लोक पढ़ते हुए कलश पर चंदन रोली से स्वास्तिक बनायें।

णमोकार मंत्र पढ़ते हुए जितने दीपक आपने रखे हैं उन सबको प्रज्ज्वलित कर लेवें। पश्चात् परिवार के सभी सदस्य मिलकर भक्ति पूर्वक तत्त्व मंगल, ओंकार मंगल, अध्यात्म आराधना में से गुरु स्तुति, पंचपरमेष्ठी मंगल का पाठ करके आरती करें।

नोट :– इस अवसर पर अथवा जीवन में कभी भी किसी भी रूप में कुदेवादि की मान्यता पूजा करना मिथ्यात्व है जो अनन्त संसार का कारण है।

भजन

दीपावली महोत्सव पर आत्म भावना

यह दीपावली महान, वीर निर्वाण, सुनो भवि प्राणी ॥
बन जाओ सम्यक् ज्ञानी ॥

जब वीर प्रभु निर्वाण गये, मुनि गौतम भाव विभोर भये ॥
अब कौन सुनायेगा हमको जिनवाणी, बन जाओ.....

गौतम ने प्रभु से राग किया, उसका फल सब जब भोग लिया ॥
तब संध्या समय हुए वे केवलज्ञानी, बन जाओ.....

अब अपनी ओर निहारो जी, सब मोह राग निरवारो जी ॥
यह राग आग है जग परिभ्रमण निशानी, बन जाओ.....

तन धन जन से नाता तोड़ो, उपयोग निजातम से जोड़ो ॥
बस यही साधना है तुमको सुखदानी, बन जाओ.....

तुम सहजानन्द सुखराशी हो, ब्रह्मानंद शिवपुर वासी हो ॥
यह समझा रही है गुरु तारण की वाणी, बन जाओ.....

॥ जय तारण तरण ॥

तारण झण्डा वन्दन

तारण तरण गुरु का प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा ।

जिन शासन का यही सहारा, ॐ पद चिन्ह विभूषित प्यारा ।
केशरिया रंगीन हमारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा ॥ १ ॥

इसे देख हो पुलकित मन में, रोम रोम रोमांचित तन में ।
विजय गीत संगीत वचन में, गावें तारण वीर हमारा ॥ २ ॥

झण्डा लहर लहर लहरावे, जग में यह घर घर फहरावे ।
वसुधा का दुःख दूर भगावे, जिन शासन का बजे नगारा ॥ ३ ॥

वीरों को हरषाने वाला, प्रेम सुधा बरसाने वाला ।
वीर धर्म सरसाने वाला, यह गौरव अभिमान हमारा ॥ ४ ॥

भू मंडल तारण गुण गावे, इस झण्डे के नीचे आवे ।
यह रग रग में जोश बढ़ावे, बढ़ो बढ़ो मैदान हमारा ॥ ५ ॥

इस झण्डे को जो फहराता, वह मन वांछित पदवी पाता ।
भू मंडल उसका गुण गाता, फहरा कर देखो इक बारा ॥ ६ ॥

तीर्थंकर की यही पताका, समवशरण में यह लहराता ।
इसका विजय गान वह गाता, सुरपति भी कर नृत्य अपारा ॥ ७ ॥

इसकी एकाएक लहर में, टपक रहा रस वीर कहर में ।
दृढ़ रखना तुम अपने कर में, तारण वीर वीर मतवारा ॥ ८ ॥

वीर रणांगन में अब आओ, इस झण्डे को लेकर जाओ ।
सौ सौ बार विजय कर लाओ, लो यह शुभ आशीष हमारा ॥ ९ ॥

पाँच लाख त्रेपन हजार का, दल हो यह तो एक बार का ।
फिर तो भू मंडल प्रचार का, बीड़ा तुम्हीं उठाना प्यारा ॥ १० ॥

वीर वीर सैनिक बन जाओ, आशावादी बनकर आओ ।
अब कायरता दूर भगाओ, तब विजयी भवि वृन्द तुम्हारा ॥ ११ ॥

आध्यात्मिक जयघोष

०१. अध्यात्मवादी संतों की – जय । वीतराग धर्म की – जय ।।
०२. शुद्धात्म देव की – जय । जिनवाणी मातेश्वरी की – जय ।।
०३. अहिंसा परमो धर्म की – जय । विश्व धर्म की – जय ।।
०४. भगवान महावीर स्वामी के समवशरण की – जय ।।
०५. श्री गुरु तारण तरण मंडलाचार्य महाराज की – जय ।।
०६. आनन्द कन्द सच्चिदानन्द भगवान आत्मा की – जय ।।
०७. तारण स्वामी का शुभ संदेश – तू स्वयं भगवान है ।।
०८. सत्य अहिंसा को अपनाओ – अपना जीवन सुखी बनाओ ।।
०९. विश्व शांति का मूलाधार – एक मात्र अध्यात्म है ।
१०. हमें बनाना लक्ष्य महान – करना है आतम कल्याण ।।
११. करुणा क्षमा अहिंसा दान – मानवता की यह पहिचान ।।
१२. मानव जीवन का उद्देश्य – प्राणी सेवा साधु वेष ।।
१३. मुट्ठी बांधे आया जग में – हाथ पसारे जायेगा ।।
धर्म कर्म जो यहाँ करेगा – वैसा ही फल पायेगा ।।
१४. पाप कषाय महा दुःखदाई – इनको छोड़ो रे सब भाई ।।
१५. दया करो और दान दो – संयम तप पर ध्यान दो ।।
१६. जीव अकेला आया है – और अकेला जायेगा ।।
जैसी करनी यहाँ करेगा – वैसा ही फल पायेगा ।।
१७. जग में है यह सच्चा ज्ञान – जय हो चौदह ग्रन्थ महान ।।
१८. जो बोले सो अभय – शुद्धात्म देव की जय ।।
१९. धर्म जगत में – होता एक । संतों का है – यह संदेश ।।
२०. नहीं धरम में – झगड़ा झांसा । घट घट में है – ब्रह्म निवासा ।।
२१. बैर भाव के – बंधन तोड़ो । प्रेम प्रीति से – नाता जोड़ो ।।
२२. राग द्वेष को – दूर भगाओ । सबको अपने गले लगाओ ।।
२३. शुद्धातम का – ध्यान धरो । मानव जीवन – सफल करो ।।
२४. एक दो तीन चार – गुरु तारण की जय जयकार ।।
२५. पाँच छह सात आठ – सत्य धर्म का देखो ठाठ ।।
२६. नौ दस ग्यारह बारह – वीतरागता धर्म हमारा ।।
२७. तेरह चौदह पंद्रह सोला – तारण पंथी बच्चा बोला ।।

क्या बोला – जय तारण तरण ।।

।। तारणम् जय तारणम् – वन्दे श्री गुरु तारणम् ।।

जाप आवर्त (हाथ से जाप करने की विधि)

मंत्र जप के सतत् अभ्यास से जीवन मधुरता से भर जाता है। मंत्र जप और ध्यान आत्म साक्षात्कार करने का उपाय है। अस्त व्यस्त मन को एकाग्र करने के लिये मंत्र जप उत्कृष्ट साधन है।

हाथ से जाप करने की विधि क्या है ? इसके लिये यहाँ आवर्त दिये गये हैं। हाथ की अंगुलियों के पोर पवर लिखे हुए नंबरों के अनुसार क्रम से प्रत्येक अंक पर अंगुली रखें और पूरा मंत्र स्मरण करें, इस विधि में विभिन्न आवर्त होते हैं, जिनका उपयोग मंत्र जप में करें। इस विधि से चंचल मन स्थिर होता है।